मुक्त व्यावसायिक शिक्षा कार्यक्रम
पाठ्यक्रम कोड 812

# प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा पाठ्यक्रम

## 2

# प्राकृतिक चिकित्सा का आधारभूत ज्ञान


विद्याधनम् सर्वधनं प्रधानम्

राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
मानव संसाधन विकास मंत्रालय, भारत सरकार के अधीनस्थ एक स्वायत्त संस्थान
ए–24/25, सेक्टर–62, नोएडा–201309 (उ.प्र.)
वेबसाइट : www.nios.ac.in, टोल फ्री नं. 1800 1809393

# प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा पाठ्यक्रम (812)

## आभार

### सलाहकार समिति

अध्यक्ष
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तर प्रदेश

निदेशक (व्या. शिक्षा)
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा, उत्तर प्रदेश

### पाठ्यक्रम-पाठ्यचर्या समिति

श्रीमती सरिता शर्मा, पाठ्यचर्या समिति अध्यक्ष एवं निदेशक, योगसरिता फाउंडेशन, एशियाड विलेज, नई दिल्ली

प्रोफेसर सुरेशलाल बरनवाल
योग विभागाध्यक्ष, देवसंस्कृति विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखंड

डॉ. तबस्सुम, प्राकृतिक चिकित्सक, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा संस्थान, थाने, मुम्बई

प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज, पाठ्यक्रम समिति अध्यक्ष एवं डीन, योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार

डॉ. निधीश यादव, सहा. प्रोफेसर
योग विभाग पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार, उत्तराखंड

श्रीमती सीमा सिंह, योगाचार्या
इंटीग्रल योग केन्द्र, वैशाली
गाजियाबाद, उत्तर प्रदेश

डॉ. राजीव रस्तोगी
सहा. निदेशक, केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद, आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

डॉ. रामावतार शर्मा, योग विशेषज्ञ
राजकीय जनरल हॉस्पीटल
(आयुष विभाग, हरियाणा सरकार),
नूह (हरियाणा)

श्रीमती रेखा शर्मा
योग शिक्षक
भारतीय विद्याभवन,
नई दिल्ली

### लेखनदल

डॉ. रीता शर्मा, भारतीय सांस्कृतिक शिक्षिका, विविकानंद सांस्कृतिक केन्द्र भारतीय दूतावास, टोकिया, जापान

श्रीमती रेखा शर्मा
योग शिक्षक, योग संभाग
भारतीय विद्या भवन, दिल्ली

डॉ. ऊधम सिंह, सहा. प्रोफेसर
योग विभाग, गुरुकुल कागड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार (उत्तराखंड)

डॉ. तबस्सुम
प्राकृतिक चिकित्सक, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा संस्थान, थाने, मुम्बई

### सहायक दल

डॉ. पवन कुमार चौहान
व.कार्यकारी अधिकारी (योग),व्या. शि.वि.
रा.मु.वि.शि. संस्थान, नोएडा, उत्तर प्रदेश

डॉ. निधि गर्ग
सहायक प्रोफेसर
एस.ए. मेडीकल कॉलेज एण्ड हॉस्पीटल, मथुरा (उ.प्र.)

### संपादन

श्रीमती सरिता शर्मा, निदेशक,
योगसरिता फाउंडेशन,
एशियाड विलेज
नई दिल्ली

प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज, डीन
योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय
हरिद्वार, उत्तराखंड

डॉ. रामावतार शर्मा, योग विशेषज्ञ
राजकीय जनरल हॉस्पीटल
(आयुष विभाग, हरियाणा सरकार),
नूह (हरियाणा)

डॉ. राजीव रस्तोगी
सहा. निदेशक, केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद, आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

योगाचार्य कौशल कुमार
सचिव
राष्ट्र निर्माण योग संस्थान
हौज़खास, नई दिल्ली

श्री प्रवीण शर्मा
संपादक
भारतीय धरोहर
नई दिल्ली

### पाठ्यक्रम समन्वयन

डॉ. पवन कुमार चौहान
व. कार्यकारी अधिकारी (योग),व्या. शि.वि.
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान
नोएडा (उ.प्र.)

### ग्राफिक्स/पिक्चर तथा विशेष सहयोग

प्रोफेसर सरस्वती काला, विभागाध्यक्ष, योग विज्ञान विभाग, एस.जी.आर. आर. विश्वविद्यालय, देहरादून
आरोग्य योग नेचरोपैथी केन्द्र, देहरादून
कल्पतरू योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा संस्थान, अलवर (राजस्थान)
श्री सांई इन्स्टीयूट ऑफ योग एण्ड नेचुरोपैथी, हरिद्वार
आचार्य विक्रमादित्य, निदेशक, विवेकानन्द नेचुरोपैथी हॉस्पीटल, दिल्ली

### लेज़र कम्पोजर

टेसा मीडिया एण्ड कम्प्यूटर्स, सी–206, शाहीन बाग, जामिया नगर, नई दिल्ली–110025

# अध्यक्ष की कलम से...

*प्रिय शिक्षार्थियो,*

एनआईओएस के प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम में प्रवेश के लिए आपको बहुत–बहुत बधाई !

प्राचीनकाल से ही मानव प्रकृति के सानिध्य में रहा है, जहां उसने अपनी जीवन शैली में प्रकृति को समाहित कर स्वस्थ जीवन जीने की कला सीखी है। उसका खान–पान, पालन–पोषण, रोग–मुक्ति आदि सब कुछ प्रकृति ही करती है, जिसकी झलक, हमारी जीवन शैली और संस्कृति में दिखाई पड़ती है। किन्तु आज भौतिकवाद, भोग–विलासता, आधुनिक जीवन शैली और खान–पान की आदतों में बदलाव के कारण, जीवनशैली संबंधित विकार (जैसे–मोटापा, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, मधुमेह आदि) तेजी से बढ़ रहे हैं। इन सबसे बचने और स्वस्थ एवं चुस्त–दुरुस्त जीवन जीने के लिए, एक बार फिर, योग एवं प्राकृतिक जीवन शैली को अपनाने की आवश्यकता महसूस की जा रही है। प्रकृति में रहकर, जहां स्वस्थ जीवन प्राप्त होता है वहीं योग, शरीर, मन व आत्मशक्ति का सर्वांगीण विकास करता है और अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण करता है। इस दशक में योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में, जो महत्वपूर्ण कार्य हो रहा है, वह निसंदेह बहुत महत्वपूर्ण है।

अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने, रोगों से बचने और इलाज के लिए, लोग प्राकृतिक चिकित्सा तथा अन्य वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों की ओर तेजी से आकर्षित हो रहे हैं। अतः आज समाज में, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा की विशेषरूप से मांग है। इस विशेष मांग को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) ने अपने अधिकृत प्रशिक्षण केन्द्रों के माध्यम से दो वर्ष छः माह के इस प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम की शुरूआत की है। इसमें छः माह की इंटर्नशिप का प्रावधान है। जो लोग, योग और प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में रुचि रखते हैं और एक पेशेवर के रूप में काम करने के इच्छुक हैं, उन सभी लोगों के लिए यह एक विशिष्ट कार्यक्रम है।

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान के इस डिप्लोमा कार्यक्रम, को प्रभावी बनाने के लिए, प्रैक्टीकल–प्रशिक्षण का 70% और सिद्धान्त (Theory) का 30% वेटेज (Weightage) निर्धारित किया गया है। प्रशिक्षणार्थियों में यथोचित कौशल विकास, कार्य कुशलता, गुणवत्ता व क्षमता में वृद्धि हेतु, अध्ययन केन्द्रों पर यथोचित व्यक्तिगत संपर्क कक्षाएँ, सत्रीय कार्य, प्रैक्टीकल एवं प्रशिक्षण कक्षाएँ, इंटर्नशिप आदि का प्रावधान है।

एनआईओएस, भारत सरकार के अंतर्गत केंद्रीय माध्यमिक शिक्षा बोर्ड (CBSE) के समतुल्य एक राष्ट्रीय शैक्षिक बोर्ड है, जो अपने सभी कार्यक्रम राष्ट्रीय स्तर पर, शिक्षाविदों और ट्रेड संबन्धित विशेषज्ञों की भागीदारी से विकसित करता है। प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान के इस डिप्लोमा कार्यक्रम को राष्ट्रीय स्तर के विषय विशेषज्ञों की समिति द्वारा विकसित किया गया है। पाठ्यक्रम विकास में विशेष सहयोगी रहे, श्रीमती सरिता शर्मा, निदेशक, योगसरिता संस्थान, दिल्ली, प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज, डीन, योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, डॉ0 भानु जोशी, विभागाध्यक्ष, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, डॉ0 निधीश यादव, सहा0 प्रोफेसर, योग विभाग, पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार का, मैं हृदय से आभार प्रकट करता हूँ, जिनके अतुलनीय सहयोग से, यह कार्यक्रम विकसित हो सका। साथ ही सीसीआरवाईएन, आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, अन्य विश्वविद्यालयों, योग व प्राकृतिक चिकित्सा संस्थानों और टीम के उन सभी सदस्यों को भी, धन्यवाद देता हूँ, जिन्होंने प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष रूप से, इस पाठ्यक्रम विकास के लिए अथक प्रयास किये।

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम में प्रवेश लेने वाले अभ्यार्थियों को मैं, शुभकामनाएँ प्रेषित करता हूँ और आशा करता हूँ कि यह कार्यक्रम आपके जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध होगा।

आपके सफल एवं उज्ज्वल भविष्य की कामनाओं के साथ !

**(प्रोफेसर चन्द्र भूषण शर्मा)**

अध्यक्ष, एनआईओएस

# दो शब्द...

*प्रिय शिक्षार्थियो,*

एनआईओएस के प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम में आपका स्वागत है!

आधुनिकता के इस भौतिकदौर में, अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने, रोगों से बचने और सुरक्षित इलाज की सभी को आवश्यकता है। आज लोग अपने स्वास्थ्य और फिटनेस को लेकर काफी सजग हैं। वे समझने लगे हैं कि, प्रकृति के साथ योगमयी जीवन जीना आवश्यक है। जहां प्रकृति स्वस्थ जीवन प्रदान करती है वहीं योग, शरीर, मन व आत्मशक्ति का सर्वांगीण विकास करता है और अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण करता है। यही कारण है कि लोग आज, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा तथा अन्य प्राचीन चिकित्सा—पद्धतियों की ओर आकर्षित हो रहे हैं और समाज में, प्राचीन चिकित्सा—पद्धतियों की मांग विशेषरूप से बढ़ी है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) ने अपने अधिकृत प्रशिक्षण केन्द्रों के माध्यम से, प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा कार्यक्रम की शुरूआत की है। जो लोग, योग और प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में रुचि रखते हैं और एक पेशेवर के रूप में काम करने के इच्छुक हैं, उन सभी लोगों के लिए एनआईओएस द्वारा यह विशिष्ट कार्यक्रम विकसित किया गया है।

प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान के इस दो वर्षीय डिप्लोमा कार्यक्रम में सैद्धांतिक और व्यावहारिक अर्थात प्रैक्टिकल मिलाकर, कुल 12 विषय सम्मलित हैं और छः माह की इंटर्नशिप का विशेष प्रावधान है, जिसे दो साल के प्रशिक्षण के उपरांत संबन्धित प्राकृतिक चिकित्सा के केन्द्रों, संस्थानों और अस्पतालों में पूरा करना आवश्यक होगा।

इस कार्यक्रम में, आपको अध्ययन सामग्री, स्व—निर्देशक सामग्री के रूप में प्रदान की जाएगी और व्यावहारिक घटक अर्थात प्रैक्टिकल—प्रशिक्षण एनआईओएस के मान्य प्रशिक्षण अध्ययन केंद्रों (एवीआई) पर प्रदान किया जाएगा, जहां यथोचित व्यक्तिगत संपर्क कक्षाएँ, सत्रीय कार्य, प्रैक्टीकल एवं प्रशिक्षण कक्षाएँ, इंटर्नशिप आदि का प्रावधान निर्धारित है। योजना के अनुसार, प्रथम वर्ष में आप, सैद्धांतिक और व्यावहारिक 06 विषयों का प्रशिक्षण प्राप्त करेंगे और परीक्षा में बैठेंगे। इसी प्रकार द्वितीय वर्ष में भी आप, सैद्धांतिक और व्यावहारिक 06 विषयों का प्रशिक्षण प्राप्त कर, परीक्षा में बैठेंगे। तदुपरान्त किसी प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग केंद्र अथवा चिकित्सालय में 06 माह की इर्न्टनशिप को पूरा करेंगे।

शिक्षार्थियों को ध्यान में रखते हुए, पाठ्यक्रम को, स्व—निर्देशित पाठ्यसामग्री के रूप में विकसित किया गया है, जिसमें यूनिट परिचय, यूनिट के उद्देश्य, अध्यापक की शैली में विषयों व उपविषयों को शिक्षक की भांति समझाते हुए, बीच—बीच में आपकी प्रगति जानने के लिए प्रश्न, आपने क्या सीखा और अंत में निबंधात्मक प्रश्नों का समावेश किया गया है।

यह पाठयसामग्री राष्ट्रीय स्तर पर विषय विशेषज्ञों की समिति द्वारा विकसित की गई है। पाठ्यक्रम विकास में विशेष सहयोगी रहे श्रीमती सरिता शर्मा, निदेशक, योगसरिता संस्थान, दिल्ली, प्रोफेसर ईश्वर भारद्वाज, डीन, योग विभाग, गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार, डॉ0 भानु जोशी, विभागाध्यक्ष, उत्तराखंड मुक्त विश्वविद्यालय, हल्द्वानी, डॉ0 निधीश यादव, सहा0 प्रोफेसर, योग विभाग, पतंजलि विश्वविद्यालय, हरिद्वार का, मैं ह्रदय से आभारी हूँ, जिनके मार्गदर्शन में यह कार्यक्रम विकसित हो सका। साथ ही सीसीआरवाईएन, आयुष मंत्रालय, भारत सरकार, अन्य विश्वविद्यालयों, योग व प्राकृतिक चिकित्सा संस्थानों और टीम के अन्य सभी सदस्यों का भी मैं, आभार प्रकट करता हूँ, जिन्होंने इस पाठ्यक्रम विकास के लिए अपना महत्वपूर्ण सहयोग प्रदान किया।

आशा करता हूँ कि यह कार्यक्रम आपको पसंद आएगा और आपके जीवन के लिए उपयोगी सिद्ध होगा। इस कार्यक्रम से संबन्धित, यदि कोई सुझाव है तो, आपका स्वागत है। आप निःसंकोच हमसे संपर्क कर सकते हैं या लिखकर भेज सकते हैं।

आपके सफल एवं उज्ज्वल भविष्य के लिए ढेर सारी शुभकामनाएँ!

शुभकामनाओं सहित,<br>
कार्यक्रम समन्वयक और समिति<br>
राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान

# प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा पाठ्यक्रम

## पाठ्यक्रम और पाठ्यचर्या

प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में, प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा एक महत्वपूर्ण पाठ्यक्रम है। यह पाठ्यक्रम, उन सभी लोगों के लिए विकसित किया गया है, जो योग और प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में रुचि रखते हैं और एक पेशेवर के रूप में, काम करने के इच्छुक हैं। प्राचीनकाल से ही मानव प्रकृति के सानिध्य में रहा है, जहां उसने अपनी जीवन शैली में प्रकृति को समाहित कर स्वस्थ जीवन जीने की कला सीखी है। आज स्वस्थ एवं चुस्त–दुरुस्त रहने के लिए, योग एवं प्राकृतिक जीवन शैली को अपनाने की आवश्यकता महसूस की जा रही है।

आधुनिक जीवन शैली के पैटर्न और खान–पान की आदतों में बदलाव के कारण जीवनशैली संबंधी रोग जैसे – मोटापा, उच्च रक्तचाप, हृदय रोग, मधुमेह आदि बीमारियां तेजी से बढ़ रही हैं। यही कारण है कि, लोग अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने, रोगों से बचने और इलाज के लिए, प्राकृतिक चिकित्सा तथा अन्य वैकल्पिक चिकित्सा पद्धतियों की ओर तेजी से आकर्षित हो रहे हैं। अतः आज समाज में, योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा की विशेषरूप से मांग है। इस विशेष मांग को ध्यान में रखते हुए, राष्ट्रीय मुक्त विद्यालयी शिक्षा संस्थान (एनआईओएस) ने अपने अधिकृत प्रशिक्षण केन्द्रों के माध्यम से इस व्यावसायिक पाठ्यक्रम की शुरूआत की है।

### उद्देश्य

पाठ्यक्रम का मुख्य उद्देश्य, योग और प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में लोगों को कुशल पेशेवर और निवारक विशेषज्ञ बनाना है। पाठ्यक्रम को पूरा करने के पश्चात, प्रशिक्षु निम्नांकित में कौशल प्राप्त करने और दक्षता हासिल करने में सक्षम होंगे –

- योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के परिचय पर प्रकाश डालने में;
- स्वास्थ्य–जागरूकता, स्वच्छता, एवं आहार की आवश्यकता एवं महत्व का उल्लेख करने में;
- योग दर्शन एवं क्रिया विज्ञान को समझा पाने में;
- योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धांतों तथा पंचतत्वों पर प्रकाश डालने में;
- प्राकृतिक जीवन शैली की अवधारणाओं को जानने और व्यावहारिक बनाने में;
- स्वास्थ्य संवर्धन, बीमारियों की रोकथाम सहित सामान्य संक्रमण और जीवन शैली संबन्धित बीमारियों का प्रबंधन और आपातकालीन स्थितियों के दौरान नियंत्रण करने में;
- मानव शरीर रचना एवं शरीर क्रिया विज्ञान की मूलभूत जानकारी रखने में;
- योग के एकीकृत दृष्टिकोण के अनुप्रयोगों को लागू करने में;

- प्राकृतिक चिकित्सा से विभिन्न विकारों व बीमारियों की चिकित्सा प्रदान करने में;
- मानव शरीर पर योग के प्रभाव को स्पष्ट करने में।

## प्रवेश अर्हता

- किसी भी मान्यता प्राप्त बोर्ड से न्यूनतम 12 वीं कक्षा पास (समकक्ष)

अथवा

- वे सभी लोग, जो योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा में किसी प्रतिष्ठित संस्थान (एनआईओएस द्वारा स्वीकृत)/विश्वविद्यालय से न्यूनतम एक वर्ष का डिप्लोमा कर चुके हैं, वे पाठ्यक्रम के द्वितीय वर्ष में सीधे प्रवेश ले सकते हैं, लेकिन प्रथम वर्ष की परीक्षा द्वितीय वर्ष के साथ उत्तीर्ण करनी आवश्यक होगी।
- न्यूनतम आयु –18 वर्ष

## लक्ष्य समूह

वे सभी लोग, जो योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में 'कुशल पेशेवर और निवारक विशेषज्ञ' बनने के इच्छुक हैं।

## रोजगार के अवसर

कार्यक्रम पूरा करने के पश्चात प्रशिक्षु, योग संस्थानों, योग केंद्रों, स्वास्थ्य क्लबों, प्राकृतिक चिकित्सालयों तथा अन्य प्राचीन चिकित्सा पद्धति के केन्द्रों आदि में सहायक चिकित्सक अथवा समकक्ष के रूप में काम कर सकते हैं।

**पाठ्यक्रम की अवधि :** पाठ्यक्रम की अवधि दो वर्ष छः माह इंटर्नशिप।

**अध्ययन की योजनाः** कुल अध्ययन घंटे = 1200 घंटे + छः माह की इंटर्नशिप

स्व–अध्ययन – 20%, सिद्धांत और प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण – 80%

प्रथम वर्षः 10 माह × 8 दिन (एक माह में) × 6 घंटे = 480 घंटे

द्वितीय वर्षः 10 माह × 8 दिन (एक माह में) × 6 घंटे = 480 घंटे

---

थ्योरी व प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण कुल संपर्क घंटे – 480 + 480 = 960 घंटे + स्व–अध्ययन – 240 घंटे

छः माह की रेग्युलर इंटर्नशिप = 6 माह × 20 दिन (एक माह में) × 6 घंटे = 720 घंटे

## पाठ्यक्रम–पाठ्यचर्या

पाठ्यक्रम में सिद्धांत और प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण सहित कुल 12 विषय शामिल हैं। अध्ययन सामग्री स्व–निर्देशक सामग्री के रूप में प्रदान की जाएगी और व्यावहारिक घटक अर्थात

प्रैक्टिकल–प्रशिक्षण एनआईओएस के मान्य प्रशिक्षण अध्ययन केंद्रों (एवीआई) पर प्रदान किया जाएगा।

| प्रथम वर्ष के विषय | | | |
|---|---|---|---|
| क्र.सं. | सैद्धान्तिक | क्र.सं. | प्रैक्टिकल |
| 01 | योग का आधारभूत ज्ञान | 04 | योग अभ्यास (प्रायोगिक) |
| 02 | प्राकृतिक चिकित्सा का आधारभूत ज्ञान | 05 | प्राकृतिक चिकित्सा का व्यावहारिक प्रशिक्षण (प्रायोगिक) |
| 03 | मानव शरीर रचना, क्रिया विज्ञान और योग के प्रभाव | 06 | मानव शरीर रचना, क्रिया विज्ञान और योग के प्रभाव (प्रायोगिक) |
| द्वितीय वर्ष के विषय | | | |
| 01 | यौगिक चिकित्सा | 04 | यौगिक चिकित्सा (प्रायोगिक) |
| 02 | पंच–तत्व चिकित्सा | 05 | पंच–तत्व चिकित्सा (प्रायोगिक) |
| 03 | अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ | 06 | अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ (प्रायोगिक) |
| *किसी प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र पर छः माह की इंटर्नशिप के दौरान अनुसंधान संबन्धित परियोजना पर कार्य | | | |

*प्रशिक्षु इंटर्नशिप के दौरान अनुसंधान संबन्धित परियोजना पर कार्य करेंगे। जिसके अधिकतम अंक 200 होंगे। इसका मूल्यांकन एनआईओएस द्वारा नियुक्त, बाह्य परीक्षक द्वारा किया जाएगा। जिसका प्रमाणपत्र संबन्धित एवीआई (प्रशिक्षण केंद्र) और प्राकृतिक चिकित्सा केंद्र के सौजन्य से प्राप्त होगा।

## निर्देश का माध्यम:

निर्देश का माध्यम हिंदी और अंग्रेजी

## अनुदेश योजना:

- स्व–निर्देशित मुद्रित सामग्री
- एवीआई/अध्ययन केन्द्रों पर सम्पर्क कक्षाओं एवं व्यावहारिक–प्रशिक्षण की सुविधा
- श्रव्य–दृश्य सामग्री

# मूल्यांकन और प्रमाणन की योजना

पाठ्यक्रम के दोनों घटकों (सैद्धान्तिक और व्यावहारिक) का मूल्यांकन किया जाएगा। अंतिम परिणाम की गणना करते समय आंतरिक आंकलन और इंटर्नशिप को भी ध्यान में रखा जाएगा। आंकलन, मूल्यांकन और प्रमाणन की योजना एनआईओएस द्वारा डिजाइन दिशा–निर्देशों के माध्यम से कार्यान्वित की जाएगी। एनआईओएस अपने नियमों और विनियमों के अनुसार अंतिम प्रमाणपत्र प्रदान करेगा।

| क्र.सं. | प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग विज्ञान में डिप्लोमा पाठ्यक्रम | कोर्स कोड | अधि. अंक | समय (घंटे में) | सत्रीयकार्य अधि.अंक | कुल अंक |
|---|---|---|---|---|---|---|
| प्रथम वर्ष | | | | | | |
| 1 | योग का आधारभूत ज्ञान (सैद्धान्तिक) | 811 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| 2 | प्राकृतिक चिकित्सा का आधारभूत ज्ञान (सैद्धान्तिक) | 812 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| 3 | मानव शरीर रचना, क्रिया विज्ञान और योग के प्रभाव (सैद्धान्तिक) | 813 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| 4 | योग अभ्यास (प्रायोगिक) | 814 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| 5 | प्राकृतिक चिकित्सा का व्यावहारिक प्रशिक्षण (प्रायोगिक) | 815 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| 6 | मानव शरीर रचना एवं क्रिया विज्ञान (प्रायोगिक) | 816 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| | **योग** | | | | | 600 |
| द्वितीय वर्ष | | | | | | |
| 1 | यौगिक चिकित्सा (सैद्धान्तिक) | 817 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| 2 | पंच–तत्व चिकित्सा (सैद्धान्तिक) | 818 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| 3 | अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ (सैद्धान्तिक) | 819 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| 4 | यौगिक चिकित्सा (प्रायोगिक) | 820 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| 5 | पंच–तत्व चिकित्सा (प्रायोगिक) | 821 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| 6 | अन्य प्राचीन प्राकृतिक चिकित्सा पद्धतियाँ (प्रायोगिक) | 822 | 70 | 3 | 30 | 100 |
| | **योग** | | | | | 600 |
| इन्टर्नशिप के दौरान अनुसंधान संबन्धित परियोजना पर कार्य | | | | | | 200 |
| महायोग = | | | | | | 1400 |

उत्तीर्णता मापदंड : परीक्षार्थी को सैद्धान्तिक, व्यावहारिक प्रशिक्षण एवं सत्रीय कार्य तीनों में 50–50 प्रतिशत अंक प्राप्त करने होंगे।

## पाठ्यक्रम शुल्क

पाठ्यक्रम का कुल शुल्क 30,000 रुपये है, जिसमें पाठ्यसामग्री, प्रक्रिया शुल्क आदि सम्मिलित है। परीक्षा में बैठने के लिए परीक्षा शुल्क एनआईओएस के नियमानुसार अलग से देय होगा। प्रवेश के दौरान अभ्यार्थी, प्रथम वर्ष में निर्धारित पाठ्यक्रम शुल्क 15,000 रुपये और द्वितीय वर्ष में 15,000 रुपये जमा करेंगे।

**नोट** : जो अभ्यर्थी सीधे द्वितीय वर्ष में प्रवेश लेंगे, उनके लिए यह पाठ्यक्रम शुल्क 25,000 रुपये होगा।

# विषय सूची


| क्र.सं. | यूनिट का नाम | पृष्ठ सं. |
|---|---|---|
| 1. | प्राकृतिक चिकित्सा : एक परिचय, उद्‌भव एवं इतिहास | 1 |
| 2. | प्राकृतिक चिकित्सा के मूलभूत सिद्धांत | 15 |
| 3. | आहार एवं औषधीय पौधे | 39 |
| 4. | प्राथमिक उपचार | 55 |
| 5. | सम्यक स्वास्थ्य | 75 |
| 6. | आहार एवं पोषण | 95 |
| 7. | प्राकृतिक स्वच्छता | 123 |
| 8. | आकाश तत्व चिकित्सा | 135 |
| 9. | वायु तत्व चिकित्सा | 153 |
| 10. | अग्नि तत्व (सूर्यकिरण) चिकित्सा | 179 |
| 11. | जल तत्व चिकित्सा | 193 |
| 12. | पृथ्वी तत्व चिकित्सा (मिट्‌टी चिकित्सा) | 207 |

# 1

# प्राकृतिक चिकित्सा : एक परिचय, उद्भव एवं इतिहास

प्राकृतिक चिकित्सा प्राचीन चिकित्सा पद्धति है, जिसका उद्भव प्रकृति के साथ ही हुआ है। पांच महाभूतों से सम्पूर्ण प्रकृति का निर्माण हुआ है और ये ही पंचभूत प्रत्येक जीवधारी में पाये जाते हैं। ये पाँच महाभूत हैं – आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी। इन पांच महाभूतों का मानव शरीर में संतुलन बनाए रखना ही प्राकृतिक चिकित्सा है।

जब प्रकृति में इन महाभूतों का संतुलन बिगड़ता है तो प्राकृतिक प्रकोप होता है और जब इन महाभूतों का संतुलन मानव शरीर में बिगड़ता है तो विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। अतः इन महाभूतों में संतुलन बनाए रखने के लिए प्रकृति के सान्निध्य में रहना आवश्यक है।

प्राचीनकाल से ही मनुष्य प्रकृति की गोद में रहता आया है। जहाँ प्रकृति ने ही उसका पालन पोषण किया है। अतः प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति केवल चिकित्सा नहीं है, अपितु यह सम्पूर्ण जीवन विज्ञान है।

इस यूनिट के अन्तर्गत हम प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति, इसकी उत्पत्ति, इतिहास और विकास पर चर्चा करेंगे।

## उद्देश्य

इस यूनिट का अध्ययन करने के पश्चात् आप :

- प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ बता सकेंगे;
- प्राकृतिक चिकित्सा के इतिहास एवं विकास का उल्लेख कर सकेंगे;

टिप्पणी

- प्राकृतिक चिकित्सा के मूलभूत सिद्धांतों को समझा सकेंगें;
- प्राकृतिक जीवन शैली की अवधारणा पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- प्राकृतिक चिकित्सा की आवश्यकता एवं उपयोगिता का वर्णन कर सकेंगे;
- प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य में परस्पर संबंध स्थापित कर सकेंगे;

## 1.1 प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ एवं परिभाषा

प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति प्रकृति पर आधारित एक चिकित्सा पद्धति है। शरीर से संचित विजातीय द्रव्यों को प्राकृतिक उपचार के माध्यम से बाहर निकालना एवं जीवनी शक्ति को ऊर्जावान करके रोग ग्रस्त अंगों को शक्ति प्रदान करना प्राकृतिक चिकित्सा है। प्राकृतिक चिकित्सा पंच तत्व पर आधारित चिकित्सा पद्धति है। प्रकृति चिकित्सा में पंच तत्वों को प्रयोग करके चिकित्सा दी जाती है। पृथ्वी, वायु, जल, अग्नि, आकाश, इन पंच तत्वों से ही शरीर का निर्माण हुआ है। इन पंच तत्वों के असंतुलन के कारण ही रोग उत्पन्न होते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा में इन पंच तत्वों की संतुलन बनाकर रोग दूर किये जा सकते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा प्रकृति के निर्माणकारी सिद्धान्तों के अनुसार शारीरिक, मानसिक, नैतिक और आध्यात्मिक धरातलों पर समन्वित रूप में मानव निर्माण की व्यवस्था है। प्राकृतिक चिकित्सा का आधार ही रोग—प्रतिरोधक क्षमता का संवर्द्धन करना है।

हमारा शरीर प्रकृति से बनी एक अद्भुत संरचना है जिस पर प्रतिदिन अनेकों रोगाणुओं का आक्रमण होता है, फिर भी शरीर अपनी जीवनी शक्ति व रोग प्रतिरोधक क्षमता द्वारा स्वयं अपनी रक्षा करता है। रोग से लड़ने के लिए प्रत्येक प्राणी और वनस्पति में यह जीवनी शक्ति प्रकृति ने स्वयं भरी है। जो उसे उसके जीवन के साथ ही प्राप्त होती है।

प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ है — प्रकृति के द्वारा चिकित्सा अर्थात् प्रकृति द्वारा निर्मित पंचमहाभूतात्मक शरीर का प्रकृति में उपलब्ध स्थूल पंचमहाभूतों द्वारा उपचार करना प्राकृतिक चिकित्सा कहलाता है।

### प्राकृतिक चिकित्सा की परिभाषाएं

इस क्षेत्र के कुछ प्रमुख चिकित्सा विशेषज्ञों द्वारा दी गई परिभाषाएं इस प्रकार हैं :—

- **लुई कुने के अनुसार** — ''प्राकृतिक प्रणाली जिसका चिकित्सा के रूप में उपयोग करते हैं तथा जो दूसरी पद्धतियों से गुण में बहुत अच्छी है, बिना औषधि या ऑपरेशन के उपचार की आधार की शिक्षा है।''

- **जे.एम. जुस्सावाला के अनुसार** — ''प्राकृतिक चिकित्सा एक विस्तृत शब्द है जो रोगोपचार की सभी प्रणालियों के लिए उपयोग किया जाता है, जिसका उद्देश्य प्राकृतिक शक्ति एवं शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता के साथ सहयोग करना है। यह व्याधि से मुक्त कराने का

टिप्पणी

एक भिन्न तरीका है जिसका जीवन स्वास्थ्य एवं रोग के संबंध में अपना स्वयं का एक दर्शन है।

- **बेनजामिन हेरी के अनुसार** — प्राकृतिक चिकित्सा शरीर को स्वयं की आंतरिक सफाई एवं शुद्धिकरण की स्वीकृति देती है। इस प्रकार यह अशुद्धता एवं अनुपयोगी पदार्थ जो एकत्र हो जाते हैं और सामान्य कार्यों में बाधा उत्पन्न करते हैं उन्हें निकाल फेंकती है।
- **महात्मा गांधी के अनुसार** — ''प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति से रोग मिट जाने के साथ ही रोगी के लिए ऐसी जीवन पद्धति का आरंभ होता है जिसमें पुनः रोग के लिए कोई गुंजाइश ही नहीं रहती।''
- **पं. श्रीराम शर्मा आचार्य** — ''प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ है प्राकृतिक पदार्थों विशेषतः प्रकृति के पांच मूल तत्वों द्वारा स्वास्थ्य रक्षा और रोग निवारक उपाय करना।''

## यूनिटगत प्रश्न 1.1

1) प्राकृतिक चिकित्सा का अर्थ बताइए।

........................................................................................................................

........................................................................................................................

2) प्राकृतिक चिकित्सा की कोई एक परिभाषा लिखिए।

........................................................................................................................

........................................................................................................................

3) प्रकृति में पाये जाने वाले महाभूतों के नाम लिखिए।

........................................................................................................................

........................................................................................................................

## 1.2 प्राकृतिक चिकित्सा का उद्‌भव एवं इतिहास

प्राकृतिक चिकित्सा एक अति प्राचीन विज्ञान है। वेदों व अन्य प्राचीन ग्रंथों में हमें इसके अनेक संदर्भ मिलते हैं। सृष्टि का निर्माण पंचमहाभूतों से हुआ है। चूँकि प्राकृतिक चिकित्सा भी पंचमहाभूत है, अतः यह कहना उचित होगा कि सृष्टि के साथ ही प्राकृतिक चिकित्सा का उद्‌भव हुआ है।

प्राकृतिक चिकित्सा का उद्‌भव प्रकृति के पांच तत्वों आकाश, वायु, अग्नि, जल व पृथ्वी के द्वारा हुआ है। यदि इस चिकित्सा को सबसे प्राचीन और सभी चिकित्सा प्रणालियों की जननी कहें तो

टिप्पणी

शायद यह आश्चर्यजनक नहीं होगा। एक प्रसंग के अनुसार एक बार बुद्ध कलन्द निवाय नामक स्थान पर रूके हुए थे वहीं पर एक दिन किसी बौद्ध भिक्षु को सांप ने काट लिया। तभी कुछ लोगों ने इसकी सूचना बुद्ध को दी, बुद्ध ने उन्हें मिट्टी, गोबर, राख और मूत्र से उपचार करने को कहा। यह घटना लगभग 2500 साल पूर्व की है। इस घटना से पहले इस बात का प्रमाण मिलता है कि रोगों के उपचार में मिट्टी का प्रयोग देश में प्राचीन काल से ही प्रचलित है।

प्रारम्भ में औषधि चिकित्सा नहीं हुआ करती थी। उस समय उपवास को ही रोगों की अचूक चिकित्सा माना जाता था। औषधियों के प्रयोग का प्रारम्भिक काल रावण के समय से माना जा सकता है। रावण को एक भोग विलासी होने के कारण उपवास से कष्ट होता था। उसने वैद्यों को ऐसी औषधियों की खोज करने के लिये कहा, जिनका प्रयोग करने पर उपवास आदि न करना पड़े। इसी प्रकार धीरे–धीरे कालान्तर में औषधियां लोगों के बीच फैलती गयीं, परन्तु वे उतनी प्रभावकारी सिद्ध नहीं हुईं जितनी की प्राकृतिक चिकित्सा। प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति भारत की प्राचीन पद्धति है परन्तु बीच में कुछ समय के लिये यह पद्धति विलुप्त हो गई। इसके पुनर्जन्म या पुनर्निर्माण का श्रेय पश्चिमी देशों को ही जाता है। प्राकृतिक चिकित्सा के पुनरूत्थान में सहयोग करने वाले अनेक प्रभावशाली पश्चिमी चिकित्सक थे।

प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति पर विश्वास जागने के पश्चात् अनेक ऐलोपैथी डॉ० इसके पुनरूत्थान में लग गये थे। इस श्रेणी में पहले दो डॉ० जेम्स क्यूरी और सर जॉन फ्लायर थे जो अठारहवीं शताब्दी से सम्बन्ध रखते हैं। डॉ० फ्लायर इग्लैंड के रिचफील्ड के रहने वाले थे। एक बार उन्होंने कुछ किसानों को एक पानी के स्रोत में नहाकर स्वास्थ्य लाभ लेते हुए देखा, तभी उनके मन में जल के स्वास्थ्यवर्द्धक प्रभाव के विषय में अधिकाधिक खोज करने की प्रबल इच्छा जागृत हुई थी। डॉ० जेम्स क्यूरी लिवर पूल के रहने वाले थे। सन् 1717 में इन्होंने जल चिकित्सा के ऊपर एक पुस्तक लिखकर उसका प्रकाशन करवाया था।

**विनसेंज प्रिस्निज (Vincenz Priessnitz)** :– वास्तव में उपरोक्त दोनों डाक्टरों के समय तक लोगों में प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार व्यावहारिक रूप से नहीं हो सका था। इस श्रम को सर्वप्रथम जर्मनी में डॉ० प्रिस्निज ने ही किया। यही कारण है कि कुछ विद्वानों के अनुसार डॉ० प्रिस्निज ही आधुनिक प्राकृतिक चिकित्सा के जन्मदाता हैं। लगभग 2300 वर्ष पूर्व हिपोक्रेट्स के उठाये हुए रोग उपशम संकट के अनुसंधान के कार्य को इन्होंने ही अपने समय में पूरा किया। इस तथ्य से भी इन्कार नहीं किया जा सकता कि आधुनिक प्राकृतिक चिकित्सा का आन्दोलन आज से लगभग सवा सौ साल पूर्व ही हुआ था जो कि प्रिस्निज का भी समय है।

**फादर सेबस्टियन नीप (Father Sebastian Kneipp)**:– प्रकृति के प्रबल उपासक पादरी फादर नीप ने भी अपने पूरे उत्साह और लगन से प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार किया। ये जल चिकित्सा के साथ–साथ जड़ी बूटियों द्वारा चिकित्सा करने के पक्षधर थे। इन्होंने एक स्वास्थ्य गृह बनाया तथा उसका संचालन 45 साल से अधिक अवधि तक बड़ी तत्परता और सफलता के साथ किया। आज भी जर्मनी में इनके नाम से अनेक संस्थायें कार्यरत हैं, जिनमें इनकी ही चिकित्सा प्रणाली प्रचलित है। इन संस्थाओं में सदस्यों की संख्या लगभग 50,000 से अधिक है। नीप द्वारा लिखी पुस्तक ''माई वाटर क्योर'' आज भी व्यापक रूप से पढ़ी जाती है।

टिप्पणी

**आर्नल्ड रिक्ली (Arnold Rikli)**:— आर्नल्ड पहले एक व्यापारी थे। परन्तु बाद में प्राकृतिक चिकित्सा से प्रभावित होकर इन्होंने अपना सारा जीवन इसीको समर्पित कर दिया। ये आस्ट्रिया के रहने वाले थे। 1848 ई० में इन्होंने केन प्रान्त के टेल्डास नामक स्थान पर धूप और वायु का सेनिटोरियम स्थापित किया जो कि अपने ढंग का प्रथम प्राकृतिक चिकित्सा भवन था, जिसे देखकर बाद में अन्य चिकित्सकों ने भी इसी प्रकार के भवन बनवाये। सबसे पहले इन्होंने ही धूप तथा वायु के साथ—साथ रोगियों को सात्विक आहार पर रखकर उनके उपचार की प्रणाली विकसित की और इससे सम्बन्धित सिद्धान्तों का प्रचार किया।

**लूई कूने (Louis Kuhne)**:— प्राकृतिक चिकित्सा में जल चिकित्सा को पुनर्जीवित करने तथा उसका विकास करने का श्रेय मुख्य रूप से प्रेस्निज, नीप व कूने को जाता है। किन्तु यदि देखा जाये तो इन तीनों में से कूने को श्रेष्ठ माना जाता है। यहां तक की इस प्रणाली का नाम कूने के नाम पर ही पड़ गया। कूने द्वारा लिखी गयी विभिन्न पुस्तकों में "The New Science of healing" तथा "The Science of Facial Expression" प्रसिद्ध हैं। इन पुस्तकों की आज तक लगभग 60—70 आवृतियां छप चुकी हैं। इन पुस्तकों का अनुवाद विश्व की अधिकांश भाषाओं में हो चुका है। इनका जन्म स्थान जर्मनी है। इनके पिता जुलाहे थे। इन्हें मस्तिष्क तथा फेफड़ों के असाध्य रोग हुए। एलोपैथी द्वारा काफी इलाज कराने के बाद भी जब ये ठीक न हुए तब इन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा की शरण ली। जिससे वे पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गये। इसका परिणाम यह हुआ कि ये प्राकृतिक चिकित्सा पर पूर्ण विश्वास करने लगे तथा उसके भक्त बन गये। सन् 1883 में इन्होंने अपना एक स्वास्थ्य गृह खोला जिससे इनकी ख्याति चारों दिशाओं में फैलने लगी।

**एडोल्फ जस्ट (Adolf Just)**:— मिट्‌टी के प्रयोग द्वारा समस्त रोगों को दूर करने में सक्षम एडोल्फ जस्ट द्वारा लिखी पुस्तक प्रकृति की ओर (Return to Nature) विश्व विख्यात है। इन्होंने ही अपनी मालिश स्वयं करने की क्रिया को भी जन्म दिया।

**हेनरी लिण्डल्हार (Henry Lindlahar)**:— ये प्राकृतिक चिकित्सक बनने से पूर्व एक उच्च ऐलोपैथिक चिकित्सक थे। ये अमेरिका के निवासी थे और उन चिकित्सकों में से एक थे जो प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्तों के विरूद्ध जाकर रोग उपशम, संकट के उपस्थित होने पर प्राकृतिक उपचारों के साथ—साथ उत्तेजक दवाओं, विशेषकर होमियोपैथिक औषधियों को दिये जाने के पक्ष में थे। इन्होंने सिद्ध किया कि तीव्र रोग हमारे मित्र हैं, ये शरीर से विजातीय द्रव्यों के निष्कासन के लिये ही उत्पन्न होते हैं तथा निष्कासन के बाद स्वत: ठीक हो जाते हैं। इनके द्वारा लिखी सुप्रसिद्ध पुस्तकें "Iridiagnosis" और "The Philosophy and Practice of Natural Therapeutic" हैं, जिनकी ख्याति विश्व भर में है।

## 1.2.1 प्राकृतिक चिकित्सा का विकास

प्राकृतिक चिकित्सा ने बहुत कम समय में ही काफी उन्नति कर ली है। आज लोग इसे मानने लगे हैं तथा अपने रोगों की चिकित्सा के लिये इस प्रणाली को अपनाने लगे हैं। इंग्लैण्ड में ही आज लगभग 400 प्राकृतिक चिकित्सक अपनी चिकित्सा द्वारा सफलतापूर्वक रोगों का उपचार

टिप्पणी

कर रहे हैं। जर्मनी, स्विट्जरलैंड आदि लगभग सभी पश्चिमी देशों में प्राकृतिक चिकित्सा का विकास काफी तेजी से हो रहा है। चूंकि आज लोग ऐलोपैथी से होने वाले दुष्प्रभावों को जान चुके हैं अतः वे दूसरी वैकल्पिक चिकित्सा पद्धति की ओर आकर्षित हो रहे हैं।

इस चिकित्सा की प्रगति का श्रेय उन सभी महान चिकित्सकों को जाता है, जिन्होंने तत्कालीन क्लेशों, मान, अपमान को सहन करके सभी कठिनाइयों को झेलते हुए प्राकृतिक चिकित्सा का प्रचार–प्रसार किया। इनमें से कुछ मुख्य चिकित्सक इस प्रकार हैं :–

**हैरी बैन्जामिन** :– इनका जन्म लन्दन में सन् 1896 ई० में हुआ था। इनकी आंखे बाल्यकाल से ही खराब थीं और जैसे–जैसे इनकी उम्र बढ़ती गयी इनकी आंखे और अधिक खराब होती गयीं। परन्तु बाद में इन्होंने डॉ० वेट्स द्वारा लिखी पुस्तक ''**चश्मे बगैर पूर्ण दृष्टि**'' पढ़ी और उसके द्वारा चिकित्सा करते हुए अपनी आंखे पूर्ण रूप से ठीक कर लीं। सन् 1929 में ''**हैल्थ फार आल**'' नामक पत्रिका में कार्य किया था।

**स्टैनली लीफ (Dr. Stanley Lief)**:– ये लंदन से 50 कि.मी. दूर चंपनी नामक गांव में स्थित एक विशाल प्राकृतिक चिकित्सालय "Life's Nature Cure Resort" के संस्थापक हैं। इनके द्वारा लिखी दो पुस्तकें "Diet Reform Simplified" तथा "How to Feed Children from Infancy onward" काफी प्रसिद्ध हैं। लंदन का प्रसिद्ध ब्रिटिश कॉलेज ऑफ नेचुरोपैथी इनके तत्वावधान में बहुत तेजी से प्रगति कर रहा है।

**प्रो० आर्नल्ड एहरेट (Prof. Arnhold Ehret)** :– इनका जन्म जर्मनी में हुआ था परन्तु बाद में अपने कार्य क्षेत्र के रूप में इन्होंने अमेरिका को चुना। इनकी चिकित्सा पद्धति मुख्य रूप से फलाहार व उपवास थी। इनके द्वारा लिखित पुस्तकें "Rational Fasting" तथा "Mucusless Diet Healing System" अधिक प्रसिद्ध हैं।

**जे०एच० केलॉग (J.H. Kellogg)**:– ये अमेरिका के महान चिकित्सा एवं आहार विशेषज्ञ थे। इन्होंने मालिश क्रिया, धूप चिकित्सा आदि अनेक विषयों पर लिखा तथा ये मिचिगैन अमेरिका के विश्व प्रसिद्ध बैटल क्रीक सेनीटोरियम के डायरेक्टर थे। इनके अनेक आविष्कारों में विद्युत ज्योति स्नान (Electric Light Bath) भी सम्मिलित है। जिसका प्रयोग आज विश्व के लगभग सभी बड़े–बड़े अस्पतालों में अच्छी तरह से हो रहा है। बैटल क्रीक सेनीटोरियम अपने आप में एक अनोखा सेनिटोरियम है। जिसमें एक स्थान पर जल चिकित्सा, आहार चिकित्सा, शल्य चिकित्सा, स्वीडिश मूवमेन्ट तथा विद्युत चिकित्सा आदि से रोगों का उपचार किया जाता है। ''द न्यू डायटेटिक्स रेशनल हाइड्रो थैरेपी'' तथा ''होम हैंड बुक ऑफ हाइजीन एण्ड मेडिसीन'' इनके द्वारा लिखी गई प्रसिद्ध पुस्तकें हैं।

टिप्पणी

## 1.2.2 भारत में प्राकृतिक चिकित्सा का उद्‌भव एवं इतिहास व प्रगति

भारत में प्राकृतिक चिकित्सा का इतिहास बहुत पुराना है। यहाँ प्राचीन काल से ही तीर्थ स्थानों पर घूमना, आश्रमों में रहना, उपवास आदि करना, पेड़ पौधों की पूजा करना, सूर्य, अग्नि की पूजा करना आदि कर्म के अंग माने जाते रहे हैं। यदि किसी प्राकृतिक नियम के तोड़ने से कोई अस्वस्थ हो जाता था तो उपवास, जड़ी बूटियों तथा अन्य प्राकृतिक साधनों का प्रयोग करने से वह स्वस्थ हो जाता था।

वैदिक काल में प्राकृतिक चिकित्सा का उल्लेख मिलता है। ऋग्वेद में पांचों महाभूतों का उल्लेख सूक्तों के रूप मिलता है। अथर्ववेद में जल को अमृत की संज्ञा दी गई है।

पुराण काल में भी प्राकृतिक चिकित्सा का उपयोग रोगों को दूर करने के लिए किया जाता था। एक प्रसंग में बताया गया है कि राजा दिलीप ने दुग्ध कल्प एवं राजा दशरथ की रानियों ने फल-कल्प के माध्यम से सन्तान प्राप्ति की थी। इस समय उपवास को बेजोड़ औषधि माना जाता था। महाबग्ग नामक बौद्ध ग्रन्थ में भी भगवान बुद्ध के द्वारा मिट्‌टी चिकित्सा का उपयोग करने के संकेत मिलते हैं। इसी प्रकार सिन्धु घाटी सभ्यता और मोहनजोदड़ो सभ्यता में भी जल चिकित्सा का महत्व था। मोहनजोदड़ो सभ्यता में पाए गए वृहद और सर्व सुलभ स्नानागार हैं, जिसमें गर्म व ठंडे दोनों प्रकार के स्नान का प्रबन्ध था। इससे ज्ञात होता है कि 350 ई० पूर्व भी जल चिकित्सा महत्वपूर्ण स्थान रखती थी।

भारत में प्राकृतिक चिकित्सा का जिक्र अत्यन्त प्राचीन ग्रन्थों में भी मिलता है। जिससे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि यह पद्धति हमारे देश में ही सर्वप्रथम उपयोग में लायी गयी। परन्तु बाद में धीरे–धीरे ये पद्धति हमारे देश में लुप्त प्रायः हो गयी। भारत में पुनः प्राकृतिक चिकित्सा का आरम्भ लुई कुने की प्रसिद्ध पुस्तक 'New Science of Healing' के भारतीय भाषा में अनुवाद के साथ हुआ।

वर्तमान शताब्दी में प्राकृतिक चिकित्सा को नया जीवन देने का श्रेय राष्ट्रपिता महात्मा गांधी को जाता है। उन्हें भारत का प्रथम प्राकृतिक चिकित्सक कहा जाता है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी भी इस चिकित्सा पद्धति के अनुयायी थे। एडोल्फ जुस्ट की पुस्तक 'Return to Nature' पढ़कर वे काफी प्रभावित हुए जिसके फलस्वरूप उन्होंने इस पद्धति का गहन अध्ययन किया तथा सर्वप्रथम अपने ऊपर और फिर अपने परिवारजनों व अपने आश्रम के लोगों पर प्रयोग किया। इस प्रयोग से उन्होंने यह निष्कर्ष निकाला कि भारतीयों के स्वास्थ्य संवर्धन के लिये यह सर्वाधिक उपयुक्त पद्धति है।

कई अन्य लोग भी इस पद्धति से जुड़े और प्रचार–प्रसार किया। ये इस प्रकार हैं :–

**कृष्ण स्वरूप क्षेत्रीय** :– ये उत्तर प्रदेश स्थित बिजनौर के निवासी थे। इन्होंने ही लुई कूने की प्रसिद्ध पुस्तक 'न्यू साइंस ऑफ हीलिंग' का हिन्दी व उर्दू भाषा में अनुवाद किया। इनकी इन

टिप्पणी

पुस्तकों के कई संस्करण प्रकाशित हो चुके हैं। ये अपने समय में प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक थे।

**विनोबा भावेः**— महात्मा गांधी के आध्यात्मिक उत्तराधिकारी विनोबा भावे प्राकृतिक चिकित्सा जीवन और उसके शिक्षण के लिये पूर्ण रूप से समर्पित रहे। उन्होंने अपने गीता प्रवचन तथा राम नाम एक चिन्तन में प्राकृतिक जीवन के मूल आदर्शों का बड़े अच्छे ढंग से विवेचन किया है। उनके द्वारा लिखी पुस्तक गांवों की स्वास्थ्य योजना स्वास्थ्य की दृष्टि से एक मार्गदर्शिका है।

**जानकी शरण वर्माः**— इनके द्वारा लिखी दो पुस्तकें "रोगों की अचूक चिकित्सा" और "अचूक चिकित्सा के प्रयोग'' इस पद्धति की सर्वश्रेष्ठ पुस्तकों में से एक हैं। वे एक सफल चिकित्सक भी थे, परन्तु उनका नाम इन दो पुस्तकों की वजह से प्राकृतिक चिकित्सा में सदा अमर रहेगा।

**डॉ० कुलरंजन मुखर्जी** :— ये बंगाल के प्रसिद्ध प्राकृतिक चिकित्सक हुए हैं। इन्होंने अनेक लोकप्रिय प्राकृतिक चिकित्सा के ग्रन्थों का बंगला, हिन्दी, अंग्रेजी आदि भाषाओं में लेखन व प्रकाशन किया।

**डॉ० के० लक्ष्मण शर्मा** :— तमिलनाडु में जन्मे लक्ष्मण शर्मा भारत में प्राकृतिक चिकित्सा के पितामह कहे जाते हैं। इन्होंने उच्च शिक्षा ग्रहण करने के बाद अपना सारा जीवन प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार प्रसार में लगा दिया। आज इनके अनेक शिष्य विश्व भर में प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार में लगे हुए हैं।

**डॉ० खुशीराम दिलकश** :— ये आरोग्य निकेतन (लखनऊ) के संस्थापक व संरक्षक थे। साथ ही ये वार्षिक पत्र एवं प्राकृतिक जीवन का सम्पादन भी करते रहे। ये काफी समय तक केन्द्रीय योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा अनुसंधान परिषद के सदस्य भी रहे।

**डॉ० महावीर प्रसाद पोद्दार** :— प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र के वरिष्ठ चिकित्सक डॉ० महावीर प्रसाद पोद्दार महात्मा गांधी की प्रेरणा से प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में आए। ये आरोग्य मन्दिर गोरखपुर के संस्थापकों में से एक हैं।

**डॉ० विट्ठलदास मोदी** :— आप आरोग्य मन्दिर गोरखपुर (उत्तर प्रदेश) के संस्थापक व संचालक हैं तथा प्रसिद्ध (आरोग्य) मासिक पत्रिका के वरिष्ठ सम्पादक हैं।

**डॉ० ओंकार नाथः**— डॉ० ओंकार नाथ ने प्राकृतिक चिकित्सा के प्रचार—प्रसार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 1.2

1) प्राकृतिक चिकित्सा का उद्भव कब से माना गया है?

..................................................................................................................

..................................................................................................................

..................................................................................................................

2) किसी एक पाश्चात्य प्राकृतिक चिकित्सक का नाम बताइए।

..................................................................................................................

..................................................................................................................

..................................................................................................................

3) आधुनिक भारत में प्रथम प्राकृतिक चिकित्सक किस विशेषज्ञ को कहा गया है ?

..................................................................................................................

..................................................................................................................

..................................................................................................................

## 1.3 प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धान्त

प्राकृतिक चिकित्सा स्वस्थ जीवन बिताने की एक कला एवं विज्ञान है। यह ठोस सिद्धान्तों पर आधारित एक औषधिरहित रोग निवारक पद्धति है। प्राकृतिक चिकित्सा में स्वास्थ्य, रोग एवं चिकित्सा के अपने मौलिक सिद्धान्त हैं :

प्राकृतिक चिकित्सा के निम्नांकित मुख्य सिद्धान्त हैं :—

1. सभी रोग एक हैं, कारण भी एक हैं और उनका उपचार भी एक है;
2. रोग का कारण कीटाणु नहीं हैं;
3. तीव्र रोग शत्रु नहीं मित्र होते हैं;
4. प्रकृति स्वयं चिकित्सक है;
5. प्राकृतिक चिकित्सा रोग की नहीं अपितु रोगी के पूरे शरीर की जाती है;
6. प्राकृतिक चिकित्सा में रोग निदान की विशेष आवश्यकता नहीं;

7. जीर्ण रोगी के आरोग्य में समय लग सकता है;
8. प्राकृतिक चिकित्सा में दबे रोग उभरते हैं;
9. प्राकृतिक चिकित्सा में शरीर, मन व आत्मा की चिकित्सा की जाती है;
10. प्राकृतिक चिकित्सा में उत्तेजक औषधियों की आवश्यकता नहीं।

इनकी विस्तृत चर्चा अगली यूनिट में की गई है।

## 1.4 प्राकृतिक जीवन शैली की अवधारणा

प्राकृतिक चिकित्सा पांच महाभूतों पर आधारित चिकित्सा है। जिसमें आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा पृथ्वी तत्वों द्वारा चिकित्सा कर आधिदैविक, आधिभौतिक तथा आध्यात्मिक तापों का संतुलन किया जाता है। अतः यह केवल चिकित्सा ही नहीं बल्कि जीवन जीने की कला भी है। यदि हम इसके अनुसार जीवन यापन करते हैं तो शरीर के रोगी होने की कोई आशंका शेष नहीं रहती और यदि रोग हो भी जाये तो प्राकृतिक जीवन अपनाकर रोग से मुक्ति पायी जा सकती है। इसी कारण इसे चिकित्सा का नाम दे दिया गया है। हमें यह जानने का प्रयास करना चाहिए कि आखिर हम रोगी क्यों होते हैं ? यदि इस तथ्य पर गौर किया जाय तो हम यह जान पायेंगे कि हमारे रोगी होने का कारण है, प्रकृति के नियमों व सिद्धान्तों का उल्लंघन और यदि हम फिर से अपनी भूल सुधारते हुए उन नियमों का पालन करने लगते हैं तो फिर से अपनी पूर्वावस्था में आकर सुख भोगते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा हमें ऐसे नियमों का ज्ञान कराती है जिस ज्ञान को अन्य कोई चिकित्सा पद्धति नहीं कराती। इसके द्वारा रोग से मुक्ति तो एक अत्यन्त साधारण सी बात है। रोग मुक्ति के लिये तो इसका प्रयोग पशु भी करते हैं। वे जैसे ही बीमार पड़ते हैं सबसे पहले भोजन को त्यागकर उपवास द्वारा अपनी चिकित्सा स्वयं शुरू कर देते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा शरीर के साथ मन व आत्मा को भी निर्मल करती है।

## 1.5 प्राकृतिक चिकित्सा की आवश्यकता एवं महत्व

प्राकृतिक चिकित्सा एक महत्वपूर्ण चिकित्सा पद्धति है। आज पूरे भारत में साधारण व्यक्ति भी प्राकृतिक चिकित्सा के महत्व को समझने लगा है। देश और विदेशों में भी प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र खुल रहे हैं। जिससे प्राकृतिक चिकित्सा का दिनों दिन विकास हो रहा है। प्राकृतिक चिकित्सा को इस वर्तमान स्थिति में लाने का श्रेय उन महान विशेषज्ञों को प्राप्त है, जिन्होंने मान अपमान को सहन कर और कठिनाइयों को झेलते हुए इस चिकित्सा का प्रचार–प्रसार किया। आज पूरे विश्व में इस चिकित्सा पद्धति की आवश्यकता है। विशेष रूप से हमारे देश में, जहाँ लोग सीधे प्रकृति के साथ जुड़ सकते हैं और स्वस्थ रह सकते हैं।

वास्तव में प्राकृतिक चिकित्सा प्रणाली जीवन जीने की कला है। प्रकृति वह पथ है जिस पर चल कर कोई भी प्राणी जीवन की परिपूर्णता को, सच्चे आनन्द को प्राप्त कर सकता है। अतः प्राकृतिक चिकित्सा उस प्रणाली को कहते हैं जिस पर चलने से स्वास्थ्य की प्राप्ति होती है।

जंगल में रहने वाले जीवों के लिए कोई डाक्टर नहीं होता बल्कि प्रकृति ही उनकी रक्षक व चिकित्सक होती है जो बीमार पड़ने पर उनकी स्वयं चिकित्सा करती है। जब कोई जीव जैसे – हिरण, हिंसक पशुओं के आक्रमण से घायल हो जाता है और किसी तरह बच निकलता है तो वह जलाशय के कीचड़ में लेटकर जल व मिट्टी के सम्पर्क में आने से धीरे–धीरे स्वतः ठीक होने लगता है। वास्तव में यह प्रकृति की ही चिकित्सा है।

- आधुनिक चिकित्सा पद्धति में रोग का उपचार होने के कारण लोग प्रकृति से दूर जा रहे हैं। आधुनिक चिकित्सा के दुष्प्रभाव व दुष्परिणाम अधिक दिखने लगे हैं।
- प्राकृतिक चिकित्सा हमें प्रकृति की ओर ले जाती है, जिससे मनुष्य स्वस्थ निरोगी व दीर्घायु रह सकता है।
- बीमार पड़ने की स्थिति में यह चिकित्सा पद्धति सरल, आसानी से सुलभ है।

## 1.6 योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा में सम्बन्ध (Relation between Yoga and Naturpathy)

योग एवं प्राकृतिक चिकित्सा दोनों एक दूसरे के पूरक हैं तथा एक दूसरे के बिना अधूरे हैं। क्योंकि दोनों का उद्देश्य बिना किसी उत्तेजक औषधि का प्रयोग किये प्राकृतिक रूप से शरीर को स्वस्थ करना है। योग व प्राकृतिक चिकित्सा दोनों में ही शरीर को निर्मल व विष रहित करने पर जोर दिया जाता है। योग में जहाँ आसनों द्वारा नाड़ी कोष्ठों में जमा विजातीय द्रव्य को पिघला कर मल–मूत्र व पसीने के रूप में शरीर से बाहर निकालने के लिए अग्रसर किया जाता है, तो वहीं प्राकृतिक चिकित्सा द्वारा उस संचित विजातीय द्रव्य को एनीमा, कुंजल आदि क्रियाओं द्वारा बाहर निकाला जाता है। योग द्वारा जहाँ शरीर में आक्सीजन की मात्रा को बढ़ाकर कार्बन को कम किया जाता है वहीं प्राकृतिक चिकित्सा में आहार निर्धारण द्वारा शरीर को पुष्ट व निर्मल किया जाता है। योग आसन शरीर में ऊर्जा, लचक पैदा कर रक्त प्रवाह को अंग प्रत्यंग तक पहुँचाते हैं तो प्राकृतिक चिकित्सा उन अंगों को पुष्ट करने का कार्य करती है। जहाँ प्राकृतिक चिकित्सा स्थूल शरीर में जमा स्थूल विजातीय द्रव्यों को निकालने का कार्य करती है तो योग, ध्यान सूक्ष्म रूप से कलूषित विचारों के रूप में जमा दूषित विचारों को बाहर निकालने का कार्य करते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा शारीरिक स्वास्थ्य प्रदान करती है तो योग ध्यान मानसिक व आत्मिक स्वास्थ्य प्रदान करता है। अतः निष्कर्ष रूप से यह कहा जा सकता है कि योग विशुद्ध रूप से प्राकृतिक चिकित्सा का ही एक अभिन्न अंग है जिसे कदापि इससे अलग नहीं किया जा सकता।

**प्रकृति एवं जीवन की अनुरूपता ही स्वास्थ्य और प्रतिकूलता ही रोग है।**

टिप्पणी

''स्वास्थ्य, प्रकृति के सिद्धांतों के अनुरूप उन सभी तत्वों और शक्तियों का स्वाभाविक व लयबद्ध स्पन्दन है जो मानव अस्तित्व की शारीरिक, मानसिक व नैतिक तलों पर प्रत्येक व्यक्ति के अनुरूप जीवन की संरचना करते हैं।'' – डा० एच० लिण्डल्हार

## यूनिटगत प्रश्न 1.3

1) प्राकृतिक चिकित्सा के मुख्य रूप से कितने सिद्धांत हैं?

..............................................................................................................................

..............................................................................................................................

..............................................................................................................................

2) प्राकृतिक चिकित्सा कितने महाभूतों पर आधारित है?

..............................................................................................................................

..............................................................................................................................

..............................................................................................................................

3) सही एवं गलत बताइएः

(i) प्राकृतिक चिकित्सा रोग की नहीं अपितु रोगी की, की जाती है। ( )

(ii) प्राकृतिक चिकित्सा में रोग निदान की विशेष आवश्यकता होती है। ( )

(iii) जीर्ण रोगी के आरोग्य में समय नहीं लगता। ( )

(iv) प्राकृतिक चिकित्सा में दबे रोग उभरते हैं। ( )

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट में आपने सीखा कि –

1. प्रकृति स्वयं सबसे बड़ी चिकित्सक है। जबसे सृष्टि अस्तित्व में आयी, तभी से उसका सीधा सम्बन्ध प्रकृति के साथ रहा है। जो जीव सीधे प्रकृति के साथ उसके सान्निध्य में रहते हैं, प्रकृति उनकी स्वयं रक्षा करती है। पंच महाभूतों से निर्मित जीव की उत्पत्ति प्रकृति से ही होती है। उसका पोषण व संरक्षण भी प्रकृति द्वारा ही किया जाता है और अन्त में वह इस प्रकृति में ही विलीन हो जाता है।

2. जो जीव प्रकृति के जितने नजदीक रहते हुए प्रकृति के नियमों का पालन करता है वह उतना ही स्वस्थ व दीर्घ जीवी रहता है और प्रकृति दूर होते ही विभिन्न बीमारियां उसे घेर लेती हैं जिससे वह रोगी व अस्वस्थ हो जाता है।

3. प्राकृतिक चिकित्सा एक पुरातन चिकित्सा पद्धति है।
4. इस चिकित्सा पद्धति में प्रकृति द्वारा निर्मित पंच महाभूतात्मक शरीर का प्रकृति में उपलब्ध स्थूल पंचमहाभूतों द्वारा उपचार किया जाता है।
5. प्रकृति के सान्निध्य में रहकर निरोगी एवं दीर्घ जीवन प्राप्त किया जा सकता है।
6. यह चिकित्सा पद्धति सरल एवं आसानी से सुलभ है।

साथ ही हमने इसके उद्‍भव, इतिहास, आवश्यकता एवं महत्व को समझा।

टिप्पणी

## यूनिटांत प्रश्न

1. प्राकृतिक चिकित्सा से आप क्या समझते हैं? स्पष्ट कीजिए।
2. प्राकृतिक चिकित्सा के उद्‍भव एवं इतिहास पर प्रकाश डालिए।
3. प्राकृतिक जीवनशैली क्या है ? जीवन में इसका महत्व समझाइये।
4. प्राकृतिक चिकित्सा की आवश्यकता एवं उपयोगिता पर प्रकाश डालिये।
5. प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य में परस्पर संबंध का उल्लेख कीजिए।

## यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

### 1.1

1. प्रकृति पर आधारित चिकित्सा या प्रकृति द्वारा चिकित्सा।
2. प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति से रोग मिट जाने के साथ ही रोगी के लिए ऐसी जीवन पद्धति का आरम्भ होता है जिसमें पुनः रोग के लिए कोई गुंजाइश ही नहीं रहती।
3. आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी।

### 1.2

1. सृष्टि के साथ ही प्राकृतिक चिकित्सा का उद्‍भव हुआ है।
2. लुई कुने

टिप्पणी

3. राष्ट्रपिता महात्मा गांधी

## 1.3

1. दस
2. पांच
3. (i) सही

   (ii) गलत

   (iii) गलत

   (iv) सही

# 2

# प्राकृतिक चिकित्सा के मूलभूत सिद्धांत

मनुष्य प्रकृति का एक हिस्सा है। प्रकृति में निदान की अद्‌भुत सामग्री भरी पड़ी है। प्रकृति स्वयं अपना तथा समस्त जीवधारियों का पोषण करती है। प्राचीन लोगों को इसका परिज्ञान था। वे स्वयं को निरोग रखने के लिए सदैव प्रकृति से ही सामग्री लेते थे। मिट्‌टी, पानी, वनस्पति एवं वनौषधियां प्रकृति का अनोखा खजाना है जिससे मनुष्य शरीर और मन दोनों से विलक्षण रूप से स्वस्थ रह सकता है। इस पाठ के अंतर्गत हम प्राकृतिक चिकित्सा के मूलभूत सिद्धांत एवं प्राकृतिक जीवन शैली द्वारा स्वस्थ रहने की कला पर विस्तृत रूप से अध्ययन करेंगे।

## उद्देश्य

इस यूनिट का अध्ययन करने के पश्चात्‌ आपः

- प्राकृतिक चिकित्सा के अर्थ एवं परिभाषाओं को समझा सकेंगे;
- प्राकृतिक चिकित्सा के मूलभूत सिद्धांतों पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- प्राकृतिक चिकित्सा की विभिन्न विधियों का उल्लेख कर सकेंगे;
- प्राकृतिक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य में परस्पर संबंध समझा सकेंगे।

## 2.1 प्राकृतिक चिकित्सा का परिचय

प्राकृतिक चिकित्सा एक अति प्राचीन विज्ञान है। वेदों व अन्य प्राचीन ग्रंथों में हमें इसके अनेक संदर्भ मिलते हैं। विजातीय पदार्थ का सिद्धांत, जीवनी शक्ति संबंधी अवधारणा तथा

टिप्पणी

अन्य धारणायें, प्राचीन ग्रंथों में पहले से ही उपलब्ध हैं तथा इस बात की ओर संकेत करती हैं कि इन सिद्धांतों पर आधारित क्रियाएं प्राचीन भारत में बहुत प्रयोग में लायी जाती थीं।

जैसा कि आपने पिछली यूनिट में भी पढ़ा कि प्राकृतिक चिकित्सा का आधुनिक आंदोलन जर्मनी तथा अन्य पाश्चात्य देशों में 'जल चिकित्सा' के रूप में प्रारंभ हुआ। प्रारंभिक दिनों में जल चिकित्सा को ही प्राकृतिक चिकित्सा के रूप में जाना जाता था। जल चिकित्सा को विश्व प्रसिद्ध बनाने का श्रेय विन्सेट प्रिसनिज (1799–1851) को जाता है। बाद में अन्य लोगों ने भी इस कार्य में अपना योगदान दिया।

भारत में प्राकृतिक चिकित्सा के पुनरुत्थान की शुरूआत सन् 1894 के आसपास जर्मनी के लुई कूने की पुस्तक 'न्यू साइन्स ऑफ हीलिंग' के साथ हुई, जिसमें उन्होंने रोगों की एकरूपता का सिद्धांत प्रतिपादित किया तथा इस चिकित्सा प्रणाली को एक सैद्धान्तिक आधार प्रदान किया। इससे इस पद्धति के प्रचार–प्रसार को बहुत बढ़ावा मिला। एडोल्फ जस्ट की पुस्तक 'रिटर्न टू नेचर' से प्रभावित होकर गांधी जी प्राकृतिक चिकित्सा के प्रबल समर्थक बन गए। उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा के समर्थन में अनेक लेख लिखे, साथ ही स्वयं पर, अपने परिवार व आश्रमवासियों पर इसके अनेक प्रयोग भी किए। गांधी जी पुणे स्थित 'नेचर क्योर क्लिनिक' में सन् 1934 से 1944 के बीच जाया करते थे। उन्होंने प्राकृतिक चिकित्सा को अपने रचनात्मक कार्यों में सम्मिलित किया।

उनकी स्मृति को चिरस्थायी रखने के लिए भारत सरकार ने उस संस्थान पर 'राष्ट्रीय प्राकृतिक चिकित्सा संस्थान' की स्थापना की, जो आज भी उस स्थान में जन साधारण को प्राकृतिक चिकित्सा के क्षेत्र में अनेक सेवायें प्रदान कर रहा है।

आज प्राकृतिक चिकित्सा एक स्वतंत्र चिकित्सा पद्धति के रूप में सर्वमान्य है।

***''मेरा विश्वास है कि मनुष्य को दवाइयां लेने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं पड़नी चाहिए। हजार में से 999 मामले सुनियमित आहार, पानी तथा मिट्टी के उपचार और इसी तरह के प्राकृतिक उपायों से ठीक किए जा सकते हैं।''***

*महात्मा गांधी*

### प्राकृतिक चिकित्सा क्या है?

प्राकृतिक चिकित्सा उपचार की एक पद्धति है जो शरीर में उपस्थित उपचारात्मक ताकतों के द्वारा व्यक्ति को स्वस्थ रखने में सहायक है। यह मनुष्य के शरीर में रोग के कारण या विजातीय द्रव्य (टॉक्सिन) को हटाने में सहायता करती है अर्थात् रोग निवारण के लिए शरीर से अवांछनीय और उनुपयोगी पदार्थों को निष्कासित करती है। यह केवल एक चिकित्सा पद्धति ही नहीं अपितु जीवन जीने की कला है।

प्राकृतिक चिकित्सा व्यक्ति को उसके शारीरिक, मानसिक, नैतिक तथा आध्यात्मिक तलों पर प्रकृति के रचनात्मक सिद्धांतों के अनुकूल निर्मित करने की एक पद्धति है। इसमें स्वास्थ्य

संवर्धन, रोगों से बचाव व रोगों को ठीक करने के साथ ही आरोग्य प्रदान करने की अपूर्व क्षमता है।

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 2.1

1. प्राकृतिक चिकित्सा से आप क्या समझते हैं?

.......................................................................................................................

.......................................................................................................................

.......................................................................................................................

2. राष्ट्रीय नेताओं में प्राकृतिक चिकित्सा के मुख्य समर्थक का नाम बताइए।

.......................................................................................................................

.......................................................................................................................

.......................................................................................................................

3. भारत में प्राकृतिक चिकित्सा की शुरूआत किस विदेशी चिकित्सक द्वारा की गई?

.......................................................................................................................

.......................................................................................................................

.......................................................................................................................

## 2.2 प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धांत

प्राकृतिक चिकित्सा स्वस्थ जीवन जीने का विज्ञान है। यह ठोस सिद्धांतों पर आधारित एक औषधिरहित रोग निवारक पद्धति है। प्राकृतिक चिकित्सा में स्वास्थ्य, रोग एवं चिकित्सा के अपने मौलिक सिद्धांत हैं।

### 2.2.1 सभी रोग एक हैं, उनके कारण एक हैं और उनकी चिकित्सा भी एक है

प्राकृतिक चिकित्सा का प्रथम सिद्धांत है कि सभी रोग एक हैं, उनके कारण भिन्न –भिन्न नहीं, अपितु एक ही हैं और उनकी चिकित्सा भी एक ही है।

इस सिद्धांत पर आपको आश्चर्य हो रहा होगा कि ऐसा कैसे संभव है? किन्तु प्राकृतिक चिकित्सा में सत्यता यही है। जिस प्रकार एक सत्य वस्तु, विभिन्न रूपों में प्रकट होती है उदाहरण के लिए– जैसे स्वर्ण विभिन्न नामों, रूपों से प्रदर्शित होता है, ठीक उसी प्रकार प्राकृतिक चिकित्सा विज्ञान का यह सिद्धांत कि 'शरीर में रोग का कारण एक ही है' प्रतिपादित

टिप्पणी

चित्र 2.1: सभी रोग एक, उनके कारण एक, और उनकी चिकित्सा भी एक

होता है और वह है शरीर में विजातीय द्रव्य। ये विजातीय द्रव्य जिस अंग में एकत्र होने लगते हैं उसी अंग से संबंधित रोग के लक्षण दिखाई देने लगते हैं और हम उसे उसी अंग विशेष संबंधित रोग के नाम से जानते हैं। यदि शरीर में इस विजातीय द्रव्य को एकत्र ना होने दिया जाए तो यह स्पष्ट है कि हमारे शरीर में कोई रोग उत्पन्न नहीं होगा और हम स्वस्थ रहेंगे।

उपर्युक्त सिद्धांत के अनुसार यह स्पष्ट हो जाता है कि सभी रोगों के उत्पन्न होने का मूल कारण एक अर्थात् विजातीय द्रव्य है और इस विजातीय द्रव्य के निष्कासन की चिकित्सा भी एक है जिसे पंच तत्वों के माध्यम से किया जाता है। आइये इसे एक उदाहरण के द्वारा समझने का प्रयास करें। किसी घर में चार सदस्य हैं। दो सदस्य प्रतिदिन उत्तेजक पदार्थों का सेवन करते हैं; फास्ट फूड का सेवन करते हैं; बहुत अधिक मात्रा में इसी प्रकार का भोजन करते हैं। वे न व्यायाम करते हैं, न ही दिनचर्या का पालन करते हैं। परिणामस्वरूप उनका रक्त, विषाक्त होने लगता है और धीरे–धीरे शरीर, विजातीय द्रव्य से भरने लगता है, जिससे शरीर रोगी हो जाता है, और जिस अंग में ये विजातीय द्रव्य अधिक एकत्र हो जाते हैं, उस अंग विशेष से संबंधित रोग उत्पन्न हो जाता है। जैसे – दस्त आना, ज्वर आना, पाचन संबंधी समस्याएं, मोटापा, ब्लड प्रैशर, मधुमेह, हृदय संबंधी विकार आदि।

इसके विपरीत उसी परिवार के दो अन्य सदस्य, जो प्रकृति के अनुरूप, दिनचर्या का पालन करते हैं, संतुलित आहार का सेवन करते हैं, वे दोनों सदस्य स्वस्थ रहते हैं और दीर्घायु जीवन जीते हैं।

उपर्युक्त रोग देखने में भिन्न–भिन्न लगते हैं लेकिन ये सभी रोग एक ही हैं, इनका कारण एक है और चिकित्सा भी एक है।

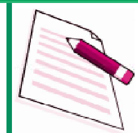

टिप्पणी

## 2.2.2 रोग का कारण कीटाणु नहीं

अभी आपने प्रथम सिद्धांत में जाना कि रोग का कारण, शरीर में विजातीय द्रव्यों का एकत्र होना है। परन्तु एलोपैथी चिकित्सा में रोगों का कारण, कीटाणु माना जाता है। किन्तु वास्तविकता ये है कि हमारे शरीर में सभी प्रकार के कीटाणु नहीं रह सकते। क्योंकि जहां साफ–सफाई रहती है, स्वच्छता होती है, सूर्य का प्रकाश व उचित मात्रा में वायु रहती है, वहां कीटाणु नहीं पनपते हैं। कीटाणु उस ही अवस्था में पनपते हैं जहां सर्वदा अपशिष्ट पदार्थ अर्थात् विजातीय द्रव्य उपस्थित रहते हैं।

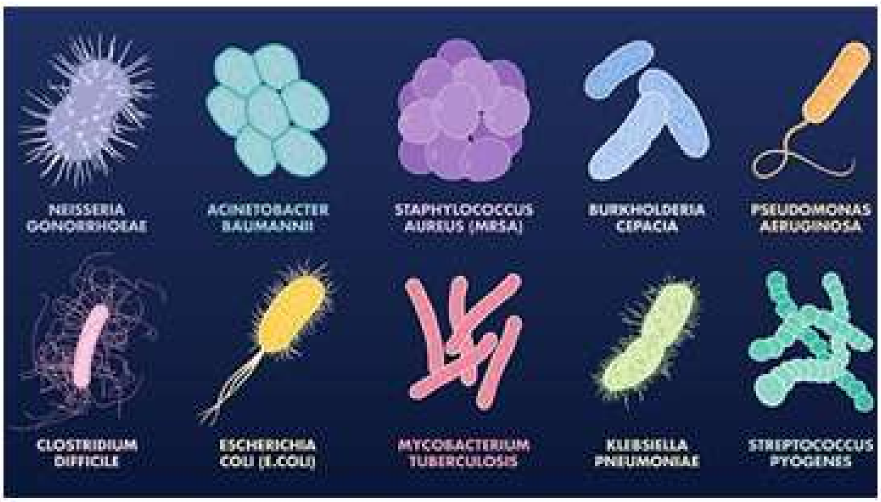


चित्र 2.2: रोग का कारण कीटाणु नहीं

उपर्युक्त तथ्य को इस आधार पर समझा जा सकता है कि, जब हम अनुपयुक्त आहार – विहार का सेवन करते हैं तो विजातीय द्रव्यों का स्तर बढ़ता जाता है और उसी विजातीय द्रव्य में कीटाणु पनपने लगते हैं। अर्थात् रोग के कीटाणुओं का अस्तित्व उन्हीं शरीरों में पनपता है जिनमें विजातीय द्रव्य उपस्थित होते हैं। इसके विपरीत यदि शरीर स्वच्छ है और स्वस्थ है तो कीटाणुओं के आक्रमण को, उसकी प्रतिरोधक क्षमता निष्क्रिय करती रहती है।

अतः यह स्पष्ट होता है कि शरीर में रोग का कारण कीटाणु नहीं हैं।

## 2.2.3 तीव्र रोग शत्रु नहीं, मित्र होते हैं

प्राकृतिक चिकित्सा का यह एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है कि मलों से भरे शरीर को मलरहित बनाने के लिए ज्वर, अतिसार, जुकाम आदि तीव्र रोग ही स्वास्थ्य के सच्चे मित्र हैं। हमारे शरीर में अनुपयुक्त आहार–विहार के कारण सदैव विजातीय द्रव्य बनते रहते हैं, जो साधारण मलों के साथ ही निकल जाते हैं। किन्तु जब कभी इस प्रक्रिया में बाधा आती है, तब शरीर, तीव्र रोगों के माध्यम से उन विषों को, शरीर से बाहर निकालने का प्रयास करता है।

टिप्पणी

चित्र 2.3: तीव्र रोग शत्रु नहीं, मित्र होते हैं

कहने का तात्पर्य यह है कि तीव्र रोग हमारे शरीर को स्वच्छ, निर्मल एवं स्वस्थ बनाने के लिए उत्पन्न होते हैं। उदाहरण के लिए, यदि हम बहुत अधिक गरिष्ठ, भारी और बासी भोजन खा लेते हैं तो कुछ समय के पश्चात् हमारी तबियत बिगड़ने लगती है। पेट में दर्द और उल्टी शुरू हो जाती है, और फिर दस्त होने लगते हैं। क्या आप जानते हैं कि ऐसा क्यों हुआ? ऐसा इसलिए हुआ, ताकि हमारा पाचन तंत्र स्वस्थ रह सके और जो विजातीय व विषाक्त द्रव्य एकत्र हो रहे थे, उन्हें शरीर से बाहर निकाला जा सके। जिन रोगों को हम तीव्र रोग समझते हैं, वे रोग नहीं अपितु रोगों की चिकित्सा हैं! रोगी होने की दशा में, हमें जानना चाहिए कि जिन गलतियों की वजह से हम रोगी हुए हैं, भविष्य में उन गलतियों को न दोहराएं।

अतः कहने का तात्पर्य यह है कि तीव्र रोगों से हमें डरना नहीं है बल्कि उनका स्वागत करना है, क्योंकि तीव्र रोग हमारे मित्र हैं, जबकि अन्य चिकित्सा पद्धतियों में रोग को शत्रु समझकर, उससे लड़ा जाता है।

## 2.2.4 प्रकृति स्वयं चिकित्सक है

सभी जीवधारियों का शरीर, प्रकृति के पंच तत्वों से मिलकर बना है। जब कभी इन तत्वों का संतुलन बिगड़ता है तो प्रकृति रोग उत्पन्न कर, स्वयं चिकित्सा का कार्य करती है और इस प्रकार उस रोग से मुक्त करके आरोग्यता प्रदान करती है।

चिकित्सा शक्ति हमारे शरीर के अन्दर ही विद्यमान है। यह वह अद्‌भुत शक्ति है जो हमें स्वस्थ बनाए रखती है। वास्तव में प्रत्येक प्राणी इस संसार में ऐसी शक्ति के साथ जन्म लेता है जो सदैव उसके स्वास्थ्य की रक्षा करती है। प्रकृति स्वयं चिकित्सक है – इस तथ्य को सिद्ध करने के लिए आप, दैनिक जीवन में प्रकृति द्वारा घटित निम्नांकित बिन्दुओं पर विचार करें –

चित्र 2.4: प्रकृति स्वयं चिकित्सक है

1. हड्डी फ्रैक्चर हो जाने या टूट जाने पर स्वयं कैसे जुड़ जाती है। चिकित्सक तो केवल उसे सीधा करके बांध देते हैं। लेकिन हड्डी जुड़ती स्वयं ही है।
2. घाव हो जाने पर, बिना चिकित्सा के वह कैसे भर जाता है। वन में वन्य जीव जब घायल हो जाते हैं तो वे धीरे–धीरे स्वतः ही ठीक हो जाते हैं।
3. पानी पीते समय, जब जरा सा भी पानी सांस नलिका में चला जाता है तो खांसी कैसे आने लगती है। खांसी इसलिए आती है ताकि उस पानी को खांसी के माध्यम से बाहर निकाला जा सके।

चित्र 2.5: हड्डी स्वयं जुड़ती है

कहने का तात्पर्य यह है कि प्रकृति अपने कार्य को स्वयं करती है और अपने अनुसार उसे स्वस्थ रखने के लिए, चिकित्सा भी करती है।

टिप्पणी

## 2.2.5 चिकित्सा रोग की नहीं अपितु पूरे शरीर की होती है

प्राकृतिक चिकित्सा का यह महत्वपूर्ण सिद्धांत है कि वह किसी विशेष रोग की ही चिकित्सा नहीं करती अपितु संपूर्ण शरीर की चिकित्सा करती है।

चित्र 2.6: चिकित्सा रोग की नहीं अपितु पूरे शरीर की होती है।

चिकित्सा की अन्य पद्धतियां रोगों की चिकित्सा पर ही केंद्रित रहती हैं और मुख्य रूप से लक्षणों के आधार पर चिकित्सा करती हैं। जबकि प्राकृतिक चिकित्सा अपनाने से समस्त शरीर की चिकित्सा हो जाती है और रोग स्वयं ही समाप्त हो जाते हैं। प्राकृतिक चिकित्सा में रोग का कारण शरीर में जमा विजातीय द्रव्य हैं, जिस अंग में ये अधिक जमा हो जाते हैं वहीं रोग के लक्षण दिखाई पड़ने लगते हैं। अतः इन विजातीय द्रव्यों को शरीर से बाहर निकालने के लिए पूरे शरीर की चिकित्सा करनी चाहिए।

## 2.2.6 रोग निदान की विशेष आवश्यकता नहीं

प्राकृतिक चिकित्सा का यह एक महत्वपपूर्ण सिद्धांत है। यह सिद्धांत स्पष्ट करता है कि किसी रोग के उत्पन्न हो जाने पर, उसके निदान की आवश्यकता नहीं है।

चित्र 2.7: रोग निदान की विशेष आवश्यकता नहीं।

अर्थात् जीव को स्वस्थ रखने के लिए, प्रकृति स्वयं ही रोग उत्पन्न कर, शरीर में एकत्र विजातीय द्रव्यों के निष्कासन का कार्य करती है और आरोग्य बनाती है। अतः यदि किसी को कोई रोग हो गया है तो उसे निदान कराने की विशेष आवश्यकता नहीं है। प्रकृति स्वयं ही रोग के निदान की दिशा में कार्य करती है।

अब आप समझ गये होंगे कि प्रकृति मां की तरह, अपनी गोद में प्रत्येक जीव का पालन करती है। जो प्रकृति से दूर रहते हैं, वे आरोग्यता शीघ्र प्राप्त नहीं कर पाते या फिर जल्दी–जल्दी रोगी होते रहते हैं। क्या कभी आपने इस पर विचार किया है कि वन में रहने वाले वन्य जीवों का चिकित्सक कौन है? जब वे रोगी होते हैं, या फिर किसी दुर्घटना के शिकार होते हैं, या घायल हो जाते हैं, तो उनकी चिकित्सा प्रकृति ही करती है।

जब किसी जानवर या कुत्ते को अपच हो जाती है तो वे सबसे पहले अपना खाना बन्द कर देते हैं और दो–तीन दिन में स्वतः ही स्वस्थ हो जाते हैं। यह वास्तव में उपवास है। जीव–जंतु अपनी छोटी–बड़ी चोट तथा रोग जल स्रोतों से और कीचड़ अर्थात् मिट्टी चिकित्सा से ठीक कर लेते हैं। इसकी विस्तृत जानकारी आप आगे पढ़ेंगे।

### 2.2.7 जीर्ण रोगों के ठीक होने में समय लगता है

प्राकृतिक चिकित्सा का यह भी एक महत्वपूर्ण सिद्धांत है। जिस प्रकार प्रकृति में प्राकृतिक क्रियाएं धीरे–धीरे होती हैं, उसी प्रकार उन रोगों को ठीक होने में समय लगता है जो जीर्ण हैं और काफी लंबे समय से चले आ रहे हैं।

**चित्र 2.8: जीर्ण रोगों के ठीक होने में समय लगता है।**

एक बार किसी विरोधी ने डा.लिण्डहार पर आरोप लगाया कि प्राकृतिक चिकित्सा रोगों को ठीक करने में बहुत समय लेती है। इस प्रश्न का डॉ. लिण्डहार ने तुरन्त, बड़ा ही आश्चर्य जनक उत्तर दिया कि 'यह एक भ्रम है कि प्राकृतिक चिकित्सा रोगों को ठीक करने में बहुत समय लेती है किन्तु वास्तविकता यह है कि हमारे पास वे असाध्य रोगी, चिकित्सा के लिए तब आते हैं जब अन्य प्रचलित चिकित्सा पद्धतियों से वे निराश हो चुके होते हैं। यदि रोगी,

रोग शुरू होने के पहले या तुरन्त बाद आ जाए, तो निश्चित रूप से यह चिकित्सा सबसे पहले स्वस्थ करने वाली चिकित्सा है।

डा. लिण्डहार ने स्पष्ट किया कि जब दूसरी चिकित्साओं से निराश होकर असाध्य रोगी हमारे पास चिकित्सा के लिए आता है, तो प्राकृतिक चिकित्सा को न केवल रोग का उपचार करना पड़ता है बल्कि उसे दूसरी दवाओं से शरीर में बने विष को भी बाहर निकालना पड़ता है, जिससे लम्बा समय लग जाता है।

**कुछ अन्य कारण भी हैं जिनकी वजह से रोगी को ठीक होने में समय लगता है जैसे –**

1. **चिकित्सा कराते–कराते बीच में ही चिकित्सा छोड़ देना और पुनः शुरू कर देना।**
2. **रोगी की अधिक समय तक चिकित्सा लेने में असमर्थता।**
3. **रोगी का धैर्य जबाव दे जाए, और वह नकारात्मक सोच रखें कि मैं ठीक नहीं हो सकता।**
4. **जब रोगी की जीवनी शक्ति बहुत कम हो जाए तो इसमें कोई संदेह नहीं कि, पीड़ित रोगी का धैर्य, रोग से होने वाले कष्ट के कारण, बहुत जल्द टूट जाता है। शीघ्र ठीक न हो पाने के कारण, उसका मन विचलित हो जाता है। अतः उसे धैर्य बंधाना चाहिए और चिकित्सा भी निरन्तर जारी रखनी चाहिए क्योंकि विभिन्न दवाओं का सारी नस–नाड़ियों में भरा विष शरीर से बाहर निकालने और आरोग्यता प्रदान करने में समय लगता है।**

## 2.2.8 प्राकृतिक चिकित्सा में दबे रोग उभरते हैं

आज जब लोग बीमार हो जाते हैं तो वे तुरन्त दवा लेते हैं और दवा रोग को दबाने का कार्य करती है। अर्थात् रोग दब जाते हैं और हम सोचते हैं कि हम स्वस्थ हो गये। किन्तु ये दबे रोग या विजातीय द्रव्य तब प्रकट हो जाते हैं जब प्राकृतिक चिकित्सा दी जाती है।

आइये उपर्युक्त सिद्धांत को इस प्रकार समझें –

औषधि चिकित्सा रोग को समाप्त नहीं करती बल्कि रोग के लक्षणों को समाप्त कर देती है, जिससे ऐसा लगता है कि रोग समाप्त हो गया परन्तु वास्तविकता ये है कि इस प्रकार रोग दब जाता है और जब प्राकृतिक चिकित्सा शुरू होती है तो ये दबे हुए रोग उभरने लगते हैं।

रोग उभरने की क्रिया भी बड़ी विलक्षण क्रिया है। इसमें जो रोग दबे होते हैं, वे उस क्रम के उल्टे क्रम में उभरते हैं और एक–एक करके पूरी तरह नष्ट होते जाते हैं। साथ ही आप यह जानकर आश्चर्य करेंगे कि दो रोगों के बीच उभरने का जो समय अन्तराल होता है, वह 7 से भाग देने वाला कोई अंक जैसे 7, 14, 21 आदि होता है।

टिप्पणी

उदाहरण के तौर पर आप इसे ऐसे समझ सकते हैं, जैसे –

- रोगी को पहले दस्त हुए, वह दवा से दब गये।
- दर्द हुआ वह भी दवा से दब गया।
- ज्वर हुआ वह भी दब गया। अब जब प्राकृतिक चिकित्सा की जाती है तो रोग उभरने का क्रम इस प्रकार होता है –
- सर्वप्रथम 7 से 14 दिन में ज्वर और फिर समाप्त हो जाता है।
- इसके 7 से 14 या 21 दिन के बाद दर्द उभरता है और फिर चला जाता है।
- अन्त में दस्त का रोग उभरता है फिर रोगी को निरोगी करके चला जाता है। इस सिद्धांत में अपवाद हो सकते हैं। मगर अधिकांशतः ऐसा ही देखने को मिलता है।

## 2.2.9 मन, शरीर तथा आत्मा तीनों की चिकित्सा एक साथ होती है

पूर्ण स्वास्थ्य से तात्पर्य मन, शरीर तथा आत्मा के स्वस्थ एवं प्रसन्नचित्त होने से है। प्राकृतिक चिकित्सा एक ऐसी चिकित्सा है जिसमें केवल शरीर की ही नहीं अपितु मन और आत्मा की भी चिकित्सा की जाती है।

यह सत्य है कि शरीर, मन और आत्मा तीनों एक दूसरे से जुड़े हुए हैं। यदि शरीर रोगग्रस्त होता है और ठीक होने में समय लग जाता है, तो मन खिन्न यानि दुःखी हो जाता है और जब मन दुःखी होता है तो आत्मा भी दुःखी हो जाती है। इस प्रकार तीनों का परस्पर संबंध है।

चित्र 2.9: मन शरीर तथा आत्मा तीनों की चिकित्सा एक साथ होती है

प्राकृतिक चिकित्सा में शारीरिक स्वास्थ्य से अधिक, मानसिक स्वास्थ्य को महत्व दिया जाता है तथा आत्मिक बल का स्थान, इन दोनों में श्रेष्ठ है। यदि व्यक्ति का आत्मिक बल अच्छा है, तो वह दृढ़ इच्छा शक्ति से स्वयं को शीघ्र आरोग्य कर लेता है।

टिप्पणी

प्राकृतिक चिकित्सा में इसीलिए शरीर के साथ–साथ मन को भी स्वस्थ रखने की चिकित्सा दी जाती है जिससे मन और आत्मा प्रसन्न रह सकें और पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त हो सके।

उदाहरण के लिए, यदि किसी मनुष्य को कोई शारीरिक रोग है और प्राकृतिक चिकित्सा में उसकी चिकित्सा शुरू होती है तो मन को प्रसन्नचित्त रखने के लिए रूचि के अनुसार भजन, सत्संग स्वाध्याय, आध्यात्म में लगा दिया जाता है। इससे मन प्रसन्न रहने लगता है। शारीरिक रोग में, शीघ्र सुधार होने लगता है। प्राण शक्ति या जीवनी शक्ति बढ़ने लगती है और वह शीघ्र आरोग्यता को प्राप्त कर लेता है।

प्राकृतिक चिकित्सक महात्मा गांधी, स्वयं रोगियों को ईश्वरीय प्रार्थना और राम नाम की अचूक रामबाण चिकित्सा दिया करते थे। यह वास्तव में सत्य है कि यदि आप प्राकृतिक दर्शन को समझें, तो परस्पर प्रेम, हृदय में दया और करुणा परहित आदि के भाव होंगे और यह हमारी धरा स्वर्ग से भी सुन्दर होगी।

### 2.2.10 प्राकृतिक चिकित्सा में उत्तेजक दवाओं का प्रश्न ही नहीं है

औषधि चिकित्सा प्रणाली का यह सिद्धांत है कि, रोग हमारे शरीर पर आक्रमण करने वाला, हमारा घोर शत्रु एवं बाह्य द्रव्य है। इसीलिए शक्तिशाली साधनों का उपयोग करते हुए, हमें उससे लड़ना चाहिए और हराना चाहिए। इसी सिद्धांत के अनुसार चिकित्सक रोगों से लड़ने के लिए विषैली दवाओं, जैसे संखिया, पारा, अफीम आदि का उपयोग करते हैं। मगर विष तो विष है और यह विष, पूरे शरीर में एकत्र होता जाता है, जो घातक होता है।

प्राकृतिक चिकित्सा का सिद्धांत बिल्कुल विपरीत है। इसमें औषधियों का उपयोग अनावश्यक ही नहीं बल्कि घातक समझा जाता है। रोग को बाह्य द्रव्य नहीं प्राकृतिक साधनों से ठीक किया जाता है। शरीर की जो शक्ति हमें उत्तम स्वास्थ्य प्रदान करती है वही शक्ति हमें रोगों से भी मुक्ति दिलाने का कार्य करती है। यहां आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि हमारा शरीर सदैव अपने अन्दर अनावश्यक रूप से उत्पन्न दुर्द्रव्यों को जल्द से जल्द शरीर से बाहर निकालने का प्रयास करता है, क्योंकि ये अनावश्यक रूप से उत्पन्न दुर्द्रव्य शरीर के लिए अत्यंत हानिकारक होते हैं और रोग उत्पन्न करते हैं।

आप चौथा सिद्धांत भी पढ़ चुके हैं, जिसमें स्पष्ट किया गया है कि 'प्रकृति स्वयं चिकित्सक है' अर्थात् रोगों से मुक्ति प्रकृति देती है, दवा नहीं। औषधि तो प्रकृति द्वारा मरम्मत के कार्य में लगाई जाती है, जो शरीर के अन्दर अनेक अवयवों के गठन में, क्रियाओं में और विजातीय द्रव्यों के निष्कासन में प्रयोग की जा सकती है। औषधि की सही परिभाषा यही है। उक्त परिभाषा के अनुसार वे सभी पदार्थ जो प्राणशक्ति से भरपूर हैं वे औषधि कहलाते हैं। लेकिन यह ध्यान रहे कि ये पहले खाद्य पदार्थ हैं उसके बाद ये औषधि हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा में काष्ठ औषधियां दी जाती हैं, जो ताजी, उत्तेजना रहित, अकेली या सजातीय होती हैं। सजातीय में भी दो या तीन से अधिक नहीं होती हैं। मात्रा भी कम और

टिप्पणी

रोग के अनुकूल दी जाती है। ये सभी खाद्य उपचार औषधियां ही हैं, जो मानव के भोजन का ही भाग होती हैं।

## 2.3 प्राकृतिक चिकित्सा की विभिन्न विधियाँ

हमने प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धांत समझे, आइये अब ये जानें कि, प्राकृतिक चिकित्सा की विभिन्न विधियां कौन–कौन सी हैं?

प्राकृतिक चिकित्सा स्वस्थ रहने का विज्ञान है। यह हमें सिखाती है कि हमारी जीवन शैली कैसी होनी चाहिए, हमें किस प्रकार रहना चाहिए, क्या खाना चाहिए और हमारी दिनचर्या कैसी होनी चाहिए। प्राकृतिक चिकित्सा के नियम न केवल हमें रोगों से मुक्ति दिलाने में सहायक होते हैं बल्कि इनका समुचित और नियमित पालन करने पर स्वास्थ्य उत्तम, सशक्त एवं प्रभावपूर्ण बन जाता है। इसका मूल उद्देश्य लोगों की रहन–सहन की आदतों में थोड़ा–सा परिवर्तन कर उन्हें स्वस्थ जीवन जीना सिखाना है। प्राकृतिक चिकित्सा की विभिन्न विधियां इस उद्देश्य की पूर्ति में बहुत सहायक हैं।

मनुष्य के शरीर में स्वयं को रोग–मुक्त करने की अपूर्व शक्ति है। यह पांच तत्वों (पंच महाभूतों) से बना है, जिनका असंतुलन ही रोगों का कारण है। इन्हीं पंच तत्वों मिट्टी, पानी, सूर्य, हवा और आकाश द्वारा रोगों की चिकित्सा प्राकृतिक चिकित्सा कहलाती है।

### क. आहार चिकित्सा

औषधि जनक हिपोक्रेट्स ने आहार के संबंध में कहा है 'आहार ही औषधि है औषधि ही आहार है।' "Let food be your medicine and let medicine be your food."

प्राकृतिक चिकित्सा के अनुसार आहार को उसके प्राकृतिक रूप में ही लिया जाना चाहिए। अतः अंकुरित आहार, मौसम के ताजे फल तथा ताजी हरी पत्तेदार सब्जियां इस दृष्टि से उपयुक्त हैं।

क्षारीय होने के कारण ये आहार स्वास्थ्य को उन्नत करने, शरीर का शुद्धीकरण कर रोगों से मुक्त करने तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक होते हैं। स्वस्थ रहने के लिए हमारा भोजन 20 प्रतिशत अम्लीय और 80 प्रतिशत क्षारीय होना चाहिए।

**प्राकृतिक चिकित्सा में आहार को ही मूलभूत औषधि माना जाता है।**

### ख. जल चिकित्सा

जल रोगों एवं व्याधियों को दूर करने एवं हमें शक्ति प्रदान करने वाला है। स्वच्छ एवं शीतल जल से अच्छी तरह स्नान करना जल चिकित्सा का एक उत्कृष्ट रूप है। जल चिकित्सा का प्रयोग मुख्यतः स्वस्थ रहने के साथ–साथ विभिन्न रोगों के निवारणार्थ किया जाता है।

टिप्पणी

### ग. मिट्टी चिकित्सा

मिट्टी प्रकृति के पांच तत्वों में से एक तत्व है जो शरीर के स्वास्थ्य एवं बीमारी दोनों ही अवस्थाओं में लाभकारी है। प्राकृतिक चिकित्सा में इसे सुविधापूर्वक एक उपचार की तरह प्रयोग में लाया जाता है।

### घ. सूर्य किरण चिकित्सा

सात रंगों से बनी सूर्य की किरणों के अलग–अलग चिकित्सकीय महत्व हैं। ये रंग हैं – बैंगनी, नीला, आसमानी, हरा, पीला, नारंगी तथा लाल (VIBGYOR)। स्वस्थ रहने तथा विभिन्न रोगों के उपचार में ये रंग प्रभावी ढंग से कार्य करते हैं। सूर्य किरण चिकित्सा की सरल विधियां स्वास्थ्य सुधार की प्रक्रिया में प्रभावी तरीके से मदद करती हैं।

### ङ. मालिश चिकित्सा

मालिश चिकित्सा भी प्राकृतिक चिकित्सा की एक विधि है जो स्वस्थ रहने के लिए आवश्यक है। इसका प्रयोग अंग–प्रत्यंगों को पुष्ट करते हुए शरीर के रक्त संचार को उन्नत करने में होता है।

इसके अतिरिक्त उपवास चिकित्सा, वायु चिकित्सा (शुद्ध हवा में वायु स्नान) एक्यूप्रेशर आदि भी प्राकृतिक चिकित्सा की विभिन्न विधियां हैं।

## यूनिटगत प्रश्न 2.2

1. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए –**

   क. प्राकृतिक चिकित्सा की दृष्टि में रोग का मूल कारण शरीर में ........................ का संचित होना है।

   ख. हिपोक्रेट्स के अनुसार ........................................................................................ ही औषधि है।

   ग. शरीर में विद्यमान पांच तत्व हैं – मिट्टी, पानी, सूर्य, हवा और .............................. ................................................ ।

   घ. ........................................................................................... स्वयं सबसे बड़ी चिकित्सक है।

   ङ. प्राकृतिक चिकित्सा का मूल उद्देश्य लोगों की .................................................... . ....................................................की आदतों में परिवर्तन कर उन्हें स्वस्थ जीवन जीना सिखाना है।

## 2.4 स्वास्थ्य एवं प्राकृतिक चिकित्सा में संबंध

स्वास्थ्य का अभिप्राय केवल इतना ही नहीं है कि हम शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा से मुक्त रहें बल्कि हमारी जीवनी शक्ति इतनी सशक्त हो कि वह निरंतर संतुलित कार्य संपादन करती रहे। हमारे जीवन के क्षण–क्षण में हमारे अंदर उत्साह एवं आशा का स्रोत निरंतर झरता रहे। इसके अतिरिक्त हमारे अंदर दृढ़ता, आत्म–निर्भरता, सहजबुद्धि, स्वयं निर्णय की शक्ति, स्वयं चेतना शक्ति, धारणा शक्ति एवं जीवन का कोई निश्चित उद्‌देश्य होना भी अनिवार्य है।

इस प्रकार का स्वास्थ्य हमें माँ प्रकृति की शरण में जाकर, उसके आदर्श नियमों पर चलकर ही प्राप्त हो सकता है।

हमारे अंदर की प्राकृतिक जीवनी–शक्ति एवं प्रकृति के नियमों के उल्लंघन के बीच जब संघर्ष आरंभ होता है तो शरीर के कोश बड़ी तेजी से टूटते एवं घिसते हैं और उससे पैदा हुई गंदगी रक्त में मिल जाती है। जब उस गंदगी का निष्कासन पूर्ण रूप से समय पर नहीं हो पाता है तो तन–मन गिरने लगता है और वहीं से जीवन में असंतुलन पैदा होकर रोग उत्पन्न होते हैं। हमारे अंदर इस प्रकार होने वाले संघर्ष का ही प्रतिफल रोग एवं रोग के लक्षण हैं।

प्रकृति का नियमोल्लंघन ही रोगों का मूल कारण है। स्वास्थ्य का भी कारण एक ही है। हमारे अंदर शारीरिक एवं मानसिक कार्य में सामंजस्य तथा जिन तत्वों से शरीर की रचना हुई है उन तत्वों की परस्पर अनुरूपता ही स्वास्थ्य है जब हम तन–मन से पूर्ण स्वस्थ रहते हैं तो हममें हर प्रकार की पूर्णता एवं निरंतर विकास की अनुभूति होती है।

जब तक मनुष्य, पशु–पक्षी आदि प्रकृति के नियमों का पालन करते हुए जीवन अस्तित्व के मौलिक सिद्धांत को मानकर चलते हैं, तब तक उनके जीवन में विकास एवं पूर्णता का संचार होता है। इस प्रकार जीवन के इन अंगों के पूर्ण रूप से विकसित होने पर ही सच्चा स्वास्थ्य प्राप्त कर जीवन में आनंद उठा सकते हैं। तब जीवन भार स्वरूप नहीं, आनंद–स्रोत बन जाता है।

**प्रकृति एवं जीवन की अनुरूपता ही स्वास्थ्य और प्रतिकूलता ही रोग है।**

## 2.5 पंच महाभूत सिद्धांत

जिस प्रकार हमारे शरीर की रचना कोश, मांसपेशी, हड्डी, त्वचा, रक्त एवं स्नायु–मंडल आदि के मिश्रण से हुई है, उसी प्रकार प्रकृति की रचना भी मिट्टी, जल, वायु, सूर्य–रश्मियों और आकाश से हुई है। इन तत्वों के संतुलित मिश्रण के बिना प्रकृति में प्राणी एवं वनस्पति का वृद्धि–विकास एवं जीवित रह पाना कठिन ही नहीं असंभव है।

टिप्पणी

*गोस्वामी तुलसीदास जी ने भी कहा है कि –*

*"क्षिति जल पावक गगन समीरा,*
*पंच रचित अति अधम सरीरा।*

इससे स्पष्ट है कि प्रकृति में पांच तत्व – आकाश, वायु, अग्नि, जल एवं पृथ्वी पाये जाते हैं और इन पांचों के योग से शरीर में जीव आगमन हुआ और इसी प्रकार 'यथापिंडे तथा ब्रह्माण्डे' सिद्धांत के अनुसार प्रकृति में पाये जाने वाले पांचों तत्व हमारे शरीर में भी पाये जाते हैं। इन सभी तत्वों का हमारे शरीर में संतुलन रहने पर जीवात्मा हमारे अंदर निवास करती है। संतुलन बिगड़ने पर रोग होता है और अधिक बिगड़ने पर जीवात्मा इस जीर्ण शीर्ण मकान रूपी शरीर को त्याग देती है। अतः इसका संतुलन कायम रखने एवं जीव के निवास योग्य बनाये रखने के लिए शरीर संस्थान एवं तत्वों के संबंध को जान लेना आवश्यक है, ताकि आपके अंदर जब किसी तत्व का अभाव प्रतीत हो और फलस्वरूप उस संस्थान विशेष में दोष उत्पन्न हो तो आप उसकी पूर्ति करके उसे दूर करने का प्रयत्न कर सकें। जिससे आपका शरीर स्वस्थ तथा आप दीर्घजीवी हो सकें। क्योंकि जीवात्मा ही तो जीवन है और इस बात से आप इंकार नहीं कर सकते कि प्रत्येक प्राणी अच्छे मकान में रहना चाहता है और टूटे फूटे मकान को या तो छोड़ देता है या मरम्मत करवाता है या अपने लिए नया मकान बनवाता है। यही नियम जीवात्मा पर भी लागू होता है।

**तालिका 2.1: पंचतत्वों की शरीर में स्थिति**

| तत्व विशेष | शरीर के विभिन्न संस्थान/अंग | तत्व विशेष प्राप्ति के सामान्य साधन |
|---|---|---|
| आकाश | कोश | उपवास, योग, फलाहार, मिताहार आदि |
| वायु | त्वचा एवं फेफड़े | वायु स्नान, गहरी सांस लेना, प्राणायाम, खुली वायु में रहना |
| सूर्य | स्नायु | सूर्य स्नान (किन्तु तेज धूप में नहीं) सूर्य किरणों में पके हुए फल और अनाज |
| जल | रक्त | जल चिकित्सा, बाहरी स्नान, फल सब्जियों का रस एवं जल पीना |
| पृथ्वी | हड्डी | धरती से उत्पन्न सजीव प्राकृतिक लवण प्रधान खाद्य एवं मिट्टी के विभिन्न व्यवहार |

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 2.3

1. प्रकृति में पांच तत्व कौन—कौन से हैं?

   ........................................................................................................................

   ........................................................................................................................

   ........................................................................................................................

2. वायु का शरीर के किस अंग से संबंध है?

   ........................................................................................................................

   ........................................................................................................................

   ........................................................................................................................

3. पंच तत्वों में से ऐसा कौन—सा तत्व है जिसमें शेष सभी तत्व विद्यमान हैं?

   ........................................................................................................................

   ........................................................................................................................

   ........................................................................................................................

## 2.5.1 प्रकृति एवं शरीर के तत्वों पर तुलनात्मक विचार

**आकाश**

आकाश तत्व पंच महाभूत तत्वों में सबसे अधिक उपयोगी तत्व है। यह समस्त पंच महातत्वों का मूल तत्व है। यह सबसे सूक्ष्म होता है। शरीर में खाली स्थान व खाली अवयव आकाश तत्व के द्योतक हैं। हमारा शरीर असंख्य कोशों (cells) से बना है तथा प्रत्येक कोश एवं उसके बीच अवकाश (खाली स्थान) है, उसी प्रकार प्रकृति में प्रत्येक अणु (atom) व उसके बीच आकाश है। अतः हमारे शरीर में कोशों का वही स्थान है जो प्रकृति में अणु का और इन दोनों के लिए आकाश तत्व अनिवार्य है। इसके बिना अणु एवं कोश दोनों मृतक हैं।

आकाश तत्व की प्रधानता के लिए कोशों का शोधन करना चाहिए और कोशों की शुद्धि के लिए उपवास, मिताहार, फलाहार, राज योग, हठयोग व खुले में निवास करना चाहिए। प्रकृति में भी उपवास पतझड़ के रूप में आता है और धरती को खूब धूप देने के बाद जल देने पर, आकाश तत्व की वृद्धि होती है और पौधों में नई—नई कोपलें नवजीवन लेकर आती हैं।

टिप्पणी

आकाश तत्व के बिना एक क्षण जीवित रहना कठिन ही नहीं असंभव है क्योंकि जहाँ आकाश तत्व नहीं वहाँ संचार असंभव है और जहाँ संचार नहीं, वहाँ प्राण नहीं। आकाश का गुण तत्व 'शब्द' है।

## वायु

प्रकृति जीवन रक्षा के लिए प्रचुर मात्रा में वायु प्रदान करती है। वायु तत्व पंच तत्वों में दूसरा आवश्यक तत्व है। जब किसी स्थान विशेष में शुद्ध वायु का अभाव होता है तब वहाँ के वृक्षों की कली खिलने की बजाय मुरझाने लगती है, पक्षियों के चहचहाने में मधुरता नहीं, कर्कशता का आभास होता है और प्राणी मात्र का दम घुटने लगता है तथा वे अपने अन्तिम क्षण की प्रतीक्षा बड़ी ही व्याकुलता एवं अधीरता से करते हैं। ठीक उसी प्रकार जब हमारे अन्दर एवं बाहर शुद्ध वायु का अभाव होता है तो हममें भी उत्साह, प्रसन्नता एवं साहस का अभाव होता है और हम भी अपने अन्तिम क्षण की प्रतीक्षा करते हैं और इसलिए तो मृत्यु के बाद यह कहा जाता है कि ''उसने अपनी अंतिम सांस ली''। हमारे शरीर में त्वचा एवं फेफड़ों, जिनके माध्यम से हम शुद्ध वायु धारण करते हैं, का वही स्थान है जो प्रकृति में वायु का। शुद्ध वायु द्वारा तन–मन में स्फूर्ति,उत्साह एवं ताजगी का संचार होता है तथा जीवनोपयोगी, प्राणशक्ति तत्व ऑक्सीजन प्राप्त होती है। इसके अभाव में मनुष्य ही नहीं विश्व के किसी भी प्राणी का कुछ मिनट भी जीना असम्भव है। वायु को यदि हम जीवन कहें तो अतिश्योक्ति न होगी क्योंकि प्राचीन काल में योगीजन वायु भक्षण की कला जानकर आनंदमय दीर्घ जीवन व्यतीत करते थे। आज भी भक्षण की वह कला 'प्राणायाम' के रूप में हमारे बीच विद्यमान है। इस क्रिया की सिद्धि के बाद वर्षों तक बिना किसी प्रकार के खाद्य के प्राणी जीवित रह सकता है। **वायु का गुण 'स्पर्श' है अतः वायु में शब्द और स्पर्श गुण का समावेश है।**

## अग्नि (सूर्य)

सूर्य से प्राप्त ऊर्जा जीवनी शक्ति को बढ़ाती है, स्नायु–दुर्बलता दूर करती है, मांसपेशियों को सुदृढ़ करती है। यह तो हम सभी जानते हैं कि हमारे शरीर में स्नायु संस्थान का कितना महत्वपूर्ण स्थान है क्योंकि इसके नियंत्रण में ही हमारा शरीर कार्य करता है। यह स्थान प्रकृति में सूर्य रश्मियों का भी है। जिस प्रकार अनेक आवश्यक तत्वों की उपस्थिति के बावजूद सूर्य रश्मियों के अभाव में धरती माता पर वृक्ष, पशु–पक्षी एवं संपूर्ण प्राणी मात्र तेजहीन एवं विकासहीन तथा निष्क्रिय एवं मुरझाकर निर्जीव हो जाते हैं और जीते जी उनकी अवस्था मृतक के समान हो जाती है, ठीक उसी प्रकार जब हमारे अंदर स्नायु–स्फूर्ति का अभाव होता है तो हमारी भी दशा मृतक से कम नहीं होती, इसलिए स्नायु को सशक्त बनाना आवश्यक है। अतः सर्वप्रथम स्नायु केन्द्र रीढ़ पर धूप ली जाती है ताकि उसके माध्यम से संपूर्ण शरीर को लाभ मिल सके। सूर्य रश्मियों के आते ही संपूर्ण प्राणी जगत व पेड़–पौधों में नव–जीवन का संचार होता है। पशु–पक्षी छलांगे मारने लगते हैं, वृक्षों की डालियां मस्त एवं सशक्त होकर झूमने लगती हैं तथा उनमें सुंदर पुष्प खिलकर मुस्कराने लगते हैं। ऐसा प्रतीत होता है मानों प्रत्येक वर्ग रात की नींद पूरी करके प्रातः दूनी स्फूर्ति, उत्साह एवं आशा को लेकर सूर्य रश्मियों को धारण करने के लिए उसके निकलने के पूर्व ही उठ गया है और

टिप्पणी

इसीलिए सूर्य निकलने से पहले उठने का विधान है ताकि वह जीवन से **ओत–प्रोत प्रातःकालिक** किरणों से वंचित न रह सके। अग्नि का गुण 'रूप' है, अतः अग्नि में शब्द, स्पर्श एवं रूप का समावेश है।

**जल**

मानव शरीर का दो तिहाई भाग पानी ही है। प्राणियों को जीवित रखना, वस्तुओं को गीला करना, तृप्त करना, प्यास बुझाना, पदार्थों को मृदु कर देना, ताप की निवृत्ति करना, सब प्रकार की स्वच्छता प्रदान करना– ये सभी जल की वृत्तियाँ हैं। प्रकृति एक छोर की वस्तुएं दूसरे छोर एवं चारों तरफ जल द्वारा पहुँचाती है। जब नदी पहाड़ से निकलती है तो अपने साथ वहाँ की मिट्टी तथा अपने मार्ग की आवश्यक/अनेक वस्तुएँ अपने प्रांगण में बिखेरती हुई जल निधि (समुद्र) में मिल जाती है, ठीक उसी प्रकार हमारे शरीर के अंदर रक्त संचार के माध्यम से एक हिस्से का तत्व दूसरे हिस्से में पहुँचाया जाता है। हम जो भोजन करते हैं उसका पचा हुआ रस, रक्त द्वारा शरीर के प्रत्येक अवयव ही नहीं प्रत्येक कोश में पहुँचाया जाता है जो वहाँ के तंतुओं को स्वस्थ एवं सजीव बनाता है। पेड़–पौधों में भी जल पहुँचकर उन्हें सजीवता प्रदान कर हरा–भरा रखता है। अतः यह स्पष्ट है कि हमारे शरीर में अंग प्रत्यंग को स्वास्थ्य प्रदान करने के लिए रक्त का वही स्थान है जो प्रकृति में जल का है। **बाह्य व आंतरिक स्वच्छता के लिए जल का महत्वपूर्ण स्थान है**। वह शरीर के विभिन्न तत्वों को घोलता एवं अंदर पैदा हुए दूषित द्रव्यों को घोलकर निष्कासित करता है। रक्त की शुद्धता एवं संतुलन नष्ट होने पर, रक्त संचार की गति मंद होने के साथ ही रोग प्रतिकारक शक्ति का ह्रास होता है और अनेक रोगों के लक्षण प्रकट होते हैं। जल का गुण 'रस' है अतः जल में शब्द, स्पर्श, रूप एवं रस का समावेश है।

**मिट्टी**

सभी जड़–चेतन वस्तुओं को धारण करने के कारण इसे धरती या धरा कहते हैं। इसके गर्भ में कई रत्न और खनिज पदार्थ भरे पड़े हैं। सभी रस पृथ्वी में मौजूद हैं। हमारे अंदर हड्डी का वही ठोस स्थान है जो प्रकृति में मिट्टी का। हमारे शरीर की सम्पूर्ण हड्डियों की रचना मिट्टी में पाये जाने वाले उन निर्जीव खनिज लवणों से हुई है, जिन्हें फल–सब्जी एवं अन्य खाद्यों के पेड़–पौधे, प्रकृति के अन्य तत्व जल, धूप एवं वायु की सहायता से सजीव खनिज लवणों में परिवर्तित कर उन्हें अपने अन्दर धारण कर लेते हैं और जब हम इन्हें इस्तेमाल करते हैं तो वे तत्व हमारे अंदर आ जाते हैं, और इनमें मुख्यतः कैल्शियम, फॉसफोरस एवं सल्फर आदि पाए जाते हैं और इन्हीं तत्वों से हमारी हड्डियों की रचना, विकास व मजबूती विशेष रूप से होती है। मिट्टी का गुण गंध है अतः मिट्टी में शब्द, स्पर्श, रूप, रस एवं गंध का समावेश है। यही कारण है कि पृथ्वी में पांचों गुणों का समावेश होने के कारण इसमें प्राणी का आधार एवं वनस्पति उत्पन्न होती है।

टिप्पणी

## 2.5.2 प्रकृति के अन्य तत्व

अब हम प्रकृति के अन्य रोचक तत्वों के बारे में विचार करेंगे –

**i) वनस्पति**

जिस प्रकार हमारे शरीर की रचना, माँसपेशी, हड्डी, त्वचा, रक्त, फेफड़े एवं स्नायु मंडल आदि के मिश्रण से हुई है और उसमें आकाश तत्व का होना अनिवार्य है। उसी प्रकार प्रकृति की समस्त वस्तुओं की रचना मिट्टी, पानी, वायु एवं सूर्य–रश्मियों के परस्पर मिश्रण पर आधारित है। इन तत्वों के उचित अनुपात के बिना प्रकृति में वनस्पति एवं प्राणी का विकास एवं जीवित रह पाना कठिन ही नहीं वरन् असंभव है। ठीक इसी प्रकार बिना प्राकृतिक – खाद्य के हमारी मांसपेशियों का विकास नहीं हो सकता। अतः प्रकृति में वनस्पति का जो स्थान है वही स्थान हमारे अंदर मांसपेशियों का है तथा उनके पोषण के लिए प्राकृतिक खाद्य अनिवार्य है।

**ii) गति**

क्या आपने कभी इस पर विचार किया है कि हमारे शरीर में जो गतियाँ होती हैं, वे क्या हैं? वास्तव में यदि देखा जाये तो इस गति का हमारे अंदर वही स्थान है जो प्रकृति में गति का। इन दोनों में एक प्रकार का कार्य एवं संगठन भी है। ये अणु गति द्वारा प्रकृति की विभिन्न शक्तियों को परस्पर परिवर्तित करके अपने में धारण कर लेते हैं और ठीक इसी प्रकार गति शरीर के विभिन्न अंगों को परस्पर मिलाकर उसमें नियमितता उत्पन्न करती है। इस गति को ही हम दूसरे शब्दों में जीवन कहते हैं। जब हमारे अंदर पर्याप्त गति नहीं होती है तो हम अस्वस्थ होने लगते हैं और इसके एकदम बंद हो जाने पर इस संसार से विदा हो जाते हैं। अतः हमें पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त करने तथा उसे कायम रखने के लिए सदा जीवन की संतुलित गति का ध्यान रखना चाहिए और गति को ठीक कायम रखने के लिए हमें शारीरिक श्रम अवश्य ही करना चाहिए। अतः यह स्पष्ट है कि गति का संबंध श्रम से है। जीवन हमारे लिए आनंद स्रोत एवं दूसरों के लिए भी सहायक बन सकता है। यह तभी संभव है जब प्रकृति से अपना निकटतम संबंध स्थापित कर उस पर चलते रहें। मनुष्य वास्तव में, विश्व कहिये या प्रकृति का सार–तत्व, प्रतिबिंब एवं सूक्ष्म दर्शन माना जाता है। यही कारण है कि मनुष्य के संबंध में जानकारी प्राप्त कर लेने के उपरांत प्रकृति के अंतर्गत समस्त वस्तुओं एवं प्रकृति के बारे में आसानी से जाना जा सकता है। विभिन्न प्रकार की शक्तियों में जब संतुलन और अनुरूपता होती है, तो मनुष्य स्वस्थ अनुभव करता है और शारीरिक एवं मानसिक स्थिति वातावरण के प्रतिकूल होने तथा प्रकृति से दूर होने पर अस्वस्थ।

**वास्तव में हमारे चारों ओर फैली हुई दैहिक शक्तियों में पुनः अनुरूपता स्थापित करने की कला एवं विज्ञान को व्यावहारिक रूप देने के फलस्वरूप उत्पन्न अवस्था को ही स्वास्थ्य कहते हैं।**

इन वस्तुओं में परस्पर अनुरूपता उत्पन्न कर स्वास्थ्य प्राप्त करने की कला बहुत ही प्राचीन है। पर इस असंयमित, अनियमित तथा कथित सम्य युग के लिए यह बिल्कुल नया प्रतीत होता है क्योंकि हमने अपने अनुकूल वातावरण एवं जीवन को धीरे–धीरे प्रकृति से विमुख होकर इस प्रकार प्रतिकूल बना लिया है कि वास्तविक स्वस्थ–जीवन की पथ रेखा इतनी धूमिल हो गई है कि उसे पहचान कर उस पर चलना, कदम–कदम पर खटकता एवं दुखदायी प्रतीत होता है। यदि हम अपने प्राचीन इतिहास एवं संस्कृति पर दृष्टि डालें तो यह स्पष्ट हो जाता है कि इस वास्तविक जीवन के बल ही पर हमारे पूर्वज स्वस्थ एवं सुखी दीर्घ जीवन व्यतीत करते थे और आज भी उस पथ के पथगामी अवश्य ही उनका प्रतिनिधित्व करने के लिए पाए जाते हैं। केवल सामान्य प्राणी ही नहीं बल्कि प्रकृति एवं मानव के बीच सामंजस्य का पालन करने के लिए अपने–अपने युग के प्रवर्तक राम, कृष्ण, ईसा, मोहम्मद, बुद्ध एवं अन्य ऋषि मुनियों ने अपनी जीवनचर्या में इस सिद्धांत को अपनाया है। प्राचीन ही नहीं, मध्यकालीन, मिस्र एवं यूनान के चिकित्सक जिनमें औषधि पिता हिपोक्रेट्स भी हैं, तथा वर्तमान युग के प्राकृतिक जीवन प्रेमी एवं युग प्रवर्तक पूज्य गांधी जी तथा स्वामी दयानंद जी आदि ने भी प्रकृति से सामंजस्य स्थापित करके यह सिद्ध कर दिया है कि प्रकृति के साथ सामंजस्य स्थापित करने का ही फल स्वास्थ्य और प्रतिकूलता का फल ही अस्वास्थ्य है।

अतः यह स्पष्ट हो जाता है कि जीवन को पूर्ण एवं सफल बनाने हेतु यह आवश्यक है कि हम अपने जीवन के प्रत्येक क्षण में प्रकृति के साथ एकरूपता स्थापित करें और तभी हम जीवन का सच्चा आनंद उठा सकते हैं अन्यथा हमारा जीवन पूर्ण न होकर सदा अपूर्ण, स्वस्थ न रहकर सदा अस्वस्थ एवं स्वस्थ दीर्घजीवी न होकर अस्वस्थ अल्पजीवी ही होगा।

### 2.5.3 मौलिक आवश्यकताएँ

अब हम इस बात पर संक्षेप में विचार करेंगे कि हमारी मौलिक आवश्यकताएँ क्या–क्या हैं जिन्हें धारण कर हम सदा स्वस्थ रह सकते हैं। प्राकृतिक एवं दैहिक शक्तियाँ, जो जीवन में निरंतर हमें मिलती रहती हैं, इस का पर्याप्त एवं उचित उपयोग ही हमें स्वस्थ रख सकता है। संक्षेप में ये मौलिक आवश्यकताएँ निम्नलिखित हैं –

**i) आकाश तत्व**

अर्थात् हमारे अंदर प्रत्येक कोशों के बीच अवकाश (खाली स्थान)।

**ii) शुद्ध वायु**

फेफड़े व त्वचा, जिनका कार्य, शरीर के विकारों को निष्कासित करना है एवं शुद्ध वायु द्वारा जीवनोपयोगी ऑक्सीजन धारण करना है, स्वस्थ जीवन के लिए महत्वपूर्ण हैं। हमारा शरीर एक घंटे में 30–40 घन फुट वायु धारण करता है। अतः हमें अपना अधिक से अधिक समय खुली एवं शुद्ध वायु में बिताना चाहिए। हमारे अंदर जब शुद्ध वायु का अभाव होता है तो हमें अनेक रोगों और विशेषकर यक्ष्मा (T.B.), श्वास नली एवं त्वचा के रोगों का शिकार होना पड़ता है। यही कारण है कि यक्ष्मा, गांवों में नहीं कल–कारखाने

टिप्पणी

तथा घनी तथा गंदी बस्ती वाले शहरों में निरंतर तेजी से बढ़ता जा रहा है। और उन व्यक्तियों के लिए तो कहना ही क्या जो शुद्ध वायु से वंचित होकर हमेशा चार–दीवारी के अंदर बंद रहते हैं और बाहर निकलने पर भी शुद्ध वायु ग्रहण नहीं पर पाते हैं।

**शुद्ध वायु, प्रायः समुद्र, नदी, झरना, खुले मैदान, बाग, बगीचे एवं ऊँची पहाड़ियों पर मिलती है। अतः हमें इन्हीं स्थानों का वायु सेवन करना चाहिए।**

iii) **अग्नि**

यह तत्व समस्त प्राणी मात्र के स्नायु मंडल एवं वनस्पति वर्ग में चेतना शक्ति को पूर्ण रूप से जागृत करता है।

iv) **जल**

जल का स्पर्श होते ही हमारे अंदर एक नव–चेतना एवं स्फूर्ति का संचार होता है। इसके अभाव में हमारी न तो बाहरी और न आंतरिक सफाई संभव है तथा रोग का जन्म होता है।

v) **पृथ्वी**

धरती माँ से हमें चुम्बकीय शक्ति प्राप्त होती है, जिससे हमारे पुराने कोश समाप्त होकर नए कोश प्राप्त होते हैं। उसका सदुपयोग हम नंगे पैर चलकर, अखाड़े के माध्यम से तथा अन्न प्राप्त करके कर सकते हैं।

## यूनिटगत प्रश्न 2.4

1. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए–

   i) हमारे शरीर में कोशों का वही स्थान है जो प्रकृति में ........................ का है।

   ii) वायु का गुण ...................................................... है।

   iii) बाह्य व आंतरिक स्वच्छता में .................................... का महत्वपूर्ण स्थान है।

   iv) ......................................... में पांचों गुणों का समावेश है।

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट में आपने प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धांतों के विषय में जाना तथा साथ ही प्रकृति में पाये जाने वाले पाँच तत्वों के बारे में विस्तार से जानकारी प्राप्त की । आपने जाना कि इन पांच तत्वों का प्रकृति एवं हमारे शरीर से क्या संबंध है?

वास्तव में जीवन को पूर्ण एवं सफल बनाने के लिए यह आवश्यक है कि हम अपने जीवन के प्रत्येक क्षण में प्रकृति के साथ एकरूपता स्थापित करें तभी हम जीवन का सच्चा आनंद उठा सकते हैं।

## यूनिटांत प्रश्न

1. ''यथा पिंडे तथा ब्रह्मांडे'' सिद्धांत से आप क्या समझते हैं?
2. प्रकृति में कौन—कौन से पांच तत्व हैं, उनमें से किन्हीं दो का वर्णन कीजिए।
3. पंच तत्वों की उत्पत्ति किस क्रम से हुई तथा उनके क्या—क्या गुण हैं?
4. प्रकृति के पंच तत्वों का हमारे शरीर के विभिन्न संस्थानों व अंग विशेष से क्या संबंध है?
5. प्रकृति में वनस्पति व गति का क्या स्थान है? इन तत्वों का हमारे शरीर की रचना, शरीर के विकास तथा हमारे जीवन के लिए क्या महत्व है?

## यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

### 2.1

1. प्रकृति पर आधारित चिकित्सा या प्रकृति द्वारा चिकित्सा।
2. महात्मा गाँधी
3. लुई कूने

### 2.2

क) विजातीय द्रव्य

ख) आहार

ग) आकाश

घ) प्रकृति

ङ) रहन—सहन

### 2.3

1. आकाश, वायु, अग्नि(सूर्य), जल एवं पृथ्वी

टिप्पणी

2. त्वचा एवं फेफड़े से

3. पृथ्वी

## 2.4

i) अणु

ii) स्पर्श

iii) जल

iv) पृथ्वी

टिप्पणी

# 3

# आहार एवं औषधीय पौधे

सृष्टि के प्रारंभ से ही आहार ने मनुष्य के स्वास्थ्य को प्रभावित तथा नियंत्रित किया है। गर्भ में शरीर के ढांचे के निर्माण की शुरुआत माँ द्वारा लिए गए आहार के साथ प्रारंभ होती है। जन्म के पश्चात् स्तनपान और उसके बाद अन्य आहार मानव की वृद्धि का कार्य–भार संभाल लेते हैं। आहार, जो आपके लिए औषधि हो सकता है एक जीवन्त आहार होना चाहिए – ऐसा आहार जिसमें 'प्राण–शक्ति' हो। उचित आहार एक निरोधक औषधि का भी कार्य करता है। इस यूनिट में हम आहार एवं कुछ विशेष औषधीय पौधों के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे और उसे अपने व्यावहारिक जीवन में ले सकेंगे।

## उद्देश्य

इस यूनिट का अध्ययन करने के प७चात् आप :

- उचित आहार, पोषण और स्वास्थ्य की उपयोगिता जान सकेंगे;
- आहार संबंधी कुछ अच्छी आदतों की चर्चा कर सकेंगे;
- कुछ औषधीय पेड़–पौधे, उनके पोषक मूल्य और उनका उपयोग समझ सकेंगे।

## 3.1 आहार, पोषण और स्वास्थ्य

शरीर–रचना में वृद्धि और पूर्ति तथा जीवन के अनुरक्षण के लिए जो कुछ खाया – पिया जाता है, वही आहार है। पोषण एवं क्षति पूर्ति के लिए उचित आहार अनिवार्य है। 'स्वास्थ्य', शक्ति और सामर्थ्य के रूप में शरीर और मन की सामान्य अवस्था है। उचित और संतुलित आहार जीवन को सशक्त और समर्थ रखता है। वह व्यक्ति बुद्धिमान है जो स्वस्थ, दीर्घजीवन के लिए आवश्यक आहार ग्रहण करता है और हानिप्रद आहार त्यागता है।

टिप्पणी

आदिकाल से ही आहार ने मनुष्य के स्वास्थ्य को प्रभावित और नियमित किया है। आहार और स्वास्थ्य के बीच संबंध शताब्दियों पहले, हमारे पूर्वज भी जानते थे। उचित आहार द्वारा अच्छे स्वास्थ्य के महत्वपूर्ण नुस्खे हमारे धर्म–ग्रन्थों, परंपरा और संस्कृति का हिस्सा बन गये। आहार, पोषण और स्वास्थ्य के बीच एक सकारात्मक संबंध है। आहार स्वास्थ्य को उन्नत करता है, अवनत नहीं। उचित आदर देने के लिए आहार की कुछ वस्तुओं को धार्मिक अनुष्ठानों का अंग बना दिया गया। जो आहार शरीर की टूट–फूट की मरम्मत कर सकते थे, उन्हें प्रमुख स्थान दिया गया। हिंदू शहद, दही और तुलसी को अमृत समझते थे। 'जौ' पूर्वजों के अंतिम संस्कार के समय समर्पित किया जाता था। केवल मांगलिक स्थानों को अलंकृत करता था। पवित्र कुरान में अंजीर, बेर और शहद पर एक अध्याय है। ईसाइयों के धार्मिक ग्रन्थों में जौ, शहद, दही, भुने बीजों और पानी का आहार के रूप में प्रायः वर्णन आता है। पोषण–विज्ञान कई शताब्दियों से आहार का स्वास्थ्य से संबंध स्थापित करने का प्रयत्न कर रहा है।

संपूर्ण स्वास्थ्य, व्यक्तिगत प्रयास, युक्तिसंगत आत्मानुशासन, व्यक्तिगत स्वच्छता और स्वास्थ्य के नियमों के दैनिक प्रयोग द्वारा ही कायम रखा जा सकता है। एक लोकोक्ति भी है, 'जैसा खाए अन्न, वैसा होए मन'। मनुस्मृति के अनुसार 'आहार शुद्धो सत्य शुद्धि, सत्य शुद्धि ध्रुव स्मृति'। शुद्ध आहार से मन शुद्ध होता है और मन शुद्ध होने से स्मृति उन्नत होती है। मानव अपने आहार के अनुसार उसी प्रकार बनता है जिस प्रकार खाद के अनुसार धरती की उपज।

अर्कानम ने भी कहा है – सभी चिकित्सा पद्धतियों का आधार आहार ही होना चाहिए। (Diet must be the basis of all medical therapies)

## यूनिटगत प्रश्न 3.1

क. आहार की परिभाषा लिखिए।

.............................................................................................................................

.............................................................................................................................

.............................................................................................................................

ख. स्वास्थ्य क्या है?

.............................................................................................................................

.............................................................................................................................

.............................................................................................................................

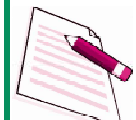

टिप्पणी

## 3.2 अम्लीय और क्षारीय आहार

आहार को उसके प्राकृतिक या अधिक से अधिक प्राकृतिक रूप में ही लिया जाना चाहिए। एक स्वस्थ व्यक्ति **के शरीर में रस और रक्त**, क्षारीय होते हैं और मूत्र किंचित अम्ल। हमारे शरीर का अम्लता–क्षारीय संतुलन बहुत हद तक उस भोजन पर निर्भर करता है जो हम ग्रहण करते हैं। शरीर में अम्लीय और क्षारीय तत्वों की प्रतिक्रिया के बीच संतुलन ही उत्तम स्वास्थ्य के लिए सहायक होता है। हमारा आहार इस तरह का होना चाहिए कि क्षारीय–अम्लता का अनुपात 80:20 हो, अर्थात् अपने भोजन में अत्यधिक क्षारीय खाद्य पदार्थों (लगभग 80 प्रतिशत) को सम्मिलित करना चाहिए और अम्लीय खाद्य पदार्थों को कम से कम (लगभग 20 प्रतिशत) सम्मिलित करना चाहिए। अर्थात् केवल 20 प्रतिशत पकाये हुए अन्न तथा 80 प्रतिशत अपक्व अन्न लें। भोजक का एक तिहाई भाग ही अन्न और दालें होनी चाहिए बाकि दो तिहाई भाग हरी सब्जी,फल, सलाद आदि हो। क्षारीय होने के कारण ये आहार स्वास्थ्य को उन्नत करने, शरीर का शुद्धिकरण कर रोगों से मुक्त करने तथा रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायक होते हैं। जिन खाद्य पदार्थों में कार्बन–डाइआक्साइड और कार्बनिक, लैक्टिक, आक्ज़ेलिक और यूरिक एसिड, क्लोरीन, फास्फोरस, गंधक और आयोडीन होता है, वे उन तत्वों में अम्लीय प्रभाव को बढ़ाते हैं। सोडियम, पोटेशियम, कैल्शियम, लोहा, तांबा, मैग्नेश्यिम और मैंगनीज जिन खाद्य पदार्थों में होते हैं, वे उनके क्षारीय प्रभाव को बढ़ाते हैं। विभिन्न खाद्यों में खनिजों और सूक्ष्म मात्रिक तत्वों की मात्रा जिस भूमि में वे उत्पन्न होते हैं उसमें उन तत्वों की उपस्थिति पर निर्भर करती है।

इन अम्लीय या क्षारीय तत्वों में से किसी की भी अधिकता अच्छे स्वास्थ्य के लिए ठीक नहीं होती है। इन तत्वों के बीच सही सन्तुलन, अच्छे स्वास्थ्य की ओर ले जाता है। इस संतुलन में किसी भी प्रकार के परिवर्तन से विभिन्न बीमारियाँ हो सकती हैं। संक्रमण और जुकाम के कीटाणु क्षारीय तंत्र में जीवित नहीं रहते। वे एक अत्यधिक अम्लीय वातावरण में पनपते हैं। बढ़ती उम्र में इन समस्याओं से अपनी रक्षा करने के लिए क्षारीय भोजन का अंतर्ग्रहण बढ़ाकर अपने तंत्र को क्षारीय रखना आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार का प्रयास रोग से शीघ्र राहत देता है।

एक और विचार करने योग्य बात यह है कि अत्यधिक नमक, जिसमें सोडियम क्लोराइड होता है, क्षारीयता बढ़ाता है और कैंसर की स्थिति के निकट ले जाता है। अतः भोजन के अलावा, सलाद या फलों में ऊपर से अतिरिक्त नमक के सेवन से बचना चाहिए। पेट में अम्लता बढ़ने के साथ बहुत सी पाचन संबंधी समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। यदि समय पर इन्हें ठीक नहीं किया जाए तो धीरे–धीरे यह भयंकर रोग का रूप ले सकती हैं। इसलिए यह आवश्यक है कि ऐसा भोजन न लें जो पेट में अम्लता पैदा करता है। अनाज, दालें, मैदा से बने उत्पाद, कोल्ड–ड्रिंक्स, उबाला हुआ दूध और सब प्रकार के मांस अम्लता बढ़ाते हैं। दूसरी ओर प्रायः ताजी, हरी सब्जियां और फल क्षारीयता बढ़ाते हैं और अम्लता कम करते हैं।

टिप्पणी

असंतुलित आहार लेने से जीव–विष उत्पन्न होता है और जब यह विष शरीर के विभिन्न तंत्रों द्वारा निकाला नहीं जा सकता तो यह शरीर के संबंधित अवयवों को नुकसान पहुँचाता है और रोग का कारण बनता है। इसलिए सही भोजन सही मात्रा में खाना चाहिए और अपने रक्त प्रवाह को शुद्ध करना चाहिए।

## 3.3 आहार संबंधी अच्छी आदतें

संतुलित एवं उत्तम आहार लेने के साथ–साथ खाने की अच्छी आदतों को भी विकसित करना अत्यंत आवश्यक है। केवल उच्चकोटि के पौष्टिक तत्वों से युक्त खाद्य पदार्थ लेने से ही आहार संबंधी समस्याएं दूर नहीं होती।

आइए, ऐसी ही कुछ आदतों को समझें और व्यवहार में लाने का प्रयास करें–

- भोजन हमेशा शान्त चित्त के साथ प्रारंभ करना चाहिए। कभी भी क्रोध, तनाव, जल्दबाजी में भोजन ग्रहण नहीं करना चाहिए। भोजन से पहले मित्रों के साथ बैठिये और तनाव रहित होकर भोजन करिये।
- नियत समय पर भोजन करने के कई लाभ हैं। भोजन में अनियमितता हानिप्रद है।
- कम खाना स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है। कम खाने की अपेक्षा अधिक खाने से अधिक लोग मरते हैं। भोजन की अधिक मात्रा, अच्छे आहार को भी जहर बना देती है।
- जब भूख लगे तभी खाना चाहिए। जब तक अच्छी तरह भूख न लगे बड़ा खाना नहीं लेना चाहिए। कभी भी घड़ी देखकर खाना मत खाइए। एक अच्छा भोजन, भूख के साथ प्रारंभ होना चाहिए।
- खाना अच्छी तरह चबा–चबा कर खाइये, अन्यथा दांतों का काम आंतों को करना पड़ता है। तेजी से कभी मत खाइये।
- खाते समय कम से कम बात कीजिए।
- भोजन के तुरंत बाद कोई कड़ी मेहनत का काम नहीं कीजिए।
- कच्ची सब्जियां और कच्चे फल एक ही समय पर नहीं खाइये।
- भोजन के समय पाल्थी मार कर बैठना सबसे अच्छा होता है। भोजन के तुरंत बाद पांच–दस मिनट के लिए वज्रासन में बैठिए।(केवल यही एकमात्र आसन है जो खाने के तुरंत बाद भी किया जा सकता है।)
- अंकुरित अन्न, मौसम के फल और सब्जियों का प्रयोग कीजिए। अंकुरित आहार शक्ति का स्रोत प्रदान करते हैं। ये दीर्घायु प्रवर्तक हैं।

टिप्पणी

- जो आहार आग पर नहीं पकाया गया हो वह स्वास्थ्य के लिए बड़ा महत्वपूर्ण होता है। पकाने से एन्ज़ाइम, कुछ विटामिन और खनिज नष्ट हो जाते हैं। तलना (तला हुआ भोजन) सबसे हानिकारक होता है।
- मुख्य भोजन से आधा घण्टे पहले और कम से कम आधा घण्टे बाद तक पानी नहीं लेना चाहिए।

## 3.4 भोजन की उचित मात्रा (कब और कितना भोजन लें)

भोजन के समय के संबंध में कहा गया है कि जब मन शान्त हो, मल—मूत्र विसर्जित हो चुके हों, तत्व संतुलित हों, पेट हवा से मुक्त हो, शरीर हल्का हो, ज्ञानेन्द्रियाँ कार्य—कुशल हों और भूख हो केवल तभी भोजन ग्रहण करना चाहिए। भोजन लेने के विषय में एक प्रसिद्ध कहावत है, ''एक बार योगी, दो बार भोगी, तीन बार रोगी।'' एक मुख्य भोजन और एक या दो छोटे भोजन वृद्धों के शरीर और उनके अच्छे स्वास्थ्य के लिए पर्याप्त होते हैं। यदि वे भोजन के बीच, कई बार खाना खाते हैं तो पाचन संस्थान को कई बार नए सिरे से अपनी प्रक्रियाऐं शुरू करनी पड़ती हैं।

नियत समय पर भोजन करने के बहुत लाभ हैं। हमारे शरीर में मुख्यतः तीन क्रियायें होती हैं — पाचन, पोषण और निष्कासन। सुबह चार बजे से दोपहर बारह बजे के बीच का समय 'निष्कासन' का होता है। इस दौरान शरीर के पोषण के लिए कम से कम खाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि प्रातःकालीन जलपान या नाश्ता हल्का होना चाहिए और पानी का अधिक से अधिक सेवन करना चाहिए। दोपहर बारह बजे से रात्रि आठ बजे का समय 'पाचन' का होता है। अतः इस अवधि में भोजन ग्रहण करना चाहिए। रात के आठ बजे से सुबह चार बजे तक का समय 'पोषण' का होता है। इस दौरान शरीर तथा पाचन तंत्रों को संपूर्ण आराम देना चाहिए। इसलिए रात का भोजन आठ बजे से पहले कर लेना स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है।

अब प्रश्न उठता है कि कितना खाना चाहिए? अधिक भोजन लेने से स्वास्थ्य गिरता है और जीवन की अवधि कम हो जाती है। यदि आप आवश्यकता से अधिक खाते हैं, तो शरीर में विषैले पदार्थ इकट्ठा हो जाते हैं, जो आगे चलकर, भयंकर रोग का कारण बनते हैं। इसलिए 'कब्ज' को अधिकतर बीमारियों की जननी माना जाता है। वृद्ध व्यक्तियों को कभी भी पूर्ण रूप से पेट भरकर ठूँस—ठूँस कर नहीं खाना चाहिए। खाते समय आकाश तत्व का ध्यान रखिये। सभी के खाने का नियम इस प्रकार होना चाहिए कि 50% खाना खाएं, 25% पानी के लिए जगह छोड़े और बाकी 25% खाली जगह या आकाश तत्व के लिए छोड़ दें।

| | |
|---|---|
| भोजन | 50 % |
| पानी | 25 % |
| आकाश तत्व | 25 % |

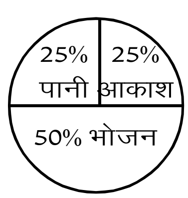

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 3.2

1. वृद्धों के लिए आहार संबंधी कोई तीन अच्छी आदतें बताइए।

   ....................................................................................................................................................

   ....................................................................................................................................................

   ....................................................................................................................................................

2. भोजन कब ग्रहण करना चाहिए?

   ....................................................................................................................................................

   ....................................................................................................................................................

   ....................................................................................................................................................

3. अ) रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।

   क) पोषण एवं क्षति पूर्ति के लिए .................................... अनिवार्य है।

   ख) आहार स्वास्थ्य को .......................... करता है, ....................................नहीं।

   ग) संपूर्ण स्वास्थ्य, व्यक्तिगत प्रयास, युक्तिसंगत आत्मानुशासन, .................. और ............................ के नियमों के दैनिक प्रयोग द्वारा ही कायम रखा जा सकता है।

   घ) आहार में क्षारीय–अम्लता का अनुपात ............................ होना चाहिए।

   ङ) भोजन हमेशा ........................................... होकर प्रारंभ करना चाहिए।

   **ब) सही अथवा गलत का निशान लगाइए।**

   क) आहार, पोषण और स्वास्थ्य के बीच एक सकारात्मक संबंध है। ( )

   ख) आहार में अधिक अम्लीय खाद्य पदार्थों को सम्मलित करना चाहिए। ( )

   ग) भोजन के तुरंत बाद कोई कड़ी मेहनत का काम नहीं करना चाहिए। ( )

   घ) अधिक भोजन लेने से स्वास्थ्य बढ़ता है। ( )

   ङ) खाने के साथ खूब पानी पीना चाहिए। ( )

## 3.5 औषधीय पेड़–पौधों का ज्ञान

मनुष्य की उत्पत्ति के साथ ही जन्म हुआ बीमारियों का और तत्पश्चात् उन रोगों के उपचार की औषधि की भी उत्पत्ति हुई। आदिकाल में मानव जब भोजन की खोज में निकला तो उसने आकस्मिक कोई पौधा या किसी पेड़ के फल, पत्तियां, तना या जड़ें खा लीं। जब उसने

देखा कि इन्हें खाने से कोई हानि नहीं हुई तो इसी को उसने अपना आहार मान लिया। उसने यह भी पाया कि किसी पौधे या पेड़ के किसी भाग को खाने से दस्त हो जाता है तो उसे कब्ज़ की समस्या के लिए इस्तेमाल करने लगा। इसी प्रकार जिस पौधे के खाने से मस्तिष्क पर प्रभाव पड़ा, उसे मानसिक रोगों के लिए प्रयोग किया जाने लगा।

भारत में औषधीय पेड़–पौधों का ज्ञान बहुत पुराना है। पौधों के औषधीय गुणों की चर्चा अथर्ववेद में भी की गई है और वहीं से 'आयुर्वेद' भी विकसित हुआ।

### 3.4.1 खाद्य पदार्थों के पोषक मूल्य और उनका प्रयोग

अब हम ऐसे ही कुछ औषधीय पेड़–पौधों के सामान्य एवं उपचारात्मक गुणों पर विस्तार से प्रकाश डालेंगे–

#### 1. आंवला

धार्मिक एवं आहार दोनों दृष्टि से आंवला उच्च कोटि का फल है। प्राचीन आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सक इसके औषधीय गुण को जानते थे और इसी आधार पर 'च्यवनप्राश' और ज्वारिश आंवला आदि उपयोगी औषधि का आविष्कार हुआ।

आंवला चटनी, रस, अचार एवं मुरब्बा आदि तैयार करके सेवन किया जाता है। किन्तु ताजे हरे आंवले का प्रयोग सर्वश्रेष्ठ माना जाता है। आंवले में विटामिन 'सी' और 'मैलिक एसिड' की प्रधानता होती है। इसका यक्ष्मा, सामान्य दुर्बलता, पाचन तंत्र की गड़बड़ी, वजन गिरना, नपुंसकता, ह्रदय रोग और मानसिक रोग दूर करने में विशेष स्थान है।

नित्य सुबह 20–25 मि.ग्रा. आंवले का रस और उतना ही शहद मिलाकर नियमित लेने से दमा, फुफ्फसीय क्षय, श्वास नली प्रदाह, स्कर्वी, मधुमेह, रक्ताभाव, हीन स्मरण शक्ति, तनाव, समय से पूर्व बुढ़ापा, नेत्र रोग, बालों का सफेद होना एवं गिरना आदि से बचाव और अन्य रोगों के उपचार में भी उपयोगी है।

चित्र 3.1: आँवला

टिप्पणी

## 2. अर्जुन की छाल

अर्जुन का पेड़ मुख्यतः उत्तरी भारत के कई राज्यों जैसे गुजरात, उत्तर प्रदेश आदि में पाया जाता है। इसमें काफी अधिक मात्रा में कैल्शियम, एल्यूमीनियम और मैगनिशियम तत्व, 12%टैन्निस (Tannins) तथा अर्जुनीय एवं अर्जुननीटीन नामक रासायनिक घटक पाए जाते हैं।

अर्जुन एक हृदय टॉनिक के रूप में प्रचलित है। यह मूत्रल (Diuretic) होता है। यह उच्च रक्त चाप और तेज़ हृदय गति को कम करता है और हृदय की मांसपेशियों को मज़बूत बनाता है।

चित्र 3.2: अर्जुन की छाल

## 3. ब्राह्मी

ब्राह्मी एक नाजुक सा, बेलनुमा पौधा है। इसका स्वाद कड़ुवा होता है। इसमें एशियाटिक एसिड, **ब्राह्मिन एसिड** और **ब्रह्माइन नामक** रासायनिक घटक पाए जाते हैं। भारत में यह औषधि, मस्तिष्क के टॉनिक की शक्ल मे प्रयोग में लाई जाती है। ताजे पौधे का 50 मि.ली. काढ़ा, रात में खाने के बाद लेने से हिस्टीरिया, अनिद्रा एवं मिरगी तथा स्नायु संबंधी अन्य समस्त रोगों में लाभ करता है। इसके अलावा यह त्वचा रोग और कोढ़ में भी उपयोगी है।

चित्र 3.3: ब्राह्मी

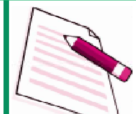

टिप्पणी

### 4. शंखपुष्पी

यह 6—20 इंच लंबा पौधा होता है और औषधि के रूप में प्रायः व्यवहार किया जाता है। इसमें 'शंखपुष्पीन' नामक रासायनिक तत्व तथा उड़नशील तेल (volatile oil) होता है। इसके अलावा इसमें पोटाशियम क्लोराइड भी पाया जाता है। यह औषधि उच्च रक्तचाप और मस्तिष्क को शांत करने तथा स्मरण शक्ति बढ़ाने में प्रयोग में लाई जाती है।

चित्र 3.4: शंखपुष्पी

### 5. अश्वगंधा

इस पौधे की जड़ें औषधि के रूप में प्रयोग की जाती हैं। इसमें एलक्लोइड्स (alkaloids)' और स्टीरोइड लैक्टोन्स (steroid lactones) प्रमुख तत्व होते हैं। वाईथेफेरिन नामक रासायनिक तत्व जीवाणु नाशक और ट्यूमर (tumour) नष्ट करने में उत्तरदायी होता है। यह अनिद्रा, दमा, श्वास नली प्रदाह, क्षय रोग, ल्युकोरिया, गठिया और वात, प्रदाह की स्थिति में बहुत उपयोगी औषधि है। हाल ही में, अश्वगंधा का प्रयोग कैंसर रोग में उपयोगी पाया गया है।

चित्र 3.5: अश्वगंधा

टिप्पणी

### 6. पुनर्नवा

यह भारत में अपने आप उगता एवं फैलता है। कई शताब्दी से पुनर्नवा आयुर्वेदिक एवं यूनानी औषधि में प्रयोग होता चला आ रहा है। इसमें पुनर्नवीन और पोटेशियम नाइट्रेट तथा अन्य पोटेशियम घटक पाए जाते हैं। इसका बहुत मूत्रल (Diuretic) प्रभाव होता है। यह गुर्दे, यकृत एवं हृदय रोग में विशेष उपयोगी है। इसका काढ़ा नेफरोटिक सिनड्रोम (nephrotic syndrome) में काफी लाभदायक होता है। इसके सेवन से एलब्युमिन, सीरम प्रोटीन और सीरम क्लेस्ट्राल काफी हद तक घट जाता है। झुर्रियों पर ताज़ा रस लगाना भी फायदेमंद होता है।

चित्र 3.6: पुनर्नवा

### 7. लहसुन

गांधी जी के शब्दों में लहसुन गरीबों का कस्तूरी है। प्राचीन काल से स्नायुविक शक्तिवर्द्धक के रूप में व्यवहार किया जाता है। खाद्य एवं स्वास्थ्य को सुरक्षित रखता है। यह कई कली वाला एवं एक पोती वाला होता है। एक पोती वाले का अधिक महत्व है। इसमें उड़नशील तेल एलिसिन एवं उपयोगी एन्ज़ाइम भी होते हैं।

यह रक्त शुद्ध करता है एवं फेफड़े, पसीने एवं मूत्र मार्ग के अवयव को स्वस्थ रखता है। यह एक जबरदस्त एंटीसेप्टिक है। एक मि.ग्रा. एलिसिन, 15 IU पेनीसिलिन (=10ug) के बराबर होता है। यह केवल हानिप्रद कीटाणुओं को मारता है जबकि पेनीसिलिन शरीर के स्वास्थ्यप्रद एवं हानिप्रद दोनों तरह के कीटाणुओं को मारता है। इसके अलावा यह दमा, मंदाग्नि, अपच, अफारा, उदरशूल, गठिया एवं वात आदि में आश्चर्यजनक लाभ करता है।

### 8. अदरक

यह सारे साल उगने वाला पौधा है। इसमें रेशे बहुत होते हैं। इसका स्वाद झनझना देने वाला होता है। अदरक को चटनी चाय एवं मसाले की तरह इस्तेमाल करने का रिवाज़ है। सूखे के अपेक्षा ताज़े अदरक में अधिक उड़नशील तेल होता है। इसमें जिनजीबरीन, जिनजीबरोल और पोटेशियम आक्जलेट काफी मात्रा में पाया जाता है।

टिप्पणी

अपच, कैंसर, आमाशयिक प्रदाह, अफारा एवं आमाशयिक आंत्रिक संक्रमण से बचने के लिए खाने के बाद अदरक का एक टुकड़ा चबाना चाहिए।

### 9. हल्दी

हल्दी के पौधे का बल्ब (rhizome) इस्तेमाल में लाया जाता है। इसमें उड़नशील तेल और करक्युमिन तथा रेसिन (resin) नामक रासायनिक तत्व पाए जाते हैं। आयुर्वेद में इसकी बहुत महत्ता है और मधुमेह और यकृत रोगों (Liver diseases) में प्रयोग होती है। कफ और श्वास नली प्रदाह (Bronchitis) में भी उपयोगी है। यह प्रदाह की स्थिति (inflammation) में सक्रिय कार्य करती है। अंदरुनी चोट लगने पर गरम दूध में चुटकी भर हल्दी डालकर पीने का पुराना रिवाज़ है। मोच या चोट लगने पर 3 छोटे चम्मच हल्दी, 4–5 बूंदे सरसों का तेल, थोड़ा सा चूना, गर्म पानी में मिलाकर लगाने से काफी लाभ होता है।

### 10. पोदीना

यह एक सुगंधित शाक है, जो समस्त भारत में प्रचलित है। इसके बारे में प्राचीन काल से रोमन एवं ग्रीक जानते थे। यह सामान्यतः वायु नाशक एवं प्रति जैविक (Anti biotic) है।

इसमें उड़नशील तेल, कार्बोन तथा रेसिन और टेनिन्स प्रमुख तत्त्व होते हैं। पोदीना के कुछ पत्तियों को नित्य चबाने से दांतों के अनेक रोग दूर होते हैं एवं यह रोगाणुनाशक एंटीसेप्टिक का काम करता है। यह समय से पूर्व दांत गिरने एवं पायरिया से बचाता है। पोदीने की पत्ती का ताजा रस, नींबू का रस और शहद मिलाकर दिन में तीन बार देने से अपच, अफारा, उदर पीड़ा, पेट के कीड़े, लोहा अभाव जन्य रक्ताभाव एवं गर्मी की संग्रहणी आदि में लाभ करता है। यह थूक एवं कफ को तरल करता है और फुफ्फुस को पोषण देता है, संक्रामक प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाता है और यक्ष्मा, दमा, श्वासनली शक्ति को बढ़ाता है और यक्ष्मा, दमा, श्वासनली प्रदाह में लाभ पहुँचाता है।

### 11. सौंफ

भारत में भोजन के बाद सौंफ खाने का पुराना रिवाज़ है। यह एक सुगंधित पौधा है। इसमें उड़नशील तेल प्रचुर मात्रा में होता है, साथ ही ऐनिथोल और फेन्कोन नामक रासायनिक तत्व भी पाए जाते हैं। यह कफ वर्धक होता है, अतः खांसी और कफ निकालने के लिए इस्तेमाल किया जाता है। सौंफ को हल्का सा भून कर रख लें और भोजन के बाद एक चम्मच लेने से पेट के सभी विकारों जैसे अपच, खट्टी डकार, सीने में जलन, जी मचलाना, वायु विकार में आराम मिलता है। गर्मियों में सौंफ के शरबत का सेवन करने से शरीर को ठंडक मिलती है।

### 12. तुलसी

यह पौधा संपूर्ण भारत में पाया जाता है और हिंदू धर्म में इसकी पूजा की जाती है और ऐसा माना जाता है कि जिस मकान में तुलसी का पौधा होता है वह तीर्थस्थान के समान हो जाता है। कृमि, कीट और साँप उस मकान में नहीं आते **और वह स्थान और** वे व्यक्ति बीमारी से

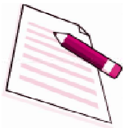

टिप्पणी

मुक्त और हर प्रकार से शुद्ध हो जाते हैं।

चित्र 3.7: तुलसी

तुलसी में उड़नशील तेल होता है जो हवा में मिलकर सब कृमियों और कीटाणुओं को नष्ट कर देता है। साथ ही इसमें 'यूजीनोल' और 'कारवक्रोल' भी पाया जाता है। तुलसी की पत्तियों का रस शहद के साथ लेने पर, सर्दी, जुकाम, बुखार और पेट के रोग ठीक करने में सहायक होता है। यदि 2—3 ग्राम तुलसी के बीज पानी के साथ कुछ दिन सुबह शाम लिये जाएं तो रक्त शुद्ध होता है। वीर्य दोषों में भी सुधार होता है। तुलसी में सजीव पारा होने के कारण इसे दांतों से चबाना नहीं चाहिए।

खाद्य पदार्थों में उपस्थित पोषक तत्वों यानि प्रोटीन, विटामिन, खनिज, एंजाइम और कैलोरी आदि का अर्थ यह नहीं है कि जैसे ही वह खाद्य पदार्थ शरीर के अंदर जाता है, तुरंत उतनी ऊर्जा आपके शरीर के विभिन्न अंगों में स्थानांतरित हो जाती है। यह आपके विविध शरीर तंत्रों पर निर्भर करता है कि कितनी शक्ति और अन्य तत्व वे आहार से निकाल पाते हैं। यह आपके उस समय के दैहिक, भावात्मक, मानसिक और आध्यात्मिक स्तरों पर निर्भर करता है कि जो आहार आप लेते हैं उससे कितनी शक्ति प्राप्त कर सकते हैं।

## 3.6 विशिष्ट आहार

अब हम कुछ विशेष आहार पर चर्चा करेंगे, जो उन स्थितियों के लिए उपयुक्त हैं जिनका सामना वृद्ध करते हैं। इनमें से वृद्धों के लिए प्रतिदिन आहार के नियमित कार्यक्रम में सम्मिलित हैं ताकि आप उनकी उपयोगिता के संबंध में आश्वस्त हो जायें और उनका अनुसरण कर सकें।

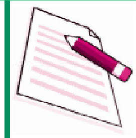

टिप्पणी

### 1. सोयाबीन

चित्र 3.8: सोयाबीन

सोयाबीन उच्चकोटि का उच्च प्रोटीन प्रधान द्विदल है। इसमें लगभग 40–50% प्रोटीन होता है। इसमें लोहा, फास्फोरस, पोटाशियम, कैल्शियम, तांबा, कैरोटिन और विटामिन 'बी' काफी मात्रा में होता है। इसमें यूरिक एसिड नहीं होता, इसलिए यह स्पष्ट रूप से क्षारीय है। सोयाबीन में कम कार्बोहाइड्रेट और स्टार्च एवं अम्ल रहित प्रोटीन होने से मधुमेह के रोगियों के लिए फायदेमंद होता है। इसका लेसिथिन, अंडे के लेसिथिन से अच्छा होता है।

सोयाबीन का आहार सीरम कोलेस्ट्राल (Cholesterol) कम करता है और अच्छे कोलेस्ट्राल एचडीएल (HDL) को बढ़ाता है। यह रक्त प्रोफाइल (Blood profile) पूरी तरह सुधार देता है। अतः हृदय रोग में बहुत उपयोगी है।

### 2. रिज़का (अल्फा–अल्फा)

चित्र 3.9: रिज़का (अल्फा–अल्फा)

रिज़का महत्वपूर्ण स्वास्थ्यप्रद आहारों में से एक है। सामान्य अंकुरित अन्न (चना) आदि की भांति यह भी खाया और अंकुरित किया जा सकता है। अंकुरित अल्फा–अल्फा लोहा, कैल्शियम और फॉसफोरस, विटामिन ए, बी, ई का भंडार है। ये हड्डी तथा दांतों के निर्माण एवं मस्तिष्क के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। रिज़का अन्य वनस्पतियों की तुलना में लगभग आठ गुणा अधिक क्षारीय होता है। यह गठिया से मुक्ति दिलाता है, रक्तचाप कम करता है और शरीर–निर्माण के लिए एक आवश्यक टॉनिक है।

### 3. शहद

शहद प्राण–शक्ति की तरह है। शहद में डेक्सट्रोज, ग्लूकोज़, लेबुलोज, कैल्शियम, लोहा, मैग्नेशियम और एन्जाइम होते हैं। शहद की पाचन प्रक्रिया नहीं होती। अतः यह तत्व शक्ति प्रदान करता है। जीवन की सभी अवस्थायें शिशु, बाल्य, युवा एवं बुढ़ापा सभी में शहद उपयोगी है। यह सभी रोगों (केवल बहुत बढ़े हुए अनियन्त्रित मधुमेह को छोड़कर) में दिया जा सकता है। यह बुद्धि, संतोष और आनंद में वृद्धि करता है। रक्तचाप, फेफड़ों और हृदय के सब रोगों के लिए अच्छी औषधि है। यह मोटापा कम करता है और कब्ज को ठीक करता है।

### 4. दही

दही न केवल एक स्वादिष्ट और पोषक आहार है बल्कि इसमें कई औषधीय गुण होते हैं। दही, दूध से बेहतर और अधिक लाभदायक होता है। आयु में वृद्धि के साथ शरीर को दूध पचाने में कठिनाई होती है क्योंकि दूध में विद्यमान lactic acid पेशियों में इकट्ठा होने लगता

टिप्पणी

है और शरीर में दर्द का कारण बनता है। अतः वृद्धावस्था में दूध की जगह, दही या छाछ का प्रयोग फायदेमंद होता है। जैसे–जैसे आयु बढ़ती है हानिकारक जीवाणु आंतों में पहुँच जाते हैं और विषाक्त तत्वों (Toxins) को जन्म देते हैं। दही में उपस्थित दुग्ध जीवाणु (Lactobacillus) उन हानिप्रद जीवाणुओं को प्राकृतिक रूप में नष्ट करके uro-genital tract को स्वस्थ रखते हैं। इसके अलावा दही antioxidants का भी अच्छा स्रोत है। सबसे अच्छा दही गाय के दूध का होता है, उसके बाद बकरी के दूध का। भैंस के दूध का दही कफ पैदा करता है और पचने के लिए अधिक समय लेता है।

### 5. नमक

शरीर क्रिया शास्त्र के विशेषज्ञों का कहना है कि लोग नमक शारीरिक आवश्यकता के लिये नहीं बल्कि भोजन को स्वादिष्ट बनाने के लिए प्रयोग करते हैं। खाने में कम से कम नमक लेना चाहिए। नमक शरीर के अनेक आवश्यक तत्व 'एलब्युमिन' आदि निष्कासित करने के साथ अंतः एवं बाह्य स्राव को प्रभावित करता है। यह रक्त के अस्वस्थ तंतुओं को सख्त और रक्त कोशाणुओं को सिकोड़ते हुए, निष्क्रिय और शुष्क बनाता है।

एक सामान्य व्यक्ति को प्रतिदिन लगभग आधे ग्राम नमक की आवश्यकता होती है और उतनी मात्रा कच्ची सब्जियों से भी आसानी से मिल जाती है। नमक का अत्यधिक प्रयोग गुर्दों पर बहुत बोझ डालता है। शरीर के अंदर अत्यधिक नमक विषाक्त पदार्थ की भांति जमा रहता है जो हृदय की बीमारियों, गठिया और उच्च रक्तचाप को बढ़ाता है। अधिक नमक शरीर का पानी रोकने की क्षमता भी बढ़ाता है इस कारण शरीर का वज़न भी बढ़ जाता है।

## 3.7 स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले मुख्य खाद्य पदार्थों की जानकारी

**नीचे बताए गये खाद्य पदार्थों से बचें –**

- **अत्यधिक नमक और चीनी** – नमक सबसे बड़ा दोषी है जिसके विषय में पहले काफी चर्चा की गई है।
- खाने वाली सफेद चीनी में कैलोरी और कार्बोहाइड्रेट के अलावा कोई पोषक तत्व नहीं होता। इसमें हड्डियों का चूरा होता है। यह अम्लता उत्पन्न करती है। मिठास के लिए दूसरे प्राकृतिक शर्करा जैसे गुड़, शक्कर, खांड, शहद आदि का प्रयोग किया जा सकता है।
- **मैदा (सफेद आटा) और इससे बनी चीज़ें** – मैदा आँतों में चिपक जाता है और इसका निष्कासन सही ढंग से नहीं हो पाता। अतः यह कब्ज़ को जन्म देता है। इसके स्थान पर चोकर सहित आटे की रोटी, ब्राउन ब्रेड, बिना पॉलिश किया हुआ चावल आदि लें।
- **चाय और कॉफी** – चाय या कॉफी, दिनभर में दो कप से अधिक न लें। यदि संभव हो तो, हर्बल चाय लेने का प्रयत्न करें।

- **मांसाहारी भोजन** – सभी प्रकार का मांस न खायें। शाकाहारी भोजन लेने का प्रयास करें।

## यूनिटगत प्रश्न 3.3

1. आँवले में कौन सा विटामिन प्रचुर मात्रा में पाया जाता है?

   ..........................................................................................................................................

   ..........................................................................................................................................

2. आहार में सोयाबीन की उपयोगिता बताइए।

   ..........................................................................................................................................

   ..........................................................................................................................................

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट में हमने प्राकृतिक आहार और उसकी उपयोगिता एवं महत्व के बारे में जानकारी प्राप्त की। हमने खाने के कुछ विशेष नियम तथा भोजन करते समय किन–किन बातों का ध्यान देना चाहिए इस पर भी चर्चा की। कुछ औषधीय पौधों के बारे में भी ज्ञान प्राप्त किया। अब आप समझ सकते हैं कि हमारा आहार जीवन्त एवं प्राकृतिक होना चाहिए क्योंकि उचित आहार एक निरोधक औषधि का भी कार्य करता है।

## यूनिटांत प्रश्न

1. आहार संबंधी कुछ अच्छी आदतों की चर्चा कीजिए।
2. भोजन में अम्लीय और क्षारीय आहार का क्या अनुपात होना चाहिए? समझाइए।
3. उचित आहार, पोषण और स्वास्थ्य की उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।
4. किन्हीं पाँच औषधीय पेड़–पौधों की उपयोगिता का वर्णन कीजिए।

## यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

### 3.1

1. शरीर रचना में वृद्धि और पूर्ति तथा जीवन के अनुरक्षण के लिए जो खाया या पिया जाता है वही आहार है।

2. शक्ति और सामर्थ्य के रूप में शरीर और मन की सामान्य अवस्था ही स्वास्थ्य है।

## 3.2

1. 1) भोजन हमेशा शांत चित्त होकर करना चाहिए।
   2) कम खाना स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है।
   3) खाना अच्छी तरह चबा–चबा कर खाना चाहिए।

2. जब मन शान्त हो, मल–मूत्र विसर्जित हो चुके हों, शरीर हल्का हो और भूख हो तभी भोजन ग्रहण करना चाहिए।

3. अ) क) उचित आहार
   ख) उन्नत, अवनत
   ग) व्यक्तिगत स्वच्छता, स्वास्थ्य
   घ) 80:20
   ङ) शान्त चित्त

   ब) क) सही
   ख) गलत
   ग) सही
   घ) गलत
   ङ) गलत

## 3.3

1. विटामिन 'सी'

2. सोयाबीन सीरम (Serum) कोलेस्ट्राल को कम करता है और अच्छे कोलेस्ट्राल को बढ़ाता है।

# 4

# प्राथमिक उपचार

कभी–कभी बहुत सी ऐसी आकस्मिक परिस्थितियाँ हर व्यक्ति के जीवन में आती हैं–जिसमें यदि तुरन्त उचित उपचार किया जाए तो शारीरिक क्षति को काफी हद तक कम किया जा सकता है और कई बार तो उसे मृत्यु से भी बचाया जा सकता है। उपचार के इसी तरीके को हम प्राथमिक उपचार (First aid) कहते हैं। इसमें रोग या परेशानी को दूर तो नहीं किया जा सकता, पर कम किया जा सकता है। तात्पर्य यह है कि यह पूर्ण उपचार तो नहीं है, मगर समय पर उपलब्ध हो जाए, तो दुर्घटना के बाद अनेक लोगों की जान बच सकती है।

प्राथमिक उपचार का महत्व इतना है कि स्कूलों में हर विद्यार्थी को इसके बारे में जानना अनिवार्य कर दिया गया है।

इस यूनिट में आप समझेंगे कि, कुशल प्राथमिक उपचारक न केवल अनेक व्यक्तियों को बचा सकते हैं– बल्कि आम नागरिकों को भी उचित जानकारी और प्रशिक्षण दिलवाकर उन्हें, प्राथमिक उपचार में निपुण बना सकते हैं। इसमें हम यह भी जानेंगे कि, कैसे प्राथमिक उपचार द्वारा –

(1) जीवन को बचाना है।

(2) पीड़ा को कम करना है।

(3) पीड़ित व्यक्ति को त्वरित सहायता उपलब्ध कराने में सहायक होना है।

टिप्पणी

(4) पीड़ित व्यक्ति की परिस्थितियों को और खराब होने से रोकना है।

(5) शरीर के विभिन्न अंगों की क्षति को रोकना है।

## उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के पश्चात् आपः

- प्राथमिक उपचार सम्बन्धित सामान्य एवं आवश्यक जानकारी प्राप्त कर सकेंगे;
- आपात स्थिति में संकेतों और लक्षणों के सहारे, प्राथमिक उपचार प्रबंध के तरीकों को अपना सकेंगे;
- आपात स्थितियों में प्राथमिक उपचार उपलब्ध कराकर, जीवन की रक्षा कर सकेंगे;
- विभिन्न परिस्थितियों को समझकर, घरेलू उपचार करने में सक्षम होंगे;
- शरीर के वायटल पैरामीटर्स को समझ सकेंगे।

## 4.1 सामान्य एवं आवश्यक जानकारियाँ

आपातकाल में उपचार एक जटिल प्रक्रिया है। अतः प्राथमिक उपचारकर्ता को कुछ चीजों का सामान्य ज्ञान होना आवश्यक है, जिसके सहारे उपचार करना थोड़ा आसान हो जाता है। ये चीजे हैं– व्यक्ति की लंबाई, भार, नब्ज दर, रक्तचाप, श्वसन दर तथा तापमान। किसी स्वस्थ व्यक्ति में इनका सही माप क्या होना चाहिए इसकी पूरी जानकारी आवश्यक है। बीमारी या दुर्घटना के समय इनमें किसी भी तरह की गड़बड़ी (असामान्यता) मरीज के जीवन–क्रम में असंतुलन पैदा कर देती है, जिसे यदि तत्काल न देखा जाए तो मरीज की स्थिति गंभीर हो सकती है और उसकी मृत्यु भी हो सकती है।

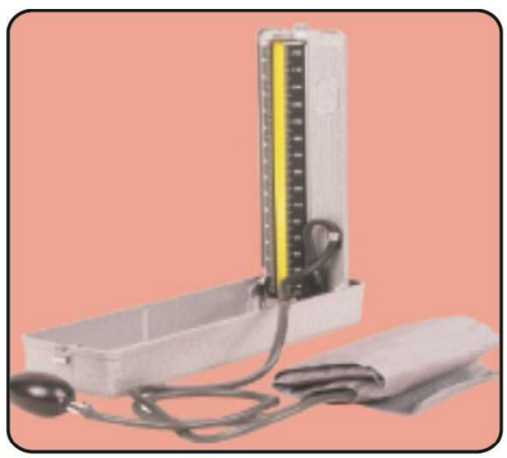

चित्र 4.1: रक्त दाब मापन उपकरण

**भार**

(1) जूते उतारकर और हल्के कपड़े में हर मरीज का भार लेना चाहिए।

(2) संभव हो तो नापने वाले स्केल के सहारे उसकी लंबाई को भी माप लें। (सारिणी देखें–)

(3) स्केल और सारणी में देख लेना चाहिए कि, व्यक्ति समानुपातिक है या मोटा (ओवरवेट) या पतला (अंडरवेट) है। उपचार क्रम में इसकी जरूरत पड़ती है।

टिप्पणी

| | आयु वर्ष | भार | | लम्बाई | |
|---|---|---|---|---|---|
| | | (कि.ग्रा.) | (पौंड) | (सेमी.) | (इंच) |
| शिशु | 0.0—0.5 | 6 | 13 | 60 | 24 |
| | 0.5—10 | 9 | 20 | 71 | 28 |
| बच्चे | 1—3 | 13 | 29 | 90 | 35 |
| | 4—6 | 20 | 44 | 112 | 44 |
| 7 – 10 वर्ष | 28 | 62 | 132 | 52 | |
| पुरुष | 11—14 | 45 | 99 | 157 | 62 |
| | 15—18 | 66 | 145 | 176 | 69 |
| | 19—22 | 70 | 154 | 177 | 70 |
| | 23—50 | 70 | 154 | 178 | 70 |
| | 51+ | 70 | 154 | 178 | 70 |
| महिलाएँ | 11—14 | 46 | 101 | 157 | 62 |
| | 15—18 | 55 | 120 | 163 | 64 |
| | 19—22 | 55 | 120 | 163 | 64 |
| | 23—50 | 55 | 120 | 163 | 64 |
| | 51+ | 55 | 120 | 163 | 64 |

लम्बाई अनुपात की सारणी

## रक्तचाप

चित्र 4.2: रक्त दाब मापते हुए

व्यक्ति का रक्तचाप उपचार में बहुत सहायक है। इसे स्फिग्मोमैनोमीटर (रक्तचाप मापी) के सहारे मापा जाता है। इसमें एक कपड़े के कफ (Cuff) को बाँह में लपेटते हैं, फिर पम्प की मदद से उसका दबाव बढ़ाते हैं जिसे, पारे के स्केल पर देखते जाते हैं। फिर, स्टेथोस्कोप की मदद से ब्रेकियल नाड़ी पर घटते दाब को महसूस करते हैं, जितने दाब पर पहली ध्वनि सुनाई देती है, उसे सिस्टोलिक या संकुचन दाब कहते हैं और जितने दाब पर नाड़ी की ध्वनि मंद हो जाती है, उसे डायस्टोलिक दाब कहते हैं। चित्र में स्फिग्मोमैनोमीटर तथा उससे रक्तचाप मापने का तरीका दिखाया गया है।

## तापमान

अनेक व्यक्तियों में तीव्र तापमान संकट का कारण होता है। इसे हम थर्मामीटर के सहारे मापते हैं। प्रत्येक थर्मामीटर में 95°F से 108°F तक का स्केल अंकित रहता है। इसका सही आंकलन इलाज में बहुत सहायक होता है।

टिप्पणी

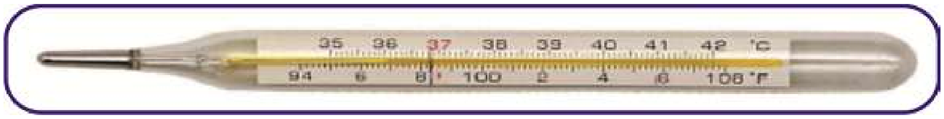


चित्र 4.3: क्लीनिकल थर्मामीटर

### नाड़ी–दर (Pulse Rate)

रोग के निर्धारण और उपचार में नाड़ी–दर की बड़ी महत्वपूर्ण भूमिका है। जब हमारा हृदय संकुचित होता है तो उसका स्पंदन हमारी नाड़ी में महसूस होता है। एक मिनट में नाड़ी, जितनी बार स्पंदन करती है, उसे नाड़ी–दर कहते हैं। सामान्यतः यह नियमित रहती है। किन्तु असामान्य परिस्थितियों में यह तीव्र (100/मिनट से अधिक), मंद (50/मिनट से कम) तथा अनियमित हो सकती है।

चित्र 4.4: नब्ज़–दर मापने के लिए उंगलियों के अग्रभाग का प्रयोग

इसे हम रेडियल धमनी के ऊपर, कलाई के पास महसूस करते हैं। इसे रेडियल–नाड़ी कहते हैं। इसके अलावा हम जाँघ के ऊपरी भाग में फिमोरल नाड़ी, गरदन के पास कैरोटिड नाड़ी, कोहनी के जोड़ के पास ब्रेकियल नाड़ी, पैर में डॉर्सल–पेडिस नाड़ी आदि के रूप मे महसूस करते हैं। आपात स्थितियों में यदि रेडियल–नाड़ी नहीं मिल रही है तो दूसरी नाड़ियों से भी रोगी की स्थिति का आंकलन कर सकते हैं।

### श्वसन

श्वसन की दर अर्थात् प्रति मिनट कितनी बार श्वास लिया जा रहा है। ये इमरजेंसी की स्थिति में भीतरी अवस्था का परिचायक होता है। इसके द्वारा हमें उपचार में सहायता मिलती है।

## 4.2 आपातकालीन स्थितियां

आइये, अब हम कुछ ऐसी स्थितियों की चर्चा करें जिसमें प्राथमिक उपचार, मरीज की जान बचाने में सहायक होता है–

टिप्पणी

## 4.2.1 प्रघात (Shock)

प्रघात अर्थात् शॉक एक ऐसी स्थिति है जो अचानक चोट लगने या आंतरिक हैमरेज (खून बहना) से उत्पन्न होती है। इस अवस्था में रक्तचाप कम हो जाता है, नाड़ी दर बढ़ जाती है, हृदय गति तीव्र हो जाती है। त्वचा पीली पड़ जाती है, ठंडा पसीना आने लगता है तथा संवेदना कम हो जाती है। संवेदना की कमी के बाद व्यक्ति बेहोश हो जाता है और समय पर सही उपचार न हो तो व्यक्ति मर भी सकता है।

- **लक्षण –**

  (क) रक्तचाप घटता जाता है और सिस्टोलिक रक्तचाप 90 से भी कम हो जाता है।

  (ख) हृदयगति तीव्र हो जाती है और साथ ही नाड़ी–दर भी तेज हो जाती है।

  (ग) त्वचा का रंग पीला पड़ जाता है।

  (घ) ठंडा पसीना आने लगता है।

  (ङ) श्वसन–दर भी तेज हो जाती है।

  (च) पेरिफेरल रक्तवाहिनी संकुचित हो जाती है।

  (छ) संवेदना कम हो जाती है, जो बेहोशी की अवस्था तक पहुँचा देती है।

  (ज) उल्टी और वमन की प्रवृति रहती है।

★ **शॉक के कारण और प्रकार**

(1) अत्यधिक रक्तस्राव के कारण (हिमरेजिक शॉक), चोट लगने के कारण आंतरिक हिमरैज–उदरीय रक्तस्राव, पेप्टिक अल्सर के कारण। चोट लगने के कारण–बाहरी रक्तस्राव।

(2) अत्यधिक डायरिया और वमन से हुये निर्जलन के कारण।

(3) पैन्क्रियाटाइटिस के कारण उत्पन्न शॉक।

(4) हृदय शैथिल्य या एरिद्मियाजनित शॉक।

(5) संक्रमण के कारण शॉक–इंडोटॉक्सिक शॉक, सेप्टिक शॉक।

(6) स्नायु आघात से उत्पन्न–न्यूरोजेनिक शॉक।

(7) इसके अलावा भी शॉक के कई अन्य कारण हैं– जिसकी चर्चा यहाँ जरूरी नहीं है। जैसे–इलेक्ट्रिक शॉक।

टिप्पणी

**प्राथमिक उपचार में भूमिकाः—**

(1) पैर को उठाकर रखें ताकि हृदय को अधिक से अधिक रक्त मिल सके।

(2) फेस मास्क के सहारे ऑक्सीजन से अन्तः श्वसन दें।

(3) यदि आंतरिक रक्तस्राव है तो रक्त—ट्रान्सफ्यूजन या उसके अभाव में प्लाजमा—एक्सपेन्डर चढ़ाने का सुझाव दें।

(4) हृदयगति, नाड़ी—दर, रक्तचाप, रक्त—ग्लुकोज़, रक्त—यूरिया पर निरंतर निगरानी रखें।

(5) मूल कारण का पता लगाकर उसका उपचार करें।

(6) मरीज को जल्द से जल्द अस्पताल पहुँचाने की व्यवस्था करें।

### 4.2.2 बिजली का झटका (Electric Shock)

जब कोई व्यक्ति बिजली—प्रवाह के संपर्क में आता है, तो उसे बिजली का झटका (Electric Shock) लगता है। यह झटका अक्सर गलती से दुर्घटनावश हो जाता है। इसका असर हमारे स्नायु, हृदय और श्वसन— तीनों तंत्र पर एक साथ पड़ता है।

**प्राथमिक उपचार में भूमिकाः—**

(1) प्रभावित व्यक्ति को यथाशीघ्र लकड़ी आदि कुचालक की सहायता से विद्युत—स्रोत से दूर हटाने की कोशिश करें तथा जल्दी से जल्दी विद्युत सप्लाई को बन्द करें।

(2) तुरन्त उपचार के तौर पर कृत्रिम रूप से मुँह से श्वसन दें, ऑक्सीजन दें तथा 5% ग्लूकोज—सेलाइन और रिंगर लैक्टेट के जरिये रक्तचाप को संतुलित करने की कोशिश करें।

(3) जितनी जल्द हो सके प्राथमिक उपचार के बाद, निकटतम अस्पताल में भेजने की कोशिश करें।

### 4.2.3 हाइपोथर्मिया (Hypothermia)

यह स्थिति सर्दियों के महीनों में बुजुर्गों, छोटे बच्चों व शिशुओं में उस समय विकसित होती है, जब तापमान शून्य डिग्री से नीचे चला जाता है। पहाड़ी क्षेत्रों में जब बच्चे व बुजुर्ग सर्दी से बचने का पर्याप्त उपाय नहीं कर पाते तो उनके शरीर का तापमान उत्तरोत्तर कम होने लगता है। यदि समय पर उपचार का समुचित प्रबंध नहीं हुआ तो प्रभावित व्यक्ति की मृत्यु भी हो सकती है।

टिप्पणी

★ **लक्षण**

(1) कमजोरी और थकान महसूस होती है।

(2) शरीर में थरथराहट और कंपन महसूस होती है।

(3) नब्ज़ और श्वसन कमजोर पड़ने लगता है।

(4) यदि उपचार तुरन्त नहीं हुआ तो मरीज की मृत्यु भी हो सकती है।

**प्राथमिक उपचार में भूमिकाः—**

1. मरीज के गीले कपड़ों को तुरन्त उतार दें।
2. उसे किसी सूखे गरम स्थान पर आग या हीटर के समीप रखें।
3. पूरे शरीर को कंबल या रजाई से ढक दें।
4. पैरों के नीचे गरम पानी की बोतल रखें और उससे गरम करें।
5. पीने के लिए गरम पानी, तुलसी, अदरक, काली मिर्च, लौंग वाली चाय, कॉफी आदि दें।
6. अपेक्षित सुधार नहीं हो तो जल्द से जल्द अस्पताल भेजने की व्यवस्था करें।

## 4.2.4 शीत शोथ या शीत—दंश (Chill-Blens or Frostbite)

जब तापमान 0°C या उससे भी नीचे चला जाता है तो बाहर का तापमान बहुत ठंडा हो जाता है तथा शरीर के वे अंग जो हवा के संपर्क में रहते हैं, जैसे हाथ—पैर लाल—लाल होकर थोड़ा सूज जाते हैं, उनमें जलन और खुजलाहट महसूस होती है। इस स्थिति को हम, **शीत—शोथ** (Chill-blens) कहते हैं। यदि समय पर उपचार न हो तो स्थिति और गंभीर हो जाती है, उस अंग—विशेष में रक्त प्रवाह बहुत कम हो जाता है और वह नीला पड़ जाता है, इस स्थिति को शीत—दंश (Frostbite) कहते हैं। यदि उपचार में और विलंब हुआ तो वह अंग और गहरा नीला हो जाता है, जिसे शुष्क गैन्ग्रीन (dry gangrene) कहते हैं। समय पर उपचार नहीं हुआ, तो गैंग्रीनयुक्त अंग को काटना पड़ सकता है।

**प्राथमिक उपचार में भूमिकाः—**

(1) प्रभावित व्यक्ति को गरम कमरे में हीटर या अलाव के पास रखें।

(2) प्रभावित अंग (हाथ/पैर) को गरम पानी में डुबोकर उसे गरम करें (बहुत गरम नहीं)।

(3) गरम करने के बाद, उसे ठंड के कुचालक गरम कपड़े से ढ़ककर रखें।

(4) प्रभावित व्यक्ति को यथाशीघ्र अस्पताल भेजने का प्रबंध करें।

टिप्पणी

## 4.2.5 एनाफायलैक्सिस (Anaphylaxis)

किसी बाह्य पदार्थ (Foreign Substance) के संपर्क में आने पर, शरीर उसके विरूद्ध जो तीव्र एलर्जिक रिएक्शन प्रदर्शित करता है, उसे हम एनाफायलैक्सिस कहते हैं। यह रिएक्शन किसी भी चीज से हो सकता है यथा दवाइयों, विशेष भोजन, धूल या अन्य एलर्जिक तत्व, मधुमक्खी, बिच्छू का डंक आदि। कोई–कोई व्यक्ति एक या एक से अधिक चीजों के प्रति अति उच्च संवेदनशीलता प्रदर्शित करता है जिसके परिणामस्वरूप यह रिएक्शन होता है। शरीर में प्रतिक्रिया स्वरूप ये बातें देखने को मिलती हैं–

(1) रक्तचाप में कमी

(2) श्वास लेने में कठिनाई

(3) त्वचा पर लाल–लाल चकते(Urticarial Rashes)

(4) बोलने में कठिनाई

(5) अर्धबेहोशी–बेहोशी

बहुत सी दवाइयाँ भी एनाफाइलैक्सिस के लक्षण, किसी–किसी व्यक्ति में प्रदर्शित करती हैं। ये लक्षण दवा लेने के तुरन्त बाद से लेकर एक आदि घंटे के बाद उभरते हैं। पर इंजेक्शन, मधुमक्खी या कीड़े के डंक के बाद यह प्रतिक्रिया तुरन्त देखने को मिलती है।

एनाफायलैक्सिस पैदा करने वाले एजेन्ट–

### औषधियाँ–

पेनिसिलीन, एम्पीसीलीन, एमॉक्सिसिलीन, सल्फा ग्रुप की दवाइयाँ, टेट्रासायक्लिन। NSAID दवाइयाँ–डिक्लाफेनैक, एसिक्लाफेनैक आदि। लोकल एनीस्थिसिया में प्रयुक्त दवाइयाँ–लिग्नोकेन, ब्युपीनाकेन आदि। विटामिन $B_1$, $B_6$, $B_{12}$ का इंजेक्शन, ट्रिपल एन्टीजन, आयोडीनयुक्त रेडियोग्राफिक एजेन्ट, बहुत से हार्मोन–जैसे बोवाइन इन्सुलीन आदि।

★ **अन्य चीजें**

बहुत सी मछलियाँ– झींगा मछली आदि। बहुत से फूल के पराग, धूल, मकड़ी का जाला, कीड़ा आदि। मधुमक्खी, ततैया, जेलीफिश, बिच्छू आदि का विष। बहुत लोगों को दूध और अंडे से भी अतिसंवेदी प्रतिक्रिया हो सकती है।

### प्राथमिक उपचार में भूमिका:–

ऐसी किसी भी तरह की प्रतिक्रिया व्यक्ति की जान का खतरा बन सकती है अतः इसका उपचार तुरन्त शुरू करें। यह बहुत गंभीर तरह की प्रतिक्रिया है।

(1) तुरन्त एविल या अन्य एलर्जीरोधी औषधि दें।

(2) श्वसन को सपोर्ट करते हुए शीघ्रातिशीघ्र निकटतम चिकित्सक या अस्पताल में भेजने की व्यवस्था करें।

(3) रक्तचाप कम हो तो ग्लूकोज़—सेलाइन या रिंगर—लैक्टेट चढ़वाने का प्रबंध करें।

(4) गंभीर स्थिति में स्टेरॉयड—यथा हाइड्रोकॉर्टिसोन या डेक्सामिथासोन का इन्जेक्शन मरीज को दिलवाने की व्यवस्था करें।

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 4.1

जोड़े मिलाइए:—

| | (क) | | (ख) |
|---|---|---|---|
| 1. | नाड़ी दर | (i) | एविल |
| 2. | प्रघात | (ii) | हाथ—पैर का लाल होना |
| 3. | शीत दंश | (ii) | रेडियन धमनी के ऊपर |
| 4. | एनाफायलैक्सिस | (ii) | उदरीय रक्तस्राव |

### 4.2.6 श्वासनली में कोई बाहरी पदार्थ अटकने पर (Foreign body in Trachea)

यह अक्सर शिशुओं या बच्चों में होता हुआ देखा गया है। बच्चे खेल—खेल में अपने मुँह में छोटी—छोटी चीजें डालते रहते हैं —जैसे सिक्का, खिलौने के टुकड़े, पत्थर, पार्ट—पुर्जे, पौधों के बीज आदि। खाँसी या छींक के समय ये पदार्थ झटके के साथ श्वास नली में प्रवेश कर जाते तथा कई परेशानियाँ पैदा करते हैं। जैसे—

(1) श्वासावरोध — साँस लेने में कठिनाई।

(2) खाँसी

(3) श्वास लेते और छोड़ते वक्त सिसकार (Hiss) की ध्वनि। यह स्थिति चिकित्सकीय दृष्टि से आपात स्थिति है। इसका तुरन्त उपचार बहुत जरूरी है।

**प्राथमिक उपचार में भूमिका:—**

(1) यदि बच्चा छोटा है तो उसे उल्टा लटकाकर पीठ पर थपकी देते हैं। अधिकतर मामले में बाहरी पदार्थ बाहर निकल जाता है।

(2) यदि बच्चा बड़ा है और उसे पैर पकड़कर उल्टा नहीं लटकाया जा सकता है तो उसके सिर को आगे की ओर झुकाकर पीछे से उसकी छाती पर हाथ रखकर पीठ पर और छाती पर झटका देने से वह बाहरी पदार्थ बाहर आ जाता है।

टिप्पणी

(3) हीमलिच मैन्यूवर का तरीका (Heimlich Manuver) अपनाएं।

## हीमलिच मैन्यूवर (Heimlich Maneuver)

बड़े बच्चों में यह तरीका प्रयुक्त होता है। इस पूरी प्रक्रिया के निम्नलिखित चरण हैं–

(क) मरीज को खड़ा करके उसके पीछे खड़े हो जाएं। उसकी काँख से अपना हाथ घुमाकार नाभि के नीचे उसके पेट को जकड़कर रखें।

(ख) मरीज के सर और गर्दन को आगे की ओर झुकाकर रखें।

(ग) दोनों हाथों को जोड़कर स्टर्नम के नीचे पीड़ित का जोर से आलिंगन करें।

(घ) ध्यान रखें कि आपका हाथ स्टर्नम को नहीं छुए वरना आंतरिक अंगों को क्षति पहुँच सकती है।

(ङ) दोनों मुट्ठियों को पेट के बीच में रखकर झटके से अचानक दबाएं। इस प्रक्रिया को 5 से 7 बार दोहराएं।

इन तरीकों से अधिकांश मरीजों की श्वास–नली में फँसा पदार्थ बाहर आ जाता है। पर यदि ऐसा न हो तो मरीज को तत्काल अस्पताल ले जाएं जहाँ लैरिन्जोस्कोप (Laryngoscope) तथा अन्य उपकरणों की मदद से उसे बाहर निकाला जा सके।

## 4.2.7 कुत्ते का काटना (Dog Bite)

यदि रेबिज से ग्रस्त कुत्ते ने काटा है तो अक्सर कुछ दिनों के बाद रेबीज के लक्षण प्रकट होने लगते हैं। ये लक्षण कुत्तों के अलावा संक्रमित बिल्ली, लोमड़ी, भालू, बंदर, भेड़िये, यहाँ तक कि चमगादड़ के काटने से भी हो सकते हैं। काटने के तुरन्त बाद यदि मरीज का टीकाकरण या उपचार नहीं हुआ तो रेबीज रोग हो सकता है।

चित्र 4.5: कुत्ते का काटना

### लक्षण

(अ) जानवरों में –

(क) असामान्य व्यवहार – अनावश्यक और अनपेक्षित रूप से वह उत्तेजित और बेचैन रहता है।

(ख) वह अचानक उग्र स्वभाव का हो जाता है। बिना कारण के किसी पर आक्रमण करने को प्रस्तुत रहता है।

टिप्पणी

(ग) मुँह से झाग आना – मुँह से अत्यधिक झाग आता है, वह खा–पी नहीं पाता है।

(घ) अस्वाभाविक व्यवहार परिलक्षित होने के दस दिनों के अंदर वह जानवर मर जाता है।

**(ब) आदमी में –**

(a) स्नायु–तंत्र में गड़बड़ी होने से अनावश्यक उत्तेजना रहती है।

(b) लार बहुत गाढ़ा हो जाने से निगलने में कठिनाई होती है।

(c) पानी पीने में भय होता है – इसे हाइड्रोफोबिया कहते हैं।

(d) बार–बार दौरे पड़ते हैं लकवा – जो अंत में मृत्यु का कारण बनते हैं।

ध्यान देने की बात यह है कि प्रभावित व्यक्ति के लार, मूत्र तथा पसीने में रेबीज के वायरस मिल सकते हैं। प्रभावित पशु के दूध आदि के संपर्क में ना आएं। कभी भी मुँह से मुँह की साँस रेबीज के मरीज में न दें।

**प्राथमिक उपचार में भूमिकाः–**

(1) अगर संभव हो तो काटने वाले पशु को बाँधकर/पिंजरे में बन्द करके रखें।

(2) काटे हुए स्थल को साबुन और पानी के तेज धार में अच्छी तरह रगड़कर साफ कर दें। उस जगह पर हाइड्रोजन– पेराक्साइड से साफ करके उस पर कोई एन्टीसेप्टीक क्रीम या लोशन लगा दें।

(3) घाव को खुला रखें, टांके न लगाएं। टांके लगाने से वायरस ज्यादा तेजी से शरीर में प्रसार करता है।

(4) इतने उपचार के बाद व्यक्ति को तत्काल अस्पताल ले जाए ताकि उसे एन्टी रेबीज वैक्सीन आदि जल्द से जल्द दिया जा सके।

(5) काटने वाला जानवर सामान्यतः 10 से 14 दिनों में मर जाता है। यदि वह दूसरे कारण से मरा हो या मार दिया गया हो तो भी उसका पूर्ण उपचार और जरूरी हो जाता है। याद रखें, एक बार लक्षण उभर कर दिखाई देने लगें तो इसमें शत प्रतिशत केस में मृत्यु हो सकती है, अतः बचाव ही इसका उपाय है।

## 4.2.8 कान का दर्द (Ear Ache)

कान में दर्द, प्रायः कान में संक्रमण के कारण होता है।

बाहरी कान में कभी कोई घाव या मैल जमा हो जाने से दर्द होता है। रोगी के कान में दर्द, टीस, खुजलाहट, सुनाई कम देना, कान का लाल हो जाना ये सब लक्षण दिखाई देते हैं।

टिप्पणी

**प्राथमिक उपचार में भूमिकाः—**

(1) दर्द के लिए पैरासिटामोल की गोली दें, इससे दर्द कम हो जायेगा।

(2) यदि पीड़ित व्यक्ति को बुखार आये या कान से मवाद आए तो, चिकित्सक की सलाह लें।

(3) कान में मैल घुलाने वाली दवा (सेरूक्लीन, वैक्सॉर्ट आदि) डालते हैं, इससे मैल घुलकर बाहर आ जाता है। नहीं आए तो चिकित्सक उसे सिरिन्जिंग (Syringing) करके या अन्य उपकरण के सहारे बाहर निकाल देते हैं।

**क्या न करें**

(1) कान से मवाद आ रहा हो तो स्वयं उपचार न करें।

(2) कान में कभी बोरो ग्लीसरीन या हाइड्रोजन पेरॉक्साइड ना डालें।

**ध्यान रखने योग्य बातें—**

(1) तत्काल विशेषज्ञ चिकित्सक की मदद से उपचार आरंभ करें।

(2) देर करने से कई घातक संक्रमण के फैलने और मस्तिष्क तक पहुँचने का भय बना रहता है।

(3) शिशु को पीठ के बल लिटाकर बोतल से दूध न पिलाने की सलाह दें। यह नाक या कान में पहुँचकर संक्रमण पैदा कर सकता है।

(4) जुकाम में बच्चों को बहुत जोर लगाकर छींकने से मना करें।

## 4.2.9 कान में बाहरी चीज का घुस जाना (Foreign Body in Ear)

जब कभी कान में अनाज, बीज, कोई कीड़ा, मच्छर आदि घुस जाता है तो यह परेशानी का कारण बन जाता है। और उस कान में दर्द, चक्कर आना और कम सुनाई देना आदि लक्षण दिखाई देते हैं।

**प्राथमिक उपचार में भूमिकाः—**

(1) बाह्य कान को खींचकर बच्चे के सिर को नीचे की ओर करते हैं इससे कीटाणु या तो मर जाता है या बाहर आ जाता है।

(2) कान में टॉर्च की तेज रोशनी डालने पर भी उससे कीड़ा बाहर आ जाता है, खासकर जबकि कीड़ा जीवित है। कान में थोड़ा गरम नारियल या सरसों का तेल डालने से भी कीड़ा मरकर बाहर आ जाता है।

### ध्यान रखने योग्य बातें–

(1) कान के भीतर कोई भी धारदार या नुकीली वस्तु न डालें।

(2) माचिस की तीली से कान साफ न करें।

(3) यदि प्राथमिक उपचार से सफलता न मिले तो तत्काल अस्पताल या स्वास्थ्य केन्द्र पर ले जाएं ताकि उसका विशिष्ट उपकरणों और विशेषज्ञ चिकित्सकों के द्वारा सही उपचार हो सके।

## 4.2.10 घाव से रक्त स्राव (Bleeding from Wound)

चोट लगने के बाद कटे–फटे जगह से कभी–कभी खून बहता रहता है। जब रोकने के सरल उपायों से भी इसे नहीं रोका जा सके, तो इसका प्राथमिक उपचार आवश्यक है।

(1) चोट लगे हुए हिस्से को ऊपर की ओर उठाएं।

(2) साफ कपड़े (हो सके तो स्टरलाइज्ड) की मदद से खून बह रहे जगह पर दबाव डालें ताकि खून बन्द हो जाएं।

(3) फिर भी खून बन्द न हो तो हाथ या पैर की चोट की जगह के ऊपर तथा घाव पर टाइट बैंडेज बाँध दें। हो सके तो इसमें संकुचन (कंस्ट्रक्टिव) बैंडेज लगाएं।

(4) हाथ या पैर को (जहाँ चोट लगी है) ऊँचा रखने का प्रयास करें।

चित्र 4.6: क्षति रोकने के लिए कंस्ट्रक्टिव बैंडेज

### ध्यान रखने योग्य बातें–

(a) उसे इतना कस कर ना बाँधें की रक्त प्रवाह अवरूद्ध हो जाए और वह नीला पड़ जाए।

(b) बाँधने के लिए तार, डोरी या मोटी रस्सी का प्रयोग न करें।

(c) बाँधे हुए हिस्से को आधे घंटे में एक बार खोल कर देख लें, रक्त का बहना बन्द हुआ या नहीं। अगर नहीं हुआ तो उसे फिर से बाँध दें और तुरन्त उचित उपचार के लिए अस्पताल के लिए रैफर करें। सामान्यत: 5 से 6 मिनट में खून का बहना रूक जाता है।

(d) खून बहने से रोकने के लिए गोबर, मिट्टी का प्रयोग न करें।

## यूनिटगत प्रश्न 4.2

रिक्त स्थान भरिए–

1. कान के भीतर कभी भी कोई .......................................वस्तु न डालें।

टिप्पणी

2. बड़े बच्चों की श्वासनली में अटके हुए किसी बाहरी पदार्थ को निकालने के लिए ............................तरीके का प्रयोग किया जाता है।

3. घाव से हो रहे रक्त स्राव को रोकने के लिए .............................बैंडेज का प्रयोग किया जाता है।

4. कुत्ते के काटने पर ...........................वैक्सीन जल्द से जल्द लगवानी चाहिए।

5. कान के दर्द को कम करने के लिए .......................... की गोली दें।

## 4.2.11 नाक में बाहरी वस्तु जाना (Foreign body in Nose)

कई बार बच्चे मिट्टी, अनाज के दाने जैसे— चना, मटर, राजमा आदि नाक में डाल लेते हैं। कोई भी बाहरी वस्तु नाक में हो तो नाक से सफेद रंग का श्लेष्मा स्रावित होता है जो अवरोध के कारण संक्रमित होकर पीला पड़ जाता है, इससे बदबू आने लगती है तथा नाक में दर्द होता है।

**प्राथमिक उपचार में भूमिकाः—**

(1) यदि बच्चा बड़ा है तो उसे छींक मारने तथा तेजी से नाक से हवा निकालने को कहें।

(2) यदि वह वस्तु भीतर चली गई हो, या बच्चा छोटा हो तो उसे तुरन्त अस्पताल ले जाकर उचित चिकित्सकीय उपचार उपलब्ध कराएं।

## 4.2.12 नाक से खून बहना (Bleeding from Nose)

सामान्यतः नाक से खून निम्न कारणों से आता है —

(a) खुजलाते समय नाक का ज़ख्मी हो जाना।

(b) नाक में दाना (Pimple) होना ।

(c) चोट के कारण नासिका की दीवार का जख्मी हो जाना।

(d) उच्च रक्तचाप से नासिका की रक्तवाहिनी नलियों का फट जाना।

**प्राथमिक उपचार में भूमिकाः—**

(a) मरीज को शान्त रहने के लिए कहें।

(b) नाक के कोमल भाग को करीब 5 मिनट तक दबा कर रखें।

(c) नाक के बाहरी भाग पर बर्फ रगड़ें व सिर पर ठंडा पानी डालें।

(d) वैसीलीन में भिगोकर, गॉज को नासिका छिद्र में डालकर पैक करें और पुनः कोमल भाग दबाएं।

(e) रोगी को तुरन्त अस्पताल के लिए रैफर करें।

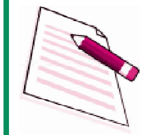

टिप्पणी

## कान, आँख व नाक में ड्राप डालना (Ear Eye, and Nasal drops)

### इयर ड्राप (Ear drops) के प्रयोग के चरण

1. सिर को एक ओर झुका लें या कान को ऊपर की ओर करके लेट जाएं।
2. धीरे से बाहरी कान को खींचे ताकि कर्णनलिका नजर आ सके।
3. डाक्टर द्वारा बताए गए अनुसार कान में निर्धारित मात्रा में ड्राप डालें।

चित्र 4.8: कान में ड्रॉप का प्रयोग

4. सिर को दूसरी ओर मोड़ने से पूर्व पांच मिनट का इंतजार करें।
5. बूंदों (ड्राप) को डालने के पश्चात् कर्णनलिका को रूई से तभी बन्द करें, यदि दवा विनिर्माता द्वारा ऐसे निर्देश दिए गए हों।
6. कान में डालने वाले तेल आदि को अधिक गर्म नहीं करना चाहिए।
7. यदि इसकी बोतल खुली है तो उसे 15 दिन के भीतर ही प्रयोग करें। इस अवधि के बाद इसका प्रयोग न करें।

### आंखों की ड्राप (Eye drops) के प्रयोग के चरण –

1. अपने हाथों को ठीक से साबुन व पानी से धो लें।
2. ड्रॉपर के सिरे (opening) को न छुएं।
3. ऊपर की ओर देखने को कहें।
4. निचली पलकों को नीचे की ओर खीचें ताकि एक 'मोरी' बन सके।
5. ड्रापर को यथा सम्भव मोरी के समीप लाएं किन्तु उसे आंखों से न छुएं।
6. मोरी में 'निर्धारित' मात्रा में बूंदें डालें।
7. आंखों को लगभग दो मिनट के लिए बन्द रखने के लिए कहें। आंखों को अधिक जोर से बन्द न करें।

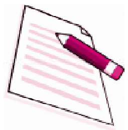

टिप्पणी

8. अतिरिक्त तरल टिश्यू पेपर के साथ निकल सकता है।
9. यदि एक से अधिक प्रकार के ड्रापों का प्रयोग किया जा रहा हो तो एक प्रकार व दूसरे प्रकार के ड्रापों के प्रयोग के बीच में पांच मिनट का अन्तर होना चाहिए।
10. आंखों की ड्राप जलन भी उत्पन्न कर सकती है, किन्तु यह जलन कुछ मिनटों से अधिक नहीं रहनी चाहिए। यदि ऐसा होता है तो सम्बंधित डाक्टर से सम्पर्क करें।

★ **बच्चों की आंख में ड्रॉप डालते समय ध्यान में रखने वाली बातें—**

1. बच्चे को सीधे सिर की स्थिति में लिटाएं।
2. बच्चे की आंखें बन्द होनी चाहिए।
3. आंख के कोने में ड्राप की निर्धारित मात्रा डालें।
4. सिर को सीधा रखें
5. अतिरिक्त तरल को साफ कर लें।

★ **बच्चों को नासिका ड्राप (Nasal drops) देना —**

1. नाक से हवा निकालने को कहें।
2. बैठने को कहें तथा सिर को कसकर पीछे की ओर करें या लेटकर अपने कंधों के नीचे तकिया रख कर सिर को सीधा रखने को कहें।
3. नासिका छिद्र के भीतर एक सेंटीमीटर तक ड्रॉपर को डालें।

## 4.2.13 आन्तरिक रक्तस्राव (Internal Haemorrhage)

आन्तरिक रक्तस्राव को प्रच्छन्न रक्तस्राव (concealed heamorrhage) भी कहते हैं, क्योंकि रक्तस्राव को बाहर से नहीं देखा जा सकता है तथा स्राव आन्तरिक अंगों जैसे आंत, उदर, लीवर, स्प्लिन, किडनी आदि में होता है। कई बार रक्तस्राव को मल—मूत्र, वमन तथा गर्भाशय स्राव के रूप में देखा जा सकता है। जब कभी आन्तरिक रक्तस्राव की आशंका उत्पन्न हो तो निम्नलिखित संकेतों व लक्षणों को देखना चाहिए—

1. यदि रक्त बाहर निकलता है तो उसमें पीलापन या पीला रंग होता है।
2. शीत पसीनेदार त्वचा
3. अत्यधिक प्यास लगना
4. चक्कर आना व बेहोशी का अहसास होना
5. बेचैनी
6. तीव्र एवं मंद नब्ज

7. श्वसन के साथ जंभाई आना
8. बेहोशी की अवस्था
9. काला मल (Malena)

**कारण** — उदर में चोट, पैप्टिक अल्सर, किडनी—स्टोन आदि।

टिप्पणी

> **प्राथमिक उपचार में भूमिकाः—**
>
> मरीज को नीचे लिटा दें। पैरों को ऊपर की ओर उठाएं ताकि महत्वपूर्ण अंगों जैसे— हृदय, फेफड़ों व लीवर आदि को अधिक रक्त उपलब्ध हो सके। यदि उसे जी. आई. ट्रैक्ट का रक्त स्राव नहीं हो रहा तो सांत्वना दें तथा चाय या गर्म दूध पीने को दें। तुरन्त सम्बंधित चिकित्सालय को रेफर करें।

## 4.3 बैंडेज (Bandages)

बैंडेज दो प्रकार के हो सकते हैंः—

1. रोलर बैंडेज
2. त्रिकोणीय बैंडेज

चित्र 4.9: पैरों के लिए प्रयोग किया जाने वाला रोलर बैंडेज

### (1) रोलर बैंडेज

मोटी बुनाई वाले कपड़े से बना होता है जो विभिन्न व्यासों यथा ½",1", 2" में उपलब्ध होता है तथा सामान्यतः इसका प्रयोग चोटों पर लगाने के लिए किया जाता है।

### (2) त्रिकोणीय बैंडेज (Triangular bandage)

एक मीटर वर्गाकार कपड़े से बनता है। इसे दो टुकड़ों में काट लें तथा इसे घेर लें। इसे बांधते समय इसके छोरों पर रीफ गांठ बांधें, जो फिसलती नहीं है। एक ग्रैनी गांठ फिसल जाती है। त्रिकोणीय बैंडेज को शीर्ष बैंडेज के रूप में प्रयोग किया जा सकता है या उसे गोफन (sling) के रूप में प्रयोग किया जा सकता है।

चित्र 4.10: हाथ लटकाने के लिए प्रयोग किया जाने वाला त्रिकोणीय बैंडेज

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 4.3

निम्नलिखित के सामने सही (✓) या गलत (×) का निशान लगाएं–

1. नाक से बहते खून को रोकने के लिए नाक के कोमल भाग को करीब 5 मिनट तक दबा कर रखें। ( )
2. इयर ड्राप की शीशी खुलने के बाद दो महीने तक प्रयोग की जा सकती है। ( )
3. दवा डालने के पश्चात् आंखों को लगभग 2 मिनट तक बंद रखना चाहिए। ( )
4. उदर में चोट व पैप्टिक अल्सर के कारण आन्तरिक रक्तस्राव हो सकता है। ( )
5. रोलर बैंडेज का प्रयोग गोफन (Sling) के रूप में किया जाता है। ( )

चित्र 4.11: प्राथमिक उपचार किट

### प्राथमिक उपचार बॉक्स (First Aid Box)

प्राथमिक उपचार बॉक्स के लिए आवश्यक वस्तुएं निम्नानुसार हैं –

- छोटा प्लास्टिक पात्र (बाउल) – कटे व चोट लगे भागों को साफ करने के लिए
- रूई – ड्रेसिंग के रूप में पट्टी के साथ प्रयोग के लिए
- विसंक्रमित ड्रेसिंग – चोटों के ऊपर लगाने लिए
- रोलर बैंडेज – ड्रेसिंग को स्थिर बनाने के लिए
- मैग्निफाईग ग्लास – स्प्लिंटरों का पता लगाने के लिए
- चिमटियां – स्प्लिंटरों को बाहर निकालने के लिए
- ग्लूकोज़ – प्रघात लगने की स्थिति में देने के लिए
- चिपकने वाली ड्रेसिंग – हल्के कटों व खरोचों के लिए
- कैंची – बैंडेज को काटने के लिए
- सेफ्टी पिन – बैंडेज पर लगाने के लिए

टिप्पणी

| | | |
|---|---|---|
| • | पेपर टिशु | — चोट पर लगी धूल को हटाने के लिए |
| • | पट्टी | — चोट पर रूई के साथ लगाने के लिए |
| • | बर्नोल | — जले भाग पर लगाने के लिए |
| • | फेरी पोटेशियम परमैंगनेट | — चोट पर लगाने के लिए (लाल दवा) |
| • | डेटॉल | — चोटों को साफ करने के लिए |
| • | स्प्लिन्ट्स (Splints) | — टूटी हड्डी को सहारा देने के लिए |
| • | टोरनिकेट (Tourniquet) | — रक्तस्राव रोकने के लिए |
| • | साबुन | — सफाई के लिए |
| • | ब्लेड | — काटने/चीरा लगाने के लिए |
| • | हल्दी | — चोट में लागने के लिए |
| • | शहद | — बी.पी. कम होने, घबराहट होने, शुगर स्तर निम्न होने पर, सेंधा नमक को जल में एक चम्मच शहद के साथ देने के लिए |
| • | मुल्तानी मिट्टी पाउडर | — गर्मियों में दाने व त्वचा सम्बंधी रोगों में लेप के लिए |
| • | सेंधा नमक | — बी.पी. कम होने पर, जीभ के नीचे एक चुटकी नमक रखने के लिए |

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट में आपने मानव जीवन को बचाने के लिए, समय पर प्राथमिक उपचार दिए जाने के महत्व के संबंध में अध्ययन किया। आपने यह भी समझा कि संकेतों व लक्षणों का पता लगाकर कब और कहाँ प्राथमिक उपचार उपलब्ध कराना चाहिए। प्राथमिक उपचार स्थितियों को और अधिक खराब होने से बचाता है।

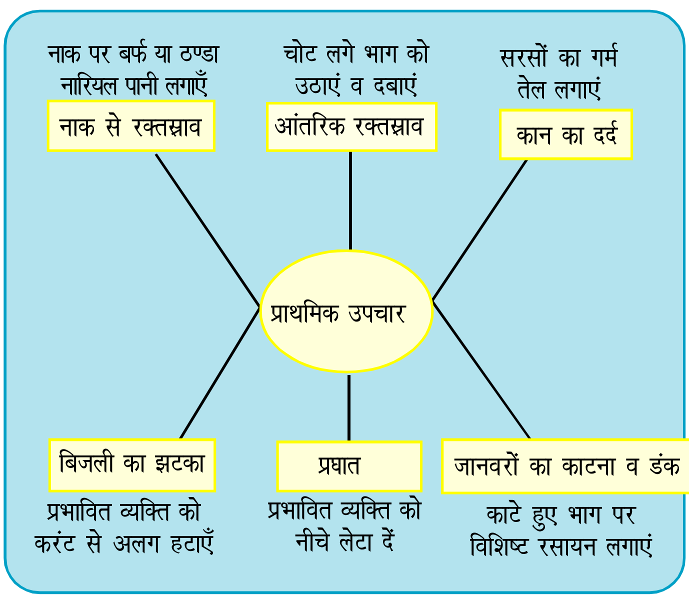

टिप्पणी

## यूनिटांत प्रश्न

1. हाइपोथर्मिया क्या है? इसके संकेत लक्षणों तथा उपचार का वर्णन कीजिए।
2. आंखों के ड्रॉप के प्रयोग के चरणों का उल्लेख कीजिए।
3. प्राथमिक चिकित्सा बॉक्स में क्या—क्या सामग्री रखनी चाहिए व क्यों?
4. आन्तरिक रक्तस्राव क्या है? प्राथमिक चिकित्सा के साथ उल्लेख कीजिए।
5. बैंडेज के दो प्रकारों की तुलना करते हुए, इसके महत्व का वर्णन कीजिए।

## यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

### 4.1

1. (iii)
2. (iv)
3. (ii)
4. (i)

### 4.2

1. धारदार/नुकीली
2. हीमलिच मैन्यूवर
3. संकुचन
4. एन्टी रेबीज़
5. पैरासिटामोल

### 4.3

1) सही
2) गलत
3) सही
4) सही
5) गलत

# 5

# सम्यक स्वास्थ्य

प्रसन्नता प्राप्त करने तथा कार्य संबंधी अपनी क्षमता को बनाये रखने के लिए प्रत्येक व्यक्ति का अच्छा स्वास्थ्य महत्वपूर्ण है। हमारे स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले अनेक कारक हैं। इनमें से कुछ मुख्य घटकों जैसे संतुलित आहार, स्वच्छ जल तथा स्वच्छ पर्यावरण का हमारे स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जबकि अन्य कारक जैसे अशुद्ध जल, जीवाणु से होने वाले रोग तथा प्रदूषित वातावरण हमारे स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।

आपने अपने दादा–दादी या अधिकतर बुजुर्गों को कहते सुना होगा कि आप स्वस्थ रहना चाहते हैं तो आपको कुछ निश्चित नियमों का अनुपालन करना होगा। प्रतिदिन आपसे कुछ निश्चित क्रियाओं को पूरा करने को कहा जाता है जैसे दांतों को साफ करना, स्नान करना, नियमित समय पर अच्छा व पौष्टिक भोजन खाना, रात को जल्दी सोना व प्रातः जल्दी उठना और नियमित रूप से व्यायाम करना, आदि। क्या आपने सोचा है कि आपसे यह सब क्यों कहा जाता है? क्या होगा यदि आप प्रतिदिन स्नान नहीं करेंगे? क्या होगा यदि आप रात को देर से सोयेंगे? क्या होगा यदि आप पौष्टिक आहार नहीं खायेंगे? क्या आप इनकी कल्पना कर सकते हैं? यदि आप केवल खाते ही रहें और काम भी न करें तो आपका शरीर कैसा दिखने लगेगा? साथ ही ज़रा सोचें जब हम प्रकृति से दूर रहें तो क्या होगा?

आप यह कैसे पता लगा सकते हैं कि आप स्वस्थ हैं या नहीं? इसके लिए आप किन सूचकों को देखेंगे? इस यूनिट में हम इन सभी महत्वपूर्ण बातों पर चर्चा करेंगे।

## उद्देश्य

इस यूनिट के अध्ययन के पश्चात् आप :

- स्वास्थ्य तथा इसके पहलुओं को परिभाषित कर सकेंगे;
- स्वास्थ्य के शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक पहलुओं का वर्णन कर सकेंगे;

टिप्पणी

- अच्छे स्वास्थ्य के आधार जैसे– आहार, नींद, आराम, व्यायाम आदि पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- अच्छे स्वास्थ्य के सूचकों को पहचान सकेंगे और इनकी सूची तैयार कर सकेंगे; और
- रोगों के मूलभूत कारणों की व्याख्या कर सकेंगे।

विश्व स्वास्थ्य संगठन ने सम्यक स्वास्थ्य को परिभाषित किया है कि "यह केवल रोग अभाव की अवस्था नहीं बल्कि शारीरिक, मानसिक, सामाजिक तथा आध्यात्मिक जीवन क्षमता की पूर्ण रूप से संतुलित अवस्था है।"

## 5.1 सम्यक स्वास्थ्य की अवधारणा

स्वास्थ्य तंदुरूस्ती की सकारात्मक स्थिति है जहाँ शरीर तथा मन का प्रत्येक भाग अन्य भागों के सामन्जस्य में तथा उचित क्रियात्मक संतुलन में होता है। ठीक ही कहा गया है कि केवल वही व्यक्ति वास्तव में स्वस्थ है जिसके स्वस्थ्य शरीर में स्वस्थ मन विद्यमान है। स्वास्थ्य, जीवन की वह विशेषता है जो व्यक्ति को दीर्घायु बनाती है।

शारीरिक स्वास्थ्य का अर्थ है – सुडौल शरीर, औसत कद, वजन, बीमारी का अभाव आदि। यह नियमित शारीरिक व्यायाम, उचित आहार व पोषण तथा यथोचित शारीरिक विश्राम के द्वारा ही संभव है। मानसिक स्वास्थ्य जिसमें व्यक्ति अपनी क्षमताओं को पहचान सके तथा उत्पादक व उपयोगी कार्यों के द्वारा अपने समाज व परिवार के प्रति अपना योगदान दे सके। साथ–साथ वे परिस्थितियाँ जिनमें व्यक्ति विकास, जीविका निर्वाह के साथ–साथ अपने कार्यों में भी उन्नत रहे व तनाव मुक्त व त्रुटिपूर्ण जीवन का आनंद उठा सके।

यदि एक व्यक्ति रोगमुक्त है या अच्छी शारीरिक स्थिति में है, किन्तु चिन्ता, तनाव, शरीर क्रोध, लालसा आदि से ग्रस्त है तो उस व्यक्ति को स्वस्थ व्यक्ति नहीं कहा जा सकता है। इसलिए शारीरिक स्वास्थ्य के साथ–साथ हमें मानसिक तथा भावात्मक स्वस्थता को भी ध्यान में रखना चाहिए। केवल तभी आध्यात्मिक और सामाजिक स्वास्थ्य को प्राप्त किया जा सकता है और मनुष्य समाज के कल्याण की ओर अग्रसर हो सकता है।

यहां प्राकृतिक जीवन शैली से अभिप्राय है कि हम स्वस्थ आदतों को अपनाएं, संतुलित व पौष्टिक आहार का सेवन करें, पर्यावरण की रक्षा करें, सामाजिक व आध्यात्मिक मूल्यों को विकसित करें तथा सकरात्मक सोच को अपनाएं।

### स्वास्थ्य की परिभाषा

विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार " **स्वास्थ्य का अर्थ पूर्ण शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक स्वस्थता की स्थिति है न कि केवल रोगों की अनुपस्थिति है अर्थात् शरीर तथा मस्तिष्क दोनों की सुचारू कार्य प्रणाली।** अच्छे स्वास्थ्य वाला व्यक्ति

टिप्पणी

अधिक उत्साहपूर्ण व ऊर्जायुक्त जीवन से भरपूर और कार्य में अधिक कुशल होता है। क्या अब आप अच्छे स्वास्थ्य के संकेतो की सूची बना सकते हैं? इसके अतिरिक्त, क्या आप यह भी बता सकते हैं कि यह सूची बनाना आवश्यक क्यों हैं? जी हां, आप सही सोच रहे हैं। यदि आप अच्छे स्वास्थ्य के संकेतों से अवगत हो जायेंगे तो आप एक स्वस्थ व्यक्ति की पहचान कर सकेंगे। अब हम इन संकेतों का विस्तार से अध्ययन करेंगे।

## अच्छे स्वास्थ्य के लक्षण

अच्छे स्वास्थ्य के लक्षणों का पता लगाने के लिए हमें शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक तीनों पहलुओं की जांच करनी होगी।

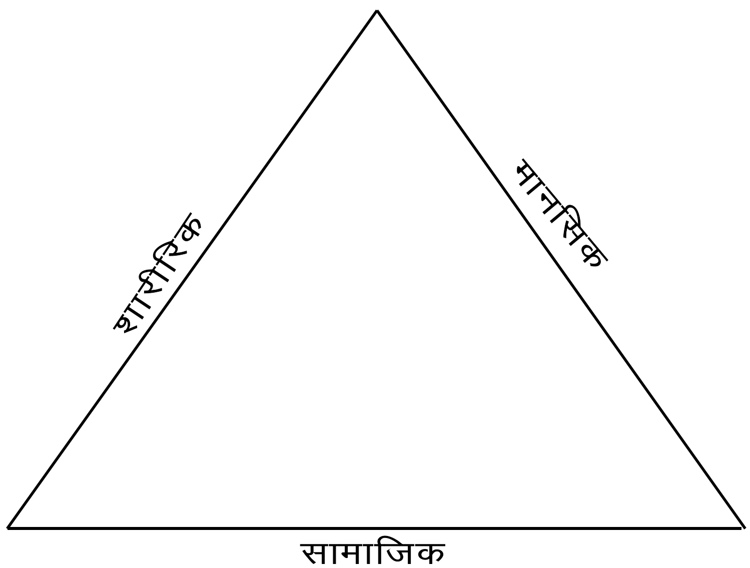


चित्र : 5.1: स्वास्थ्य त्रिकोण

### क. शारीरिक स्वास्थ्य (Physical Health)

अच्छे शारीरिक स्वास्थ्य वाला व्यक्ति वह है –

- जो अधिक उत्साहपूर्ण व ऊर्जा से भरपूर हो;
- जिसका शारीरिक गठाव अच्छा हो;
- आयु व ऊंचाई के अनुसार सामान्य भार हो;
- उसकी सभी इंद्रियां सुचारू रूप से कार्य कर रही हों;
- उसकी त्वचा साफ व स्वच्छ हो;
- तेजपूर्ण नेत्र हों;
- बालों की बनावट अच्छी हो तथा वे चमकदार हों;

टिप्पणी

- श्वास में स्वच्छता हो;
- पाचन क्रिया अच्छी हो; और
- अच्छी नींद आती हो।

शारीरिक स्वास्थ्य का पता लगाना व वर्णन करना आसान है। यदि व्यक्ति सतर्क व क्रियाशील है तो वह शारीरिक रूप से स्वस्थ माना जाता है।

**ख. सामाजिक स्वास्थ्य (Social Health)**

अच्छे सामाजिक स्वास्थ्य वाला व्यक्ति वह है जोः—

- अपने आस—पास के लोगों के साथ अच्छी तरह से व्यवहार करता है;
- मोहक शिष्टाचार करता है;
- दूसरों की मदद करता है; और
- दूसरों के प्रति अपने उत्तरदायित्वों को पूरा करता है।

यदि एक व्यक्ति समाज में दूसरों के साथ आत्मविश्वास के साथ रह सकता है तो वह सामाजिक रूप से स्वस्थ माना जाएगा।

**ग. मानसिक स्वास्थ्य (Mental Health)**

अच्छे मानसिक स्वास्थ्य वाला व्यक्ति वह है जो —

- भावनाओं पर नियंत्रण रखता है;
- अन्य लोगों की आवश्यकताओं के प्रति संवेदनशील रहता है;
- स्वयं की क्षमताओं के प्रति आत्मविश्वास रखता है; और
- अनावश्यक तनावों, उत्सुक्ताओं तथा चिंताओं से मुक्त है।

**एक व्यक्ति मानसिक रूप से स्वस्थ है यदि वह शांत तथा चिंता मुक्त है।**

**शारीरिक, सामाजिक तथा मानसिक स्वास्थ्य अन्तः संबंधित हैं।**

आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि स्वास्थ्य के ये तीनों पहलू आपस में एक—दूसरे से संबंधित हैं। क्या आपने देखा है कि जब आपका भाई बीमार होता है तो वह चिड़चिड़ा हो जाता है? उसे सामान्य दिनों की तुलना में अधिक क्रोध आने लगता है। ऐसा क्यों होता है? बीमारी के दौरान उसमें शारीरिक ऊर्जा की कमी हो जाती है तथा जिन कार्यों को वह करना चाहता है उन्हें न कर पाने के कारण हतोत्साहित हो जाता है। इसलिए वह क्रोध करता है, रोता है, चीखता है तथा झगड़ा करता है। क्या आपने ऐसे मामलों के संबंध में सुना है कि अत्यधिक चिंता करने के कारण लोगों को उच्च रक्तचाप हो जाता है या हर समय तनावग्रस्त रहने से पेट में अल्सर हो जाता है।

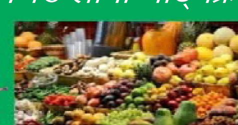

टिप्पणी

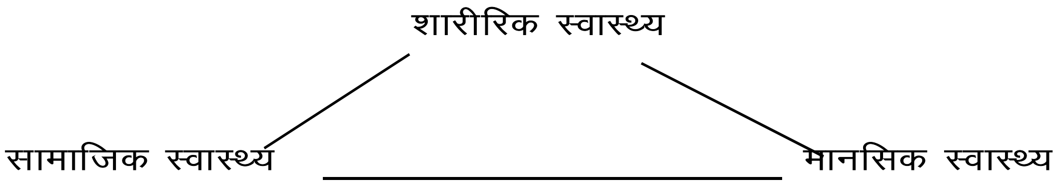


चित्रः 5.2ः स्वास्थ्य के आयाम

इस प्रकार, आपने देखा कि स्वास्थ्य के किसी भी पहलू तथा सामाजिक या मानसिक या शारीरिक पहलू में परिवर्तन होने से अन्य पहलू भी प्रभावित होते हैं। तीनों ही पहलू अन्तः संबंधित हैं तथा स्वस्थ कहे जाने के लिए तीनों ही पहलुओं में व्यक्तिगत स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए।

## यूनिटगत प्रश्न 5.1

**सही विकल्प का चयन कीजिए–**

1. एक व्यक्ति स्वस्थ है यदि वह ..........................................

   क. शारीरिक व मानसिक तौर पर स्वस्थ है।

   ख. मानसिक व सामाजिक तौर पर स्वस्थ है।

   ग. शारीरिक व सामाजिक तौर पर स्वस्थ है।

   घ. शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक रूप से स्वस्थ है।

2. मानसिक रूप से स्वस्थ व्यक्ति में ............................................ होता है–

   क. आत्मविश्वास

   ख. ऊर्जा

   ग. मोहक शिष्टाचार

   घ. अच्छी भूख लगना

3. बताएं कि निम्नलिखित वाक्य सही हैं या गलत

   क. स्वास्थ्य से तात्पर्य ''रोगों की अनुपस्थिति'' है। ( )

   ख. शारीरिक तौर पर स्वस्थ व्यक्ति के शरीर की इंद्रियां सुचारू रूप से कार्य करती हैं। ( )

टिप्पणी

ग. तनाव से मुक्ति का अर्थ है अच्छा मानसिक स्वास्थ्य। ( )

घ. यदि व्यक्ति दूसरों की मदद करता है तो यह सामाजिक स्वास्थ्य का लक्षण है। ( )

4. 'अच्छे स्वास्थ्य' वाले व्यक्ति की तीन विशेषताओं का उल्लेख कीजिए।

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

## 5.2 अच्छे स्वास्थ्य के आधार या प्रभावित करने वाले कारक

आइए, अब हम जानें कि अच्छे स्वास्थ्य के आधार या उसको प्रभावित करने वाले कारक कौन—कौन से हैं —

1. आहार;
2. व्यायाम व योग अभ्यास;
3. विश्राम;
4. स्थिति;
5. स्वच्छता;
6. सोच विचार
7. निद्रा

अब हम इन मुख्य कारकों पर विस्तार से चर्चा करेंगे।

### 5.2.1 आहार

प्रत्येक प्राणी को जीवन यापन करने और शरीर के प्रत्येक अंग को उचित ढंग से कार्य करने हेतु ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जो हमें भोजन से प्राप्त होती है। अतः हमें इस बात की जानकारी होनी चाहिए कि हमारा भोजन यानी आहार कैसा हो? शुद्ध तथा प्राकृतिक आहार से मन शुद्ध होता है। मन शुद्ध होने से शरीर समृद्ध व शक्तिशाली होता है। आहार शुद्ध होने के साथ—साथ संतुलित भी होना चाहिए। लेकिन योगमय जीवन जीने के लिए आहार का शुद्ध व सात्विक होना

टिप्पणी

आवश्यक है। छान्दोग्य उपनिषद् में सात्विक आहार की उपयोगिता का वर्णन निम्न श्लोक में किया गया है —

*आहारशुद्धौ सत्त्व शुद्धिः*
*सत्त्वशुद्धौ ध्रुवास्मृतिः*
*स्मृतिलम्भे सर्वग्रन्थीनां विप्रमोक्षः।।*

अर्थात् आहार शुद्धि से चित्त की शुद्धि होती है व चित्त शुद्धि से स्मृति लाभ होता है तथा स्मृति से सभी बन्धनों से मुक्ति प्राप्त होती है।

## 5.2.2 व्यायाम एवं योग अभ्यास

मान लीजिए की आप अपनी रसोई तथा स्टोर दोनों को एक ही दिन में साफ करना चाहते हैं। इतना भारी काम करने के पश्चात् आप कैसा महसूस करेंगे? आप अत्यधिक थकान अनुभव करेंगे, विशेष रूप से आपके हाथों में दर्द होगा। ऐसा क्यों होता है? क्योंकि सफाई के दौरान आपने अपनी उन मांस—पेशियों का प्रयोग किया है जिनका सामान्यतः आप प्रयोग नहीं करते हैं और इसलिए कुछ देर काम करने से ये दुखने लगती हैं।

व्यायाम से तात्पर्य शरीर की सभी मांस—पेशियों को क्रियाशील बनाना है ताकि वे चुस्त व तंदुरूस्त बनी रहें।

व्यायाम से लाभ प्राप्त करने के लिए व्यायाम को —

1. सुव्यवस्थित;
2. नियमित;
3. उचित ढंग से किया जाना चाहिए।

यह ध्यान रखना आवश्यक है कि बीमार व कमजोर लोग भारी व्यायाम न करें जिससे कि उनकी बीमारी और बढ़ जाए। आप जानते हैं कि आपके शरीर के ऊतकों में अतिरिक्त वसा एकत्र होता है। व्यायाम इसे समाप्त करने में सहायक होता है। क्या आप कल्पना कर सकते हैं कि व्यायाम के माध्यम से यदि इस वसा को समाप्त न किया जाए तो आप कितने मोटे हो जायेंगे? व्यायाम के दौरान शरीर के सभी अंग सुचारू रूप से कार्य करना आरंभ कर देते हैं। क्या आपने देखा है कि सैर करने के पश्चात् आपके पैर कैसे कांपने लगते हैं? क्या व्यायाम के पश्चात् आपको भूख लगती है? व्यायाम आपको शारीरिक व मानसिक रूप से चुस्त बनाता है और कार्य करने के लिए तैयार करता है। क्या अब आप कह सकते हैं कि व्यायाम हमारे लिए महत्वपूर्ण क्यों है?

जी हां, व्यायाम महत्वपूर्ण है क्योंकि यह —

1. शरीर से वसा कम करने में सहायक होता है;
2. बेहतर पाचन तथा श्वसन क्रिया को सुनिश्चित करता है;

टिप्पणी

3. मानसिक सक्रियता में वृद्धि करता है;
4. शारीरिक क्रियाशीलता को बढ़ाता है;
5. व्यक्ति अधिक कर्मठ महसूस करता है।

चित्रः 5.3ः स्किपिंग (रस्सी कूदना)      चित्रः 5.4ः योग

आपके अनुसार व्यायाम का सर्वोत्तम माध्यम क्या है?

1. आप अपनी पसंद का कोई खेल खेल सकते हैं।
2. आप तैराकी कर सकते हैं।
3. आप सैर या जॉगिंग कर सकते हैं।
4. आप योग कर सकते हैं, रस्सी कूदना (स्किपिंग) या साइकिल चला सकते हैं।

आप अपनी रूचि के अनुसार व्यायाम का कोई भी माध्यम चुन सकते हैं। व्यायाम सुबह के समय हो सकता है। यह आपकी सुविधा पर निर्भर करता है। किन्तु याद रखें कि व्यायाम का सर्वोत्तम समय भोर के समय है, क्योंकि इस समय वायु स्वच्छ व प्रदूषण रहित होती है। जब आप इस वायु में श्वास लेते हैं तो आप दिनभर तरो–ताजा महसूस करते हैं।

### 5.2.3 विश्राम तथा नींद

हालांकि स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए नियमित व्यायाम अनिवार्य है किन्तु साथ ही साथ विश्राम और नींद भी उतनी ही महत्वपूर्ण हैं। यह थकी हुई मांस–पेशियों को आराम पहुंचाने के लिए आवश्यक है। क्या आपको याद है कि एक ही दिन में बहुत सारे कपड़े धोने के बाद आपकी क्या स्थिति होती है। आपके हाथ दुखने लगते हैं तथा आप बहुत थक जाते हैं। उस समय आपको लगता है कि अब आप कोई और कार्य नहीं कर पायेंगे। किन्तु कुछ

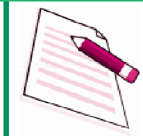



समय बैठने के पश्चात् आप स्वयं को चुस्त महसूस करते हैं और कुछ कार्य करना आरंभ कर देते हैं। जब आप काम करते हैं तो आपका शरीर ऑक्सीजन का सेवन करता है जो आपको ऊर्जा प्रदान करती है। जब शरीर द्वारा इस ऑक्सीजन का प्रयोग किया जाता है तो कुछ अपशिष्ट पदार्थों की उत्पत्ति होती है जो पेशियों में एकत्र हो जाते हैं। सामान्यतः जब ये अपशिष्ट पदार्थ उत्पन्न होते हैं तो इन अपशिष्ट पदार्थों की उत्पत्ति इनकी निकासी से अधिक तीव्र हो जाती है। इसलिए, यह अपशिष्ट पेशियों में एकत्र होना शुरू हो जाता है। इसके परिणामस्वरूप आप थकान का अनुभव करते हैं। इस थकान को फैटीग कहते हैं।

**'फैटीग' शरीर की और अधिक काम करने की अक्षमता है या शरीर की काम करने की ह्रासित क्षमता है।**

जब आप बैठ जाते हैं और विश्राम करते हैं तो आपके शरीर को इन अपशिष्ट पदार्थों की निकासी का समय मिल जाता है और आपकी पेशियां पुनः सक्रिय हो जाती हैं। इस प्रकार, नींद न केवल आपकी पेशियों को आराम प्रदान करती है बल्कि आपके मस्तिष्क को भी विश्राम देती है।

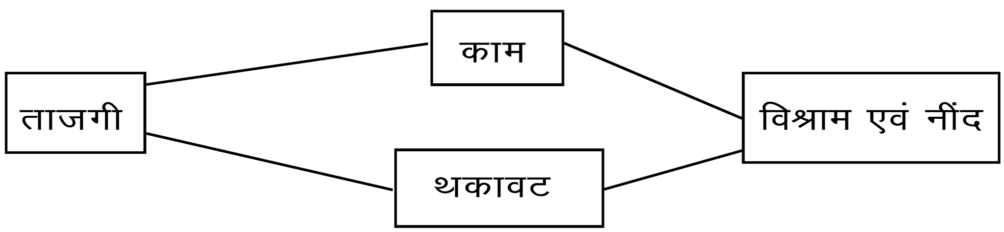


चित्रः 5.5

हर व्यक्ति को समान मात्रा में नींद की आवश्यकता नहीं होती है। आपने देखा होगा कि छोटे बच्चों तथा शिशुओं को आपकी या आपके माता–पिता की तुलना में अधिक नींद आती है। पूरे दिन कड़ी मेहनत करने वाले व्यक्ति को दिनभर में बहुत कम काम करने वाले दूसरे व्यक्ति की तुलना में अधिक नींद की आवश्यकता होती है। क्या आप बता सकते हैं क्यों?

## 5.2.4 स्थिति

क्या आपने ध्यान दिया है कि कुछ लोग अपनी पीठ को सीधा रखकर चलते तथा बैठते हैं तथा कुछ लोग अपनी पीठ को झुका कर चलते हैं। इन दोनों में से कौन–सी स्थिति बेहतर है? सीधी कमर से चलना व बैठना बेहतर है तथा यही सही तरीका भी है।

**व्यक्ति के बैठने या चलने के तरीके को 'स्थिति' कहते हैं।**

यदि आप खड़े रहने या बैठने की स्थिति में अपने शरीर को व्यवस्थित रूप से नहीं रख पाते हैं तो आपकी शारीरिक स्थिति गलत है। यदि आप अपनी कमर को झुका कर बैठते या खड़े होते हैं तो इससे आपके पेट के अंगों तथा छाती पर अतिरिक्त दबाव पड़ता है। आपको वक्र स्पाइन की समस्या भी हो सकती है जिसके परिणामस्वरूप कमर दर्द की शिकायत हो सकती है। इस

टिप्पणी

प्रकार, आप समझ गये होंगे कि स्वस्थ रहने के लिए सही स्थिति कितनी महत्वपूर्ण है। याद रहे कि सही स्थिति न केवल बैठने, चलने या खड़े रहने के लिए महत्वपूर्ण है बल्कि घर का कोई काम करते समय भी सही स्थिति में रहना समान रूप से महत्वपूर्ण है। क्या आप जानते हैं कि सही स्थिति क्या है?

> किसी कार्य को करते समय 'सही स्थिति' वह है जिसमें ऊर्जा की न्यूनतम मात्रा के उपयोग की आवश्यकता हो।

उदाहरण के लिए खड़े रहने की सही स्थिति वह है जिसमें सिर, गर्दन, छाती, पेट, सीधी रेखा में एक–दूसरे के ऊपर संतुलित रूप से स्थिर रह सकें।

**क्रिया** – अपने परिवार में उन सभी सदस्यों की एक सूची तैयार कीजिए जिनका डेस्क में बैठते समय या चलते समय आसन ठीक नहीं रहता है। उन्हें सही स्थिति बनाए रखने का तरीका बताएं।

| नाम | आपसे संबंध | अवलोकित क्रिया | स्थिति में त्रुटि | सही स्थिति के लिए सुझाव |
|---|---|---|---|---|
| | | | | |
| | | | | |
| | | | | |

## 5.2.5 स्वच्छता (Hygiene)

अंग्रेजी शब्द ''हाइजीन'' ग्रीक के ''हाइजिया'' शब्द से बना है जिसका अर्थ है– स्वास्थ्य की देवी। स्वच्छता विज्ञान को स्वास्थ्य संरक्षित रखने व उसे सुधारने की विज्ञान तथा कला के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। स्वच्छता विज्ञान उन सभी कारकों से संबंधित है जो स्वस्थ जीवन में भागीदार होते हैं। इसका उद्देश्य मनुष्य के लिए पर्यावरण के साथ–साथ स्वस्थ जीवन को स्वच्छ बनाना है। यह व्यक्ति विशेष तथा समुदाय दोनों से ही संबंधित है। स्वस्थ रहने के लिए व्यक्ति को यह समझना आवश्यक है कि स्वच्छता एवं साफ–सफाई अत्यंत महत्वपूर्ण है।

### व्यक्तिगत स्वच्छता

व्यक्तिगत स्वच्छता से तात्पर्य हमारे शरीर की स्वच्छता से है। यह सामान्यतः व्यक्तिगत स्वास्थ्य की विचारधारा से संबंधित है। इसका व्यापक अर्थ है स्वास्थ्य को संरक्षित व सवंर्धित करना। स्वस्थता के व्यक्तिगत पहलू में साफ–सफाई, नींद, भोजन, पानी, व्यायाम, कार्य तथा शरीर के कुछ संवेदनशील अंगों की देखरेख शामिल हैं। यह पर्यावरणीय कारकों पर भी निर्भर करता है जैसे उचित वेंटिलेशन, वातावरण का तापमान, उपयुक्त प्रकाश तथा व्यक्तिगत

कारकों पर जैसे रोज स्नान करना, साफ अंडरवियर तथा जूते—चप्पल पहनना, कुछ सामाजिक कारकों पर भी निर्भर करता है जैसे कार्य की परिस्थितियां, पारिवारिक जीवन तथा अच्छे सामाजिक मित्र।

व्यक्तिगत स्वच्छता केवल त्वचा को बाहर से धोने या साफ कपड़ों पर लागू नहीं होती है बल्कि इसमें रोगों की रोकथाम के लिए सभी आवश्यक कारक, दांतों, बालों, नाक, आंखों, हाथों तथा पैरों की स्वच्छता भी शामिल है और यदि आप स्वस्थ रहना चाहते हैं तो इन सभी पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

स्वच्छता में वे सभी बातें शामिल हैं जिनके संपर्क में हम आते हैं, जैसेः—

1. प्रातः जल्दी उठने, भोजन से पूर्व हाथों को धोने, संक्रमण को हटाने के लिए साबुन का प्रयोग, नियमित रूप से शौच की व्यक्तिगत आदतें, ये सभी आदतें शारीरिक तंत्र को साफ रखने में सहायक होती हैं।

2. उचित पोषण, संतुलित आहार, सुगमता से पचने वाला तथा धूल व कीटाणु रहित भोजन, बिना पकी सब्जियों व फलों को खाने से शरीर का आंतरिक तंत्र स्वस्थ रहता है।

3. विश्राम तथा क्रियाशीलता के बीच संतुलन होना चाहिए। नियमित संतुलित व्यायाम मांस—पेशियों को दुरूस्त रखता है तथा स्रावण अंगों द्वारा आसानी से अपशिष्ट पदार्थों को बाहर निकालने में सहायक होता है।

4. नियमित व्यायाम व्यक्ति के वजन को कम बनाए रखता है और पाचन क्रिया को सुचारू रखता है। मानसिक क्रिया शरीर व मन को स्वस्थ बनाए रखने के लिए वांछित निवारणात्मक पद्धति है।

5. हजारों पुरूषों व महिलाओं को लगता है कि उनका स्वास्थ्य अच्छा है जबकि उनको शौच पूरा नहीं आता, उनके श्वास में दुर्गंध आती है, उनकी जीभ साफ नहीं रहती है तथा स्वयं—विषाक्तता के अन्य अनेक लक्षण विद्यमान रहते हैं। यह कहना पूर्णतः सही है कि कब्ज अनेक बीमारियों की जननी है। इसलिए, इससे बचना चाहिए, भारी दवाइयों या चूर्ण आदि के सेवन से नहीं बल्कि अपने आहार को नियमित करके उचित व्यायाम द्वारा ऐसा करना चाहिए। संक्षेप में स्वास्थ्य के नियमों का पालन करना चहिए।

6. सार रूप में, उच्च विचार और साधारण जीवन अच्छे स्वास्थ्य की कुंजी है।

## पर्यावरणीय स्वच्छता (Environmental Hygiene)

पर्यावरणीय स्वच्छता शरीर विज्ञान की एक सहायक शाखा है जो बताती है कि हमारा शरीर पर्यावरण तथा इसके प्रदूषण के प्रति किस प्रकार प्रतिक्रिया करता है। हम, माइक्रोब तथा रोगी व्यक्तियों के बीच रहते हैं। उदाहरण के लिए यदि वातावरण में मच्छर नहीं होंगे तो, वहां

टिप्पणी

मलेरिया तथा फिलेरिया जैसे रोग भी नहीं होंगे। अच्छे निस्संक्रमण तथा प्राकृतिक माध्यम से चेचक, हैजा, टी.बी. जैसे रोगों का उन्मूलन किया जा सकता है। ग्रामीण क्षेत्रों में बीमारियों के फैलने का मुख्य कारण मल का असुरक्षित निपटान है।

बहुत सारी बीमारियां उन्हीं कीटाणुओं द्वारा फैलती हैं जो मल में पाए जाते हैं। ये कीटाणु पानी में, भोजन में, भोजन पकाने के स्थान पर फैल जाते हैं।

इस स्थिति से बचने के लिए तथा उचित पर्यावरणीय स्वच्छता बनाए रखने के लिए निम्नलिखित बातों को याद रखने तथा उनका अनुसरण किए जाने की आवश्यकता होती है–

1. व्यापक स्तर पर शौचालयों का निर्माण व उपयोग किया जाना चाहिए।
2. यदि ऐसा संभव नहीं है तो लोगों को मलोत्सर्जन के लिए ऐसे स्थानों पर जाना चाहिए जो इसके लिए निर्धारित हों तथा आवासों, मार्गों, खेल के मैदानों तथा पानी के स्रोतों से दूर हों।
3. मलोत्सर्जन के पश्चात् मल को उसी स्थान पर मिट्टी से दबा देना चाहिए।
4. शिशुओं और बच्चों के मल में भी उतने ही हानिकारक कीटाणु होते हैं। अतः उनके मल को भी तत्काल साफ किया जाना चाहिए।
5. शौचालयों को नियमित रूप से धोया जाना चाहिए तथा उन्हें ढक कर तथा साफ रखा जाना चाहिए।
6. जानवरों के मल को भी घरों तथा पानी के स्रोतों से दूर रखा जाना चाहिए।
7. पशुओं के मल या गोबर को गैस संयंत्र में प्रयोग किया जाना चाहिए या खाद के गड्डे में एकत्र किया जाना चाहिए या ईंधन के लिए इनके उपले बनाए जाने चाहिए।
8. मलोत्सर्जन के पश्चात् तथा बच्चे के मलोत्सर्जन के पश्चात् उनको साफ करने पर हाथों को साबुन से धोना चाहिए।
9. गांवों में यदि साबुन उपलब्ध नहीं होता है तो कुछ लोग मिट्टी या कीचड़ को हाथ में रगड़कर पानी से हाथ साफ कर लेते हैं। इससे उद्देश्य की पूर्ति नहीं होती है क्योंकि कीचड़ या मिट्टी में भी बहुत से कीटाणु होते हैं।
10. हाथ धोने के लिए सदैव साबुन व साफ पानी का प्रयोग करें।
11. बच्चे अपने हाथों को प्रायः मुंह के भीतर डालते रहते हैं। इसलिए, बच्चे के हाथों को बार–बार धोना जरूरी है, विशेष रूप से भोजन करने से पूर्व।
12. जब भी बच्चा अपने चेहरे को गंदा करता है तो हर बार उसके चेहरे को धोना चाहिए। इससे मक्खियों को बच्चे से दूर रखने तथा आंखों व त्वचा के संक्रमण के बचाव में सहायता मिलती है।

टिप्पणी

## भोजन संबंधी स्वच्छता (Food Hygiene)

भोजन संबंधी स्वच्छता अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए एक महत्वपूर्ण कारक है। यदि भोजन को खरीदते, तैयार करते, पकाते तथा भण्डारित करते समय स्वच्छता के मूल नियमों का पालन नहीं किया जाता है या अवलेहना की जाती है तो इसके परिणामस्वरूप भोजन विषाक्तता की समस्या अचानक व गंभीर रूप से उत्पन्न हो सकती है।

## स्वच्छ रसोई

1. बैक्टीरिया को अपनी मात्रा बढ़ाने के लिए भोजन, गरमाहट, नमी और समय चाहिए होता है, इसलिए हमें अपनी रसोई को साफ व सूखा रखना चाहिए तथा भोजन को ढककर रखना चाहिए।

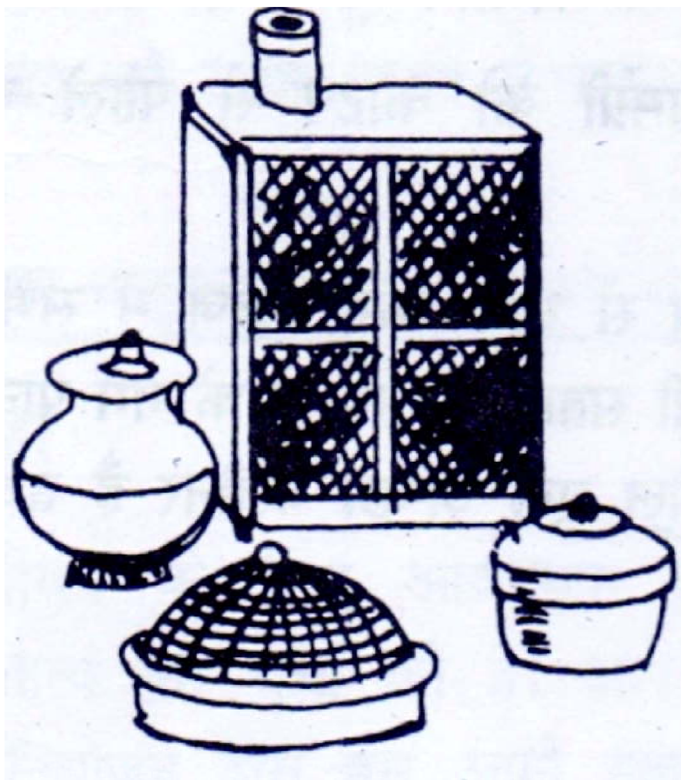

चित्रः 5.6

2. बचे हुए भोजन को इधर–उधर नहीं छोड़ना चाहिए तथा फर्श पर गिरे भोजन के अंशों को साफ कर देना चाहिए।

3. ढक्कनदार कूड़े के डिब्बों को बार–बार खाली करें।

4. पालतू जानवरों को भोजन और रसोईघर से दूर रखा जाना चाहिए।

टिप्पणी

चित्र. 5.7 मल को ढक्कनदार कूड़ेदान में डालते हुए

इन सभी उपायों की सहायता से मक्खियां, कॉकरोच जैसे कीटाणुओं को बीमारियां फैलने से रोका जा सकता है।

## स्वच्छ भोजन

1. भोजन को छूने से पूर्व अपने हाथों को साबुन व पानी से धो लें;
2. यदि आपको बलगम आ रहा हो या नाक से पानी या छींक आ रही हो तो साथ में कपड़े या रूमाल का प्रयोग करें ताकि कीटाणु ना फैलें तथा पुनः भोजन को छूने से पहले हाथों को धो लें;
3. सब्जियों को ध्यानपूर्वक धोना चाहिए ताकि उनमें लगी मिट्टी को अलग किया जा सके क्योंकि इसमें बैक्टीरिया या परजीवी अंडे हो सकते हैं;
4. पकाने से पूर्व खाद्य सामग्री को काटने के लिए पहले चाकू को अच्छी तरह से साफ कर लें;
5. 'फ्रिज' को नियमित रूप से साफ करें। फ्रिज में सभी खाद्य पदार्थों को बाहर निकाल लें तथा शैल्फ सहित सभी सतहों को साबुन के गर्म पानी से साफ करें। सोडा–बाइकार्बोनेट तथा गुनगुने पानी का घोल एक अच्छा क्लीनर है तथा इससे फ्रिज के भीतर बदबू भी नहीं आएगी।

## स्वच्छ पानी

1. अनेक रोग पानी जनित होते हैं। अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए ट्यूब वैल या गहरे हैंडपंप से, सुरक्षित पाइप वाले पानी को सही मात्रा में पीना चाहिए। पानी कैलोरी या विटामिन उपलब्ध नहीं कराता है किन्तु शरीर की क्रियाशीलता तथा आंतरिक सफाई के लिए यह अत्यंत आवश्यक है।

टिप्पणी

2. शिशुओं के प्रयोग के लिए पानी को 15—20 मिनट तक उबालना चाहिए तथा उसे विसंक्रमित बोतल में रखना चाहिए। इस पानी को पीने से पूर्व ठंडा कर लें। यह उन बच्चों के लिए तो अत्यंत आवश्यक है जिनमें अभी प्रतिरक्षण तंत्र विकसित नहीं हुआ है। जहां स्वच्छ पानी की आपूर्ति उपलब्ध नहीं है तथा पीने के लिए कुंए का पानी उपयोग में लाया जाता है, वहां कुएं को उचित ढंग से ढककर रखा जाना चाहिए। यदि पानी को उबालना संभव नहीं है तो वहां दस लीटर पानी में एक गोली क्लोरीन की मिलानी चाहिए। आधे घंटे के पश्चात् यह पानी पीने के लिए तैयार हो जाता है। किन्तु 24 घंटों के पश्चात् हमें इस पानी को प्रयोग नहीं करना चाहिए तथा पुनः स्वच्छ पानी की यह प्रक्रिया दोहराई जानी चाहिए।

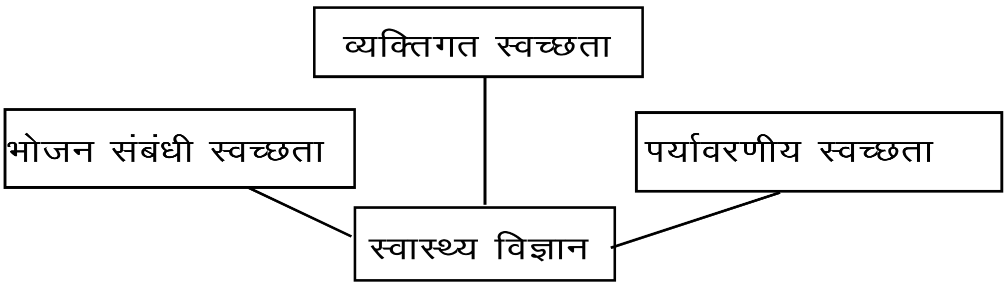


चित्र. 5.8: स्वच्छता विज्ञान के विभिन्न पहलू

## 5.2.6 सोच (विचार)

मानसिक तनाव कम होने से एवं आनंद की अनुभूति से संपूर्ण व्यक्तित्व का विकास होता है। सकारात्मक विचारों से समस्या का हल ढूंढने की कला आ जाती है जिससें रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है और कार्यक्षमता, सहनशीलता व आत्मविश्वास बढ़ जाता है जिससे व्यक्ति में निर्णय लेने की क्षमता बढ़ जाती है।

सकारात्मक मनोवृति को बढ़ाने के लिए आशावादी बनें, दूसरों को दोष देना बंद करें तथा नकारात्मक बातों पर ध्यान न देकर परिवर्तन को अपनायें क्योंकि परिवर्तन प्रकृति और संसार का नियम है।

## 5.2.7 निद्रा

उचित स्वास्थ्य के लिए उचित नींद की अति आवश्यकता होती है जिससे शरीर व मस्तिष्क तनावमुक्त होकर नई ऊर्जा के साथ अधिक कार्यक्षमता का संचार होता है। रात को पानी पीकर व पांव धोकर सोयें। सोते समय मुख का कुल्ला व तालू को साफ करके सोयें व सोते समय उत्तर या पश्चिम की तरफ पैर करके सोना चाहिए। दिन में सोने की आदत न डालें ताकि रात में पूर्ण नींद ले सकें। थोड़े सख्त बिस्तर पर तकिया पतला ही लगाएं। रात्रि 10 बजे तक सो जाना चाहिए। आवास प्रकाश व वायु युक्त व स्वच्छ वातावरण में होना चाहिए। सूती व खुलेदार वस्त्रों का चुनाव करें अर्थात् तंग वस्त्र पहनकर न सोएं।

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 5.2

1. **सही शब्द की सहायता से वाक्य पूरा करें –**

   i) त्वचा को ....................................... रखा जाना चाहिए।

   क) गीला

   ख) कोमल

   ग) सूखा

   घ) साफ

   ii) दांतों को स्वस्थ व साफ रखने के लिए उन्हें ................................. ब्रश करें।

   क) प्रातःकाल

   ख) रात्रि में

   ग) प्रातःकाल

   घ) प्रत्येक भोजन के पश्चात्

   iii) अपने दांतों को मजबूत व स्वस्थ रखने के लिए .................................... ।

   क) चॉकलेट खाएं

   ख) आइसक्रीम खांए

   ग) प्रचुर मात्रा में दूध पिएं

   घ) पानी पिएं

   iv) व्यायाम आपको ........................................ बनाता है।

   क. मोटा

   ख. सक्रिय

   ग. कुशल

   घ. क्रियाशील

   v) योग अभ्यास को ........................................... होना चाहिए।

   क. नियमित

   ख. अनिरन्तर

   ग. दबावपूर्ण

   घ. थकाने वाला

vi) विश्राम थकी हुई पेशियों को .................................. उपलब्ध कराता है

क. नींद

ख. दबाव

ग. स्वच्छता

घ. पुनःसक्रियता

## 5.3 अस्वस्थता की पहचान

हम स्वास्थ्य के विषय में पढ़ चुके हैं। हम जानते हैं कि कोई व्यक्ति पूर्णतः तभी स्वस्थ है जब वह शारीरिक, मानसिक, सामाजिक व आध्यात्मिक रूप से स्वस्थ है। आइए, अब किसी भी व्यक्ति की अस्वस्थता की पहचान करते हैं

अस्वस्थ व्यक्ति को निम्न लक्षणों के आधार पर पहचाना जा सकता है।

1. किसी भी शारीरिक क्रिया का असामान्य होना,
2. गहरी नींद का न आना या अत्यधिक नींद आना
3. भूख का न लगना,
4. त्वचा से दुर्गन्ध आना,
5. पाचन संबंधित समस्या होना,
6. नकारात्मक विचारों का आना,
7. शीघ्र क्रोध आना,
8. चिड़चिड़ापन,
9. आलस्य का होना
10. किसी भी कार्य में मन न लगना
11. जल्दी थकान का हो जाना,
12. सिरदर्द होना,

## 5.4 रोगों के मूल कारण

जब मनुष्य अस्वस्थ होता है तो अस्वस्थता के कुछ लक्षण दिखाई देते हैं। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि शरीर किसी न किसी रोग से प्रभावित हो रहा है। आइए जानते हैं कि रोग उत्पन्न होने का कारण क्या है?

सामान्यतः सभी रोगों का प्रमुख कारण, शरीर में विजातीय द्रव्यों का इकट्ठा होना है। हमारे शरीर में इस तरह की व्यवस्था का प्रावधान है कि शरीर से विजातीय द्रव्यों का निष्कासन होता

टिप्पणी

रहता है। परन्तु जब किसी भी कारणवश विजातीय द्रव्य बढ़ने लगते हैं और इनका निकलना कम हो जाता है तो शरीर में इनका संचय होना शुरू हो जाता है। जिससे शरीर में कीटाणु पनपने लगते हैं। लेकिन हमारे शरीर की प्रकृति फिर भी उसे ज्वर, दस्त, उल्टी, जुकाम, खांसी इत्यादि तीव्र रोगों के माध्यम से बाहर निकालती है। लेकिन कभी—कभी यह रोग गम्भीर हो जाते हैं।

प्राकृतिक चिकित्सा में तीव्र रोगों को मित्र बताया गया है और दवाओं के प्रयोग से ये रोग बाद में असाध्य रोग में बदल जाते हैं।

## रोग उत्पन्न होने के कारण

रोग उत्पन्न होने के निम्नलिखित मुख्य कारण हो सकते हैं—

1) विजातीय द्रव्यों का शरीर में संचित होना,
2) दिनचर्या, ऋतुचर्या, रात्रिचर्या का सम्यक पालन न करना
3) संतुलित भोजन का अभाव, अति आहार व विपरीत आहार
4) मिर्च—मसाले, गरिष्ठ भोजन (तामसी आहार) का सेवन
5) असमय भोजन करना
7) भय, चिंता, क्रोध व तनाव
8) सामर्थ्य से अधिक शारीरिक व मानसिक कार्य करना
9) विश्राम की कमी
10) प्रदूषण
11) शरीर में पंचतत्वों का असंतुलन (आकाश, वायु, अग्नि, जल, पृथ्वी)

### रोगों का उपचार

रोगों के उपचार में जीवनशैली का बहुत बड़ा योगदान है। जीवनशैली का अर्थ लोगों के जीवन के तरीके तथा उनके सामाजिक मूल्यों, अभिरूचियों तथा क्रियाओं की संपूर्ण श्रृंखला है। स्वस्थ रहने के लिए यह आवश्यक है कि हम प्रकृति के साथ जिएं।

- जीवनशैली संबंधी रोगों से अपने आहार, जीवनशैली तथा वातावरण में परिवर्तन करके बचा जा सकता है तथा रोगों के वेग को कम किया जा सकता है।
- शरीर में संचित विजातीय द्रव्यों को बाहर निकालना चाहिए और जीवनी शक्ति, प्राण शक्ति के द्वारा रोग प्रतिरोधक शक्ति को बढ़ाने का प्रयास करना चाहिए।
- रोग उपचार के समय भोजन का त्याग और एनिमा के द्वारा शरीर की सफाई की जानी आवश्यक है।

टिप्पणी

- कुछ दिनों की उपवास चिकित्सा करते हुए प्राकृतिक चिकित्सा से असाध्य रोगों से छुटकारा मिलता है।
- उपचार के प्राकृतिक साधन – उचित रहन–सहन, मानसिक विकारों का उन्मूलन, विभिन्न यौगिक क्रियाएं, प्राकृतिक व सात्विक आहार, पंच महाभूत के माध्यम से स्वस्थ रहा जा सकता है।

## यूनिटगत प्रश्न 5.3

1. अस्वस्थता के कोई दो लक्षण लिखिए।

   ...............................................................................................................

   ...............................................................................................................

2. रोगों का मूल कारण क्या है?

   ...............................................................................................................

   ...............................................................................................................

3. रोग उत्पन्न होने के दो कारण बताइए।

   ...............................................................................................................

   ...............................................................................................................

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट में हमने सीखा कि

- प्रसन्नता प्राप्त करने तथा कार्य संबंधी अपनी क्षमता को बनाये रखने के लिए प्रत्येक व्यक्ति के लिए अच्छा स्वास्थ्य महत्वपूर्ण है। हमारे स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले अनेक कारक हैं। इनमें से कुछ मुख्य घटकों जैसे संतुलित आहार, स्वच्छ जल तथा स्वच्छ पर्यावरण का हमारे स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जबकि अन्य कारक जैसे अशुद्ध जल, जीवाणु से होने वाले रोग तथा प्रदूषित वातावरण हमारे स्वास्थ्य पर नकारात्मक प्रभाव डालते हैं।
- विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार '' **स्वास्थ्य का अर्थ पूर्ण शारीरिक, मानसिक तथा सामाजिक स्वस्थता की स्थिति है न कि केवल रोगों की अनुपस्थिति है अर्थात् शरीर तथा मस्तिष्क दोनों की सुचारू कार्य प्रणाली**। अच्छे स्वास्थ्य वाला व्यक्ति अधिक उत्साहपूर्ण व ऊर्जायुक्त जीवन से भरपूर और कार्य में अधिक कुशल होता है।

टिप्पणी

- स्वास्थ्य के किसी भी पहलू तथा सामाजिक या मानसिक या शारीरिक पहलू में परिवर्तन होने से अन्य पहलू भी प्रभावित होते हैं। तीनों ही पहलू अन्तःसंबंधित हैं तथा स्वस्थ कहे जाने के लिए तीनों ही पहलुओं में व्यक्तिगत स्वास्थ्य अच्छा होना चाहिए।
- हमने स्वस्थ जीवन के लिए आवश्यक प्राकृतिक स्वास्थ्य तथा व्यक्तिगत स्वच्छता के अर्थ तथा महत्व की चर्चा की है।
- हमने अस्वस्थता के लक्षणों के विषय में जाना और यह भी जाना कि रोग किन कारणों से उत्पन्न होते हैं।
- स्वस्थ रहने के लिए प्राकृतिक जीवनशैली, संतुलित आहार तथा साफ–सफाई अत्यंत आवश्यक हैं। यहां साफ–सफाई से तात्पर्य व्यक्तिगत स्वच्छता तथा पर्यावरणीय स्वच्छता दोनों से है।

## यूनिटांत प्रश्न

1. स्वास्थ्य को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन कीजिए।
2. अच्छे स्वास्थ्य के मुख्य आधार कौन–कौन से हैं? किन्हीं दो पर प्रकाश डालिए।
3. स्वच्छता के कुछ महत्वपूर्ण कारकों का विस्तार से उल्लेख कीजिए।
4. अस्वस्थता के क्या लक्षण हैं? रोग उत्पन्न करने वाले किन्हीं दो कारणों का वर्णन कीजिए।

## यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

### 5.1

1. (घ) शारीरिक, सामाजिक तथा मानसिक स्वास्थ्य
2. (क) आत्म विश्वास
3. (क) गलत (ख) सही (ग) सही (घ) सही
4. 1. ऊर्जायुक्त 2. शरीर के सभी अंग सुचारू रूप से कार्य करते हैं
   3. अनावश्यक तनावों तथा चिंताओं से मुक्ति

### 5.2

1. (i) घ, (ii) घ , (iii) ग (iv) ख (v) क (vi) घ

### 5.3

1. भूख न लगना, गहरी नींद न आना
2. शरीर में विजातीय द्रव्यों का इकट्ठा होना
3. संतुलित भोजन का अभाव, शरीर में पंच तत्वों का असंतुलन

टिप्पणी

# 6

# आहार एवं पोषण

प्रत्येक प्राणी को जीवन यापन करने और शरीर के प्रत्येक अंग को उचित ढंग से कार्य करने हेतु ऊर्जा की आवश्यकता होती है, जो हमें भोजन से प्राप्त होती है। अतः हमें इस बात की जानकारी होनी चाहिए कि हमारा भोजन यानी आहार कैसा हो? शुद्ध तथा प्राकृतिक आहार से मन शुद्ध होता है। मन शुद्ध होने से शरीर समृद्ध व शक्तिशाली होता है। आहार शुद्ध होने के साथ–साथ संतुलित भी होना चाहिए। लेकिन योगमय जीवन जीने के लिए आहार का शुद्ध व सात्विक होना आवश्यक है। छान्दोग्य उपनिषद् में सात्विक आहार की उपयोगिता का वर्णन निम्न श्लोक में किया गया है –

*आहारशुद्धौ सत्त्व शुद्धिः*
*सत्त्वशुद्धौ ध्रुवास्मृतिः*
*स्मृतिलम्भे सर्वग्रन्थीनां विप्रमोक्षः।।*

अर्थात् आहार शुद्धि से चित्त की शुद्धि होती है व चित्त शुद्धि से स्मृति लाभ होता है तथा स्मृति से सभी बन्धनों से मुक्ति प्राप्त होती है। इस यूनिट में हम आहार के बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे।

## उद्देश्य

इस यूनिट का अध्ययन करने के पश्चात् आप –

- भोजन, इसकी आवश्यकता एवं महत्व पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- आहार के बारे में जानकारी प्राप्त कर उसे परिभाषित कर सकेंगे;

टिप्पणी

- आहार की उपयोगिता का उल्लेख कर सकेंगे;
- सात्विक, राजसिक एवं तामसिक आहार की अभिव्यक्ति कर सकेंगे;
- उम्र, बीमारी, समय व ऋतुओं के अनुसार आहार का वर्णन कर सकेंगे;
- आहार को औषधि के रूप में समझा सकेंगे।

## 6.1 भोजन, इसकी आवश्यकता एवं महत्व

आहार समझने से पहले हमें भोजन के विषय में जानना आवश्यक है। भोजन शब्द से तात्पर्य ऐसे खाद्य पदार्थों से है जिन्हें खाने के लिए उपयोग में लाया जाता है। जिससे हमारे शरीर का पोषण होता है। प्रत्येक जीवधारी को जीवित रहने तथा शरीर की सभी क्रियाओं का सुचारू रूप से चलाने के लिए भोजन अनिवार्य है। उचित आहार हमारे स्वास्थ्य को प्रभावित और नियंत्रित करता है। इस प्रकार भोजन शारीरिक क्षतिपूर्ति, विकास एवं वृद्धि के लिए अति आवश्यक है। भोजन के प्रायः तीन मुख्य कार्य हैं –

**1. क्रियात्मक कार्य (Physiological Functions ) -**

भोजन के चार क्रियात्मक कार्य हैं। यह शक्ति प्रदान करने, शरीर का निर्माण करने, रोगों के प्रति सुरक्षा प्रदान करने तथा शारीरिक प्रक्रियाओं को विनियमित करने का कार्य करता है। अब हम विस्तार से इनकी चर्चा करेंगे–

क. **भोजन हमें ऊर्जा प्रदान करता है** – हर व्यक्ति को कार्य करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है। ऊर्जा की आवश्यकता हमें घर के भीतर व बाहर चलने तथा विभिन्न कार्यों को करने के लिए पड़ती है। यह ऊर्जा आपके द्वारा खाए गए भोजन से प्राप्त होती है। जब आप विश्राम कर रहे होते हैं उस समय भी आपको ऊर्जा की आवश्यकता होती है। क्या आप बता सकते हैं कि ऐसा क्यों है? आपके शरीर के भीतर विभिन्न इन्द्रियां सदैव कार्यरत रहती हैं। उदाहरण के लिए हृदय रक्त को संचालित करता है। उदर भोजन की पाचन क्रिया में सक्रिय रहता है, फेफड़े, वायु को श्वासित करते हैं आदि। इन सभी अंगों को अपनी क्रियाएं करने के लिए ऊर्जा की आवश्यकता होती है तथा भोजन उन्हें यह ऊर्जा उपलब्ध कराता है।

ख. **भोजन शरीर के निर्माण में सहायक होता है** – क्या आपने सोचा है कि एक छोटा बच्चा कैसे एक व्यस्क व्यक्ति में विकसित हो जाता है? हमारा शरीर पहले से ही हजारों छोटी–छोटी कोशिकाओं से बना होता है। शरीर के विकास में सहयोग करने के लिए इनमें नई कोशिकाएं शामिल होती हैं। नई कोशिकाओं के निर्माण के लिए भोजन की आवश्यकता होती है। चोट लगने के कारण कोशिकाएं नष्ट हो जाती हैं या क्षतिग्रस्त भी होती हैं। यहां नई कोशिकाओं के निर्माण की आवश्यकता होती है तथा मरम्मत के इस कार्य के लिए भोजन की आवश्यकता होती है।

ग. **भोजन रोगों से संरक्षण प्रदान करता है** –हम जो खाना खाते हैं उससे हमें रोगों के कीटाणुओं से लड़ने की शक्ति प्राप्त होती है।

टिप्पणी

घ. **भोजन शरीर की क्रियाओं को नियंत्रित करता है** – विनियामक क्रियाओं (Regulating Functions) से तात्पर्य शारीरिक क्रियाओं को नियंत्रित करने में भोजन की भूमिका से है। उदाहरण के लिए हमारे शरीर का तापमान 98.4 डिग्री फारेनहाइट या 37 डिग्री सेंटीग्रेट पर बना रहता है। इसी प्रकार हमारा हृदय स्पंदन (heart beat) 72 स्पन्दन प्रति मिनट पर बना रहता है। हमारे शरीर से अपशिष्ट पदार्थों की निकासी भी नियमित रूप से होती है। यह सभी क्रियाएं हमारे द्वारा खाए गए भोजन से विनियमित होती हैं।

2. **मनोवैज्ञानिक प्रकार्य (Psychological Function)** – हम सभी की भावात्मक (emotional) आवश्यकताएं होती हैं, जैसे सुरक्षा, प्रेम तथा ध्यान दिए जाने की आवश्यकता। उदाहरण के लिए, जब आपकी मां आपका मनपंसद भोजन या पकवान बनाती है तो आपको कैसा लगता है? आपको लगता है कि वह आपको प्यार करती है और आपका ध्यान रखती है। भोजन प्रायः पुरस्कार के रूप में भी दिया जाता है। इसी प्रकार कुछ खाद्य पदार्थ बीमारी के साथ संबंधित हो जाते हैं जैसे खिचड़ी या उबला हुआ भोजन। बीमारी एक अप्रिय स्थिति है इसलिए इस स्थिति में दिए जाने वाला भोजन भी अप्रिय भावनाओं से संबंधित हो जाता है।

3. **सामाजिक प्रकार्य (Social Function)** – भोजन करने का एक महत्वपूर्ण सामाजिक अर्थ है। किसी अन्य व्यक्ति के साथ भोजन को बांटना सामाजिक स्वीकृति को दर्शाता है। विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में भोजन त्यौहारों का भी अभिन्न अंग है। आपको ज्ञात होगा कि विशेष अवसरों जैसे बच्चे के जन्म, विवाह या जन्मदिन के अवसर पर प्रीतिभोज दिया जाता है। धार्मिक परिप्रेक्ष्य में भी भोजन का विशेष महत्व तथा अर्थ है।

**आइए अब जानते हैं कि आहार क्या है? आहार निश्चित मात्रा में उपस्थित खाद्य पदार्थों का समूह है।**

> क्या आप जानते हैं कि उचित आहार एक निरोधक औषधि का भी कार्य करता है। प्रसिद्ध औषधि जनक हीपोक्रेट्स (Hipocrates) ने आहार के संबंध में कहा है कि **"Let food be the medicine and let medicine be the food"** ''आहार ही औषधि है और औषधि ही आहार है।''

हमारा आहार एक संपूर्ण, संप्राण और प्राकृतिक आहार होना चाहिए। जो भोजन ताजे फल, कच्ची साग–सब्जियों, ताजे दूध, दही, शहद आदि के साथ सीधे प्रकृति से प्राप्त होता है वह भोजन शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक संतुलन के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण होता है। शरीर को पूर्णतः पोषण प्रदान करते हुए जो आहार आनंद व शक्ति प्रदान करता है वही आहार अमृत आहार कहलाता है। ऐसा आहार स्वादिष्ट, शक्तिवर्द्धक और दीर्घ जीवन प्रदान करने वाला कहा जाता है।

आइए, आहार पर अधिक जानकारी प्राप्त करने के लिए हम पोषण, पोषक तत्वों और संतुलित आहार पर चर्चा करते हैं। हमारे भोजन में अनेक रासायनिक तत्व होते हैं। इन रासायनिक तत्वों

टिप्पणी

को पोषक तत्व कहते हैं। पोषक तत्व भोजन में उपलब्ध वे अदृश्य रसायन हैं जो शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के लिए परम आवश्यक हैं। क्या आप जानते हैं कि हमारे भोजन में कौन—कौन से पोषक तत्व होते हैं? हमारे भोजन में प्रोटीन, कार्बोहाइड्रेट, वसा, विटामिन, खनिज लवण, पानी आदि पोषक तत्वों के रूप में सम्मिलित रहते हैं।

## 6.2 पोषण एवं पोषक तत्व एवं संतुलित आहार

पोषण एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा शरीर पोषक तत्वों (Nutrients) को अंतर्ग्रहण, पाचन, समाहित, पारवहन तथा उपयोग करता है और उसके अपशिष्ट पदार्थों को निष्कासित कर दिया जाता है। इसके अतिरिक्त, पोषण भोजन के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा मनोवैज्ञानिक पहलुओं से भी संबंधित है।

पोषण वह भोजन विज्ञान है जिसमें पोषक तत्व तथा अन्य तत्व, उनकी क्रिया, संव्यवहार तथा स्वास्थ्य व रोगों के संबंध में इनका संतुलन शामिल है।

पोषण, जो भोजन पर निर्भर करता है, वह रोग के उपचार के लिए भी महत्वपूर्ण होता है। रोग का प्राथमिक कारण दोषपूर्ण पोषण व्यवस्था को अपनाने के कारण शरीर का कमजोर पड़ना या शरीर की प्रतिरक्षण क्षमता का कम होना है। शरीर के भीतर एक प्राकृतिक उपचार तंत्र (Natural Healing Mechanism) विद्यमान होता है किन्तु वह अपने कार्यों को तब कर पाता है जब उसे प्रचुर मात्रा में सभी अनिवार्य पोषक तत्वों की आपूर्ति होती रहे।

### पोषक तत्व **(Nutrients)**

हम जो भोजन खाते हैं उसमें अनेक रासायनिक तत्व होते हैं। इन रासायनिक तत्वों को पोषक तत्व कहते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि पोषक तत्व भोजन में उपलब्ध वे अदृश्य रसायन हैं जो शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के लिए आवश्यक हैं। इन पोषक तत्वों के विभिन्न नाम हैं —

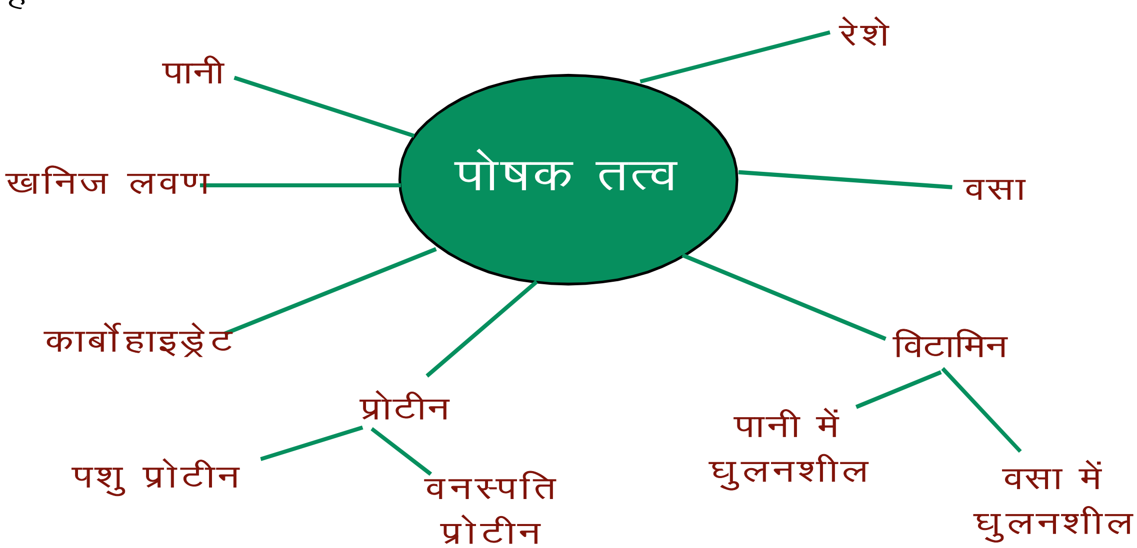

टिप्पणी

## पोषक तत्व

1) **प्रोटीन**— यह शरीर में नई कोशिकाओं, रक्त, एंन्जाइम आदि के निर्माण के लिए आवश्यक है।

पुरानी व क्षतिग्रस्त कोशिकाओं को स्वस्थ बनाने व घावों को भरने में भी यह सहायता प्रदान करता है। 1 ग्राम प्रोटीन से 4 किलो कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है।

स्रोत—दालें, अनाज, मटर, सोयाबीन, मूंगफली, मांस, अंडा, मुर्गी, दूध, दही व पनीर आदि।

2) **कार्बोहाइड्रेट्स**— यह तत्व सभी कार्यों को करने के लिए ऊर्जा प्रदान करता है तथा भोजन को स्वादिष्ट बनाने में भी सहायक है। 1 ग्राम कार्बोहाइड्रेट्स 4 किलो कैलोरी ऊर्जा प्रदान करता है।

स्रोत—गेहूँ, ज्वारा, चावल, बाजरा, आलू, शकरकंद, चीनी, शहद, गुड़ आदि।

3) **वसा (चिकनाई)**— वसा अधिक ऊर्जा प्रदान करता है तथा संवेदनशील अंगों जैसे हृदय, लीवर आदि को पैडिंग द्वारा सुरक्षा उपलब्ध कराता है। 1 ग्राम वसा से 9 किलो कैलोरी ऊर्जा प्राप्त होती है।

स्रोतः घी, तेल, दूध, मक्खन आदि।

4) **विटामिन**— यह अप्रत्यक्ष सूक्ष्म तत्व है। जीवन शक्ति उन्नत करते हैं तथा रोग प्रतिरोधक शक्ति प्रदान करते है।

**विटामिन ए** — इससे सुंदर त्वचा, चमकीली आंखें तथा संक्रामक रोग प्रतिरोधक शक्ति प्राप्त होती है।

**स्रोत**— पीले फल व सब्जियां, हरी पत्तेदार सब्जियां, दूध, पनीर, यकृत आदि।

**विटामिन बी** — इस विटामिन के 18 सदस्य हैं। ये सभी शर्करा और नमक की तरह पानी में घुल जाते हैं। इसकी कमी से पाचन क्रिया में गड़बड़ी, कब्ज, वजन घटना, मांसपेशियों की कमजोरी, अंतःस्रावी ग्रंथियों, क्लोमग्रंथि, यकृत व मुंह में छाले आदि हो जाते हैं।

**स्रोत** — पूर्ण अन्न कण, दूध, सब्जी, चोकर, दाल, फल, सब्जियों के छिलके, अंकुरित अन्न, हरी मटर, शलजम, सोयाबीन, सूरजमुखी, शहद। पकाने से विटामिन—बी का कुछ हिस्सा नष्ट हो जाता है।

**विटामिन सी** — यह एक महत्वपूर्ण विटामिन है जो घाव को भी ठीक करता है, पाचन संस्थान को स्वस्थ बनाता है तथा रोगों से शरीर की रक्षा करता है। इसके अभाव में दांतों के रोग, पायरिया, स्कर्वी, रक्तचाप एवं रक्तस्राव इत्यादि हो जाते हैं।

टिप्पणी

**स्रोत**– संतरा, नींबू, नारंगी, अमरूद, टमाटर, ताजी हरी सब्जी, रसभरी, पपीता, अजवायन, पत्तागोभी, मुनक्का, हरी सरसों, अंकुरित अन्न, आंवला, आम इत्यादि।

**विटामिन डी** – यह शरीर में कैल्शियम व फास्फोरस के संतुलन को ठीक रखता है। इसके अभाव में संक्रामक रोग, मांसपेशियों की दुर्बलता, स्नायु संस्थान की दुर्बलता, अस्थि दुर्बलता, यक्ष्मा तथा रोग प्रतिरोधक शक्ति का ह्रास हो जाता है।

**स्रोत** – पूर्ण धूप व दूध तो इसका खजाना है। बच्चों को जैतून तेल की मालिश करके धूप में बैठाना चाहिए। धूप में पकने वाले काष्ठज (मेवे) फल बादाम, चिलगोजा, अखरोट, सूरजमुखी के बीज इत्यादि। यह कॉडलीवर आयल आदि से भी प्राप्त होता है।

**विटामिन ई**– संतानोत्पत्ति की क्षमता के लिए विटामिन ई अनिवार्य होता है। साधारण बुद्धि विकास एवं पीयूष ग्रंथि की क्रिया के लिए भी यह आवश्यक है। यह लोह तत्व के संयोजन में सहायक है तथा रक्तस्राव को रोकता है।

**स्रोत** – संपूर्ण अन्नकण, दूध, सब्जी, फल, काष्ठज फल, सोयाबीन के तेल में होता है व अंकुरित गेहूं, मटर, मूंगफली, मूंग में विशेष रूप से होता है।

**विटामिन के** – यह रक्तस्राव विरोधी विटामिन है इसके अभाव में रक्तस्राव शुरू हो जाता है और स्कर्वी की तरह त्वचा के नीचे मांसपेशियों के अंदर और उदर में रक्तस्राव शुरू हो जाता है।

**स्रोत** – हरी सब्जी, मूंगफली, गाजर, सोयाबीन के तेल में यह विटामिन होता है।

5) **खनिज लवण**

खनिज लवण शरीर के शोधन, रचना तथा विकास के लिए आवश्यक हैं। रक्त संचार तथा मस्तिष्क संबंधी कार्यों के सुचारू रूप से कार्य करने के लिए खनिज लवण आवश्यक हैं। कुछ प्राकृतिक खनिज लवण इस प्रकार से हैं –

कैल्शियम, सोडियम, पोटेशियम, सिलिकॉन आदि।

**कैल्शियम** – हड्डियों को सशक्त बनाने व रक्त का थक्का बनने के लिए कैल्शियम शरीर के लिए आवश्यक है। इसकी कमी से हड्डियों तथा दांतों का विकास क्षीण हो जाता है, हड्डियां लचीली हो जाती है। दांत का सड़ना, सूखा रोग, अधिक रक्तस्राव, हृदयगति में विक्षेप आना, स्नायु दुर्बल, मांसपेशियों में अकड़पन आदि कैल्शियम की कमी के लक्षण हैं। गर्भवती महिलाओं को अपेक्षाकृत अधिक कैल्शियम की आवश्यकता होती है क्योंकि एक भ्रूण के विकास एवं बनावट के लिए कैल्शियम की आवश्यकता होती है।

टिप्पणी

**स्रोत** – दूध, गाजर, अजवायन, पत्तागोभी, सिंघाड़ा, मसूर, बादाम, अंजीर, अन्नकण के चोकर, सफेद तिल तो कैल्शियम का भंडार है।

**मैग्नीशियम** – यह चिकनाई के उपयोग में सहायक होता है। इसकी कमी से पाचन खराबी, थकान, चिड़चिड़ापन, स्नायु दुर्बलता, मस्तिष्क दुर्बलता, शारीरिक वृद्धि का निरोध, हृदयगति की तीव्रता आदि लक्षण दिखाई देते हैं।

**स्रोत**– दूध, हरी पत्तेदार सब्जियां, मटर, फलियां, सिंघाड़ा। अन्नकण में यह पर्याप्त मात्रा में पाया जाता है।

**फास्फोरस** – यह शरीर कोश में शक्ति संचार व कैल्शियम के साथ साथ दांत व हड्डी को दृढ़ व स्नायु संस्थान को सशक्त बनाता है। इसकी कमी से शरीर का विकास सीमित हो जाता है तथा सूखा रोग, वजन घटना, कमजोर हड्डियां व कमजोर दांत व साधारणतः कमजोरी की अनुभूति होती है।

**स्रोत** – दूध, फलियां, सिंघाड़ा, काष्ठज फल (मेवा), हरी सब्जी व हल्दी है। कैल्शियम के साथ फास्फोरस अवश्य ही रहता है।

**लोहा** – इसके अवशोषण के लिए भोजन में तांबा तथा कैल्शियम का रहना आवश्यक है। सौभाग्य से खाद्य में लोहा व तांबा साथ ही रहते हैं। लोह तत्व, रक्ताभाव तथा पाचन संबंधी गड़बड़ी को ठीक करता है। इसकी कमी में हिमोग्लोबिन का कम होना, रक्तकण कम होना, लाल रक्तकण का अभाव, जीवन शक्ति का क्षीण होना आदि अनेक रोग पैदा हो जाते हैं।

**स्रोत** – यह हरी पत्तेदार सब्जियों, पत्तागोभी, सेब, खजूर, सूखे मेवे, अमरूद, केला, बैंगन, अनार, खुमानी, खुबानी, मुनक्का, अंगूर, गाजर, चोकर, धनिया इत्यादि में अधिक मात्रा में पाया जाता है।

**तांबा** – यह हिमोग्लोबिन की रचना के लिए लौह तत्व के साथ काम करता है। इसकी कमी से रक्ताभाव, श्वास में खराबी, साधारण कमजोरी तथा वृद्धि विकास सीमित हो जाता है।

**स्रोत**– यह संपूर्ण अन्नकण तथा लौह युक्त खाद्यों में साधारणतः पाया जाता है। हरी पत्तेदार सब्जियां (पालक, सरसों), गुड़, चिड़वा, अनार एवं खजूर आदि।

**आयोडीन** – यह चुल्लिका ग्रन्थि (thyroid gland) को स्वस्थ रखता है। शरीर की सभी क्रियाएं चुल्लिका ग्रन्थि से प्रभावित होती हैं। यह बुद्धि तीव्र करता है, घेंघा रोग तथा मोटापे से बचाता है। चिकनाई तथा प्रोटीन के ओषजन (oxidation) के लिए आवश्यक है।

टिप्पणी

**स्रोत** – मखाना, सिंघाड़ा, अनानास, हरी सब्जियां, संपूर्ण अन्नकण। भोजन में सदैव आयोडीन युक्त नमक का प्रयोग करना चाहिए।

**सोडियम** – यह प्रोटीन के पाचन के लिए आवश्यक है। वजन घटना, नाड़ी विकार, नमक की भूख, साधारण कमजोरी, पानी का रूकाव होना आदि इसकी कमी के प्रमुख लक्षण हैं।

**स्रोत** –हरी पत्तेदार सब्जियों, पालक, मूली, चना, शलजम, छिलके समेत फल, छिलके समेत दालों में यह प्रचुर मात्रा में पाया जाता है।

**पोटेशियम** – यकृत तथा मांसपेशियों में ग्लाइकोजन बनाने में इसका बड़ा महत्व है। यह पेशियों व तंतुओं में लचीलापन लाता है। शरीर में अम्लता को संतुलित रखता है तथा स्नायु संस्थान को शक्तिशाली बनाता है। इसके अभाव में मन्द विकास, कब्ज, वायु प्रकोप, अनिद्रा आलस्य, स्नायुविक रोग आदि हो सकते हैं।

**स्रोत** – सभी पूर्ण खाद्यों में, सब्जियों, तरबूज, सफेद पेठा, ककड़ी, पत्तागोभी, लौकी, खीरा आदि में विशेष रूप से मिलता है।

### 6) आहारीय रेशा

आहारीय रेशे शरीर में अनेक महत्वपूर्ण कार्य करते हैं जैसे– आंतों की सफाई, मल की स्थूलता को बढ़ाना आदि। इसके अभाव में कब्ज हो जाता है जो अन्य रोगों का मूल कारण है।

**स्रोत** – यह फल–सब्जी, अन्नकण, वनस्पति, खाद्यों के ऊपरी भाग व बीजों में रहता है। इसलिए चोकर समेत आटा, छिलके समेत दालें, फलों में नाशपती, अमरूद, सेब इत्यादि का अवश्य सेवन करना चाहिए। ईसबगोल की भूसी, अंजीर, बेल, मुनक्का, गूलर, किशमिश में यह पर्याप्त मात्रा में होता है।

### 7) पानी

हमारा शरीर 70 प्रतिशत पानी से बना है। शरीर को 5–7 लीटर प्रतिदिन पानी की आवश्यकता होती है जो कार्यप्रणाली, तापमान, आर्द्रता एवं अन्य स्थितियों पर निर्भर करता है। प्रतिदिन 8–10 गिलास पानी अवश्य लें। लगभग 20 प्रतिशत पानी भोजन से प्राप्त हो जाता है। शेष पानी पीने से या रसाहार से प्राप्त हो जाता है।

बर्फ का पानी या अधिक ठंडा पानी पीने से पाचन क्रिया खराब होती है। भोजन के दौरान पानी नहीं पीना चाहिए। पानी के बदले आजकल चाय, कॉफी, सफेद चीनी शर्बत, कृत्रिम रासायनिक पेय आदि लेते हैं जो हानि का कारक हैं। पानी के स्थान पर फल–सब्जियों का रस, नारियल पानी इत्यादि सजीव जल लेना स्वास्थ्य के लिए लाभदायक है।

टिप्पणी

# संतुलित आहार

शरीर की रचना, विकास, वृद्धि तथा प्रतिदिन की क्षतिपूर्ति के लिए हमारा आहार संतुलित होना चाहिए। संतुलित आहार शारीरिक कार्यों के लिए सभी महत्वपूर्ण और आवश्यक पोषक तत्व प्रदान करता है और रोगों से बचाव कर सर्वोत्तम स्वास्थ्य तथा लंबी आयु प्रदान करता है। अर्थात् संतुलित आहार ऐसा आहार है जिसमें सभी पोषक तत्व प्रचुर/उचित मात्रा में सम्मिलित रहते हैं और जो स्वास्थ्य के लिए आवश्यक होते हैं।

पोषण, जो संतुलित आहार पर निर्भर करता है, वह रोग के उपचार के लिए भी महत्वपूर्ण होता है। रोग का प्राथमिक कारण 'दोषपूर्ण पोषण व्यवस्था' या शरीर की प्रतिरक्षण क्षमता का कमजोर होना है। शरीर के अंदर एक प्राकृतिक उपचार क्रिया विधि (Natural Healing Mechanism) होती है किन्तु वह अपने कार्यों को तभी भली–भांति पूर्ण कर पाती है जब उसकी प्रचुर मात्रा में सभी अनिवार्य पोषक तत्वों की आपूर्ति होती है। इस प्रकार पोषण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव पोषक तत्वों का अंतःग्रहण, पाचन, समाहित तथा उपयोग करता है और उसके अपशिष्ट पदार्थों (waste material) को निष्कासित कर दिया जाता है।

चित्र 6.1: संतुलित आहार

टिप्पणी

## आहार, पोषण व स्वास्थ्य में परस्पर संबंध और महत्व

आहार, पोषण और स्वास्थ्य में परस्पर क्या संबंध है? इस पर चर्चा करते हैं। शरीर–रचना में वृद्धि और पूर्ति तथा जीवन के अनुरक्षण के लिए खाद्य पदार्थ ग्रहण किए जाते हैं, वह आहार कहलाता है। पोषण और क्षति पूर्ति के लिए उचित आहार अनिवार्य है।

'स्वास्थ्य', शक्ति और सामर्थ्य के रूप में शरीर और मन की सामान्य अवस्था है। उचित और संतुलित आहार जीवन को सशक्त और समर्थ बनाए रखता है।

आदिकाल से ही आहार ने मनुष्य के स्वास्थ्य को प्रभावित और नियमित किया है। आहार और स्वास्थ्य के बीच के संबंध को शताब्दियों पहले, हमारे पूर्वज भी जानते थे। उचित आहार द्वारा अच्छे स्वास्थ्य के महत्वपूर्ण नुस्खे हमारे धर्म–ग्रन्थों, परंपरा और संस्कृति का हिस्सा बन गये। अतः प्राचीन काल से ही आहार, पोषण और स्वास्थ्य के बीच एक सकारात्मक और घनिष्ठ संबंध रहा है।

## यूनिटगत प्रश्न 6.1

1. भोजन की परिभाषा लिखिए।

   ..........................................................................................................

   ..........................................................................................................

2. पोषण क्या है?

   ..........................................................................................................

   ..........................................................................................................

3. भोजन में विद्यमान पोषक तत्वों के नाम बताइए।

   ..........................................................................................................

   ..........................................................................................................

4. निम्नलिखित प्रश्नों के सामने सही या गलत लिखिए।

   क. लौह तत्व की कमी से रक्त में हीमोग्लोबिन कण कम हो जाते हैं। ( )

   ख. संतानोत्पत्ति की क्षमता के लिए विटामिन 'के' अनिवार्य है। ( )

   ग. विटामिन सी की कमी से स्कर्वी रोग हो जाता है। ( )

   घ. 1 ग्राम वसा से 9 किलो कैलोरी ऊर्जा प्रदान होती है। ( )

टिप्पणी

## 6.3 आहार की यौगिक अवधारणा

योगमयी जीवन जीने के लिए व्यक्ति का आहार कैसा होना चाहिए? आइए, इस विषय पर चर्चा करते हैं—

1. प्राचीन ग्रंथ आयुर्वेद में आहार का बहुत ही सुव्यस्थित ढंग से वर्णन आता है कि सामान्य रूप से आहार संतुलित होना चाहिए। आयुर्वेद के सिद्धांत के अनुसार संतुलित भोजन मधुर, अम्ल, कटु और कषाय रस युक्त होना चाहिए।
2. भोजन व्यक्ति की अपनी प्रकृति के अनुकूल होना चाहिए।
3. उम्र व देशकाल, ऋतु और दिन—रात के विभेद से खाद्य पदार्थों का सेवन करना चाहिए।

भारतीय पाकशास्त्र में रसोई का अत्यंत महत्वपूर्ण स्थान है। रसोई में उपलब्ध अनेक वनस्पति, उपादान और खाद्य सामग्रियां विभिन्न औषधि गुणों से युक्त होती हैं। इन सामग्रियों का उपयोग भोजन को संस्कारित करने के अतिरिक्त अनेक रोगों को उपचारित करने के लिए भी किया जा सकता है।

आइए, जानें कैसे —

- आहार स्वास्थ्य को उन्नत करता है।
- उचित आदर देने के लिए आहार की कुछ वस्तुओं को धार्मिक अनुष्ठानों का अंग बना दिया गया।
- जो आहार शरीर की टूट—फूट की मरम्मत कर सकते थे, उन्हें प्रमुख स्थान दिया गया।
- हमारे पूर्वज शहद, दही और तुलसी को अमृत समझते थे। 'जौ' पूर्वजों के अंतिम संस्कार के समय समर्पित किया जाता था और केवल मांगलिक स्थानों को अलंकृत करता था।
- पवित्र कुरान में अंजीर, बेर और शहद पर एक अध्याय है।
- ईसाइयों के धार्मिक ग्रन्थों में जौ, शहद, दही, भुने बीजों और पानी का आहार के रूप में प्रायः वर्णन में आता है।

अतः हम रसोईघर को प्राथमिक चिकित्सालय की संज्ञा भी दे सकते हैं।

**छान्दोग्य** —श्रुति में भी विशद रूप से वर्णन मिलता है कि आमाशय में पचने के बाद हमारा भोजन तीन भागों में विभक्त हो जाता है। स्थूल निस्सार अंश मल बनता है, सार अंश से मांसादि बनते हैं तथा सूक्ष्म अंश से मन की पुष्टि होती है। जिस प्रकार दही के मथने पर उसका सूक्ष्म अंश ऊपर आकर घृत बनता है, उसी प्रकार अन्न के सूक्ष्मांश से मन बनता है। कहा भी गया है जैसा अन्न वैसा मन। *'यादृदशं भक्ष्यते अन्नं बुद्धिर्भवतितादृशी'* अर्थात् हम जैसा भोजन करते हैं, बुद्धि वैसी ही हो जाती है। अतः यदि भोजन तामसिक होगा तो हमारा मन, बुद्धि, प्राण और शरीर तामसिक होगा जिससे ब्रहाचर्य धारण और

टिप्पणी

साधना आदि शुभ कर्म असम्भव हो जायेंगे और यदि वह राजसिक हुआ तब भी मन और बुद्धि चंचल हुए बिना न रहेंगे। इसलिए बुद्धिमानी इसी में है कि सादा और सात्विक भोजन ही ग्रहण किया जाए।

आहार को मुख्य रूप से तीन श्रेणी में विभक्त किया गया है।

1. सात्विक आहार
2. राजसिक आहार
3. तामसिक आहार

## 1. सात्विक आहार

सरस, स्निग्ध, सारवान और हृदयगाही आहार सात्विक आहार कहलाता है। सात्विक आहार को उत्तम कोटि का आहार माना जाता है। सात्विक भोजन सदैव ताजा, पका हुआ, रसीला, शीघ्र पचने वाला, चिकना और स्वादिष्ट होता है। यह मस्तिष्क की ऊर्जा में वृद्धि व मन को प्रफुल्लित और शांत रखता है व शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक उन्नति की ओर ले जाता है।

जो आहार आयु, बुद्धि, बल, आरोग्यता, सुख और प्रीति बढ़ाने वाले हैं व मन को प्रिय होते हैं, सात्विक आहार की श्रेणी में आते हैं। उदाहरण – ताजे फल, सब्जियां, पत्तेदार साग, अंकुरित अन्न आदि।

## 2. राजसिक आहार

अधिक कटु, अम्लीय, लवणीय, उष्ण, तीक्ष्ण और उग्र आहार राजसिक आहार कहलाता है। राजसिक आहार ताज़ा परन्तु भारी होता है। यह भोजन इंद्रियों में उत्तेजना प्रदान करता है। राजसिक आहार उन लोगों के लिए लाभदायक होता है जो जीवन में संतुलित आक्रामकता में विश्वास रखते हैं, जैसे– सैनिक, राजनेता, खिलाड़ी, व्यापारी आदि, जो सशक्त, सम्मान, स्थिति और समृद्धि में रहते हैं। राजसिक आहार के अंतर्गत कड़वे, खट्टे, लवणयुक्त, बहुत गरम तीखे, तेज मसालेदार, लहसुन, प्याज, तले हुए पदार्थ, चाय, काफी आदि आते हैं जो दुःख, चिन्ता तथा रोग उत्पन्न करने वाले हैं। राजसिक आहार भोग की प्रवृत्ति, कामुकता, लालच, ईर्ष्या, क्रोध, कपट, अभिमान और अधर्म की भावना पैदा करता है।

## 3. तामसिक आहार

बासी, रसहीन, दुर्गन्ध युक्त, झूठा और अपवित्र आहार तामसिक आहार कहलाता है। Processed food यानी ऐसे खाद्य पदार्थ जो मैदा, वनस्पति, घी, सफेद चीनी से बने हो जैसे बर्गर, पेस्ट्री, चाकलेट, कोल्डड्रिंक्स, तले हुए पदार्थ, मिर्च मसालेदार व्यंजन, मांस, मदिरा, तम्बाकू आदि तामसिक श्रेणी में आते हैं।

तमस हमारी जीवन शक्ति में अवरोध पैदा करता है जिससे धीरे–धीरे स्वास्थ्य और शरीर कमजोर होता जाता है। तामसिक आहार लेने वाले व्यक्ति बहुत ही मूडी किस्म के, असुरक्षा की भावना, अतृप्त इच्छाएं, वासना और भोग की इच्छा रखने वाले होते हैं। ऐसे लोग स्वार्थी और खुद में ही सिमट कर रह जाते हैं और इनमें समय से पहले बुढ़ापे के लक्षण दिखने लगते हैं। ये लोग सामान्यतः कैंसर, हृदयरोग, मधुमेह, गठिया और लगातार थकान जैसी जीवनशैली संबंधित समस्याओं से ग्रस्त पाए जाते हैं।

## 4. अमृत आहार

हमारा आहार एक संपूर्ण सप्राण और प्राकृतिक आहार ही है। भोजन जो ताजे फलों, कच्ची साग–सब्जियों, ताजे दूध, दही व शहद तथा मेवों के साथ सीधे प्रकृति से प्राप्त होते हैं वे खाद्य शारीरिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक संतुलन के लिए बहुत ही महत्वपूर्ण है। शरीर को पूर्णतः प्रदान करते हुए जो आहार आनंद व शक्ति प्रदान करते हैं वही आहार निर्दोष आहार व अमृत आहार कहलाते हैं।

अमृत को स्वादिष्ट, शक्तिवर्द्धक और दीर्घ जीवन प्रदान करने वाला कहा जाता है। अमृत ही जीवन व आयु का पोषण है। हमारा भोजन अमृत होना चाहिए जिसका प्रभाव हमारे शरीर के पोषण पर प्रभाव डालता है जिसे हम सात्विक, संतुलित वह पोषण ऊर्जा से भरे खाद्य आहार से प्राप्त कर सकते हैं।

अमृत आहार कुपोषण को दूर करता है। ऐसा खाद्य गैस निरोधक, कब्जनाशक, रोगों को ठीक करने वाला भोजन है।

अमृत खाद्य एक पूर्ण एवं नवजीवन देने वाला होता है। अमृत आहार का अर्थ है– सीधे प्रकृति के दिए गए खाद्य को खाने के लिए उपयोग किया जाता हैं जैसे आंवला, नारियल, मौसमानुसार फल व सब्जियां, काष्ठजफल जैसे मेवे इत्यादि। ऐसा भोजन तन–मन का स्वास्थ्य, यौनशक्ति तथा कार्यकुशलता बढ़ाना, जीवन संचालन एवं विकास व वशद्धि के लिए अमृत है।

संपूर्ण आटा, बिना पालिश किया हुआ चावल, कम मात्रा में दाल, अंकुरित अनाज, दही आदि अमृत आहार की श्रेणी में गिने जाते हैं।

## यूनिटगत प्रश्न 6.2

1. सात्विक आहार किसे कहते हैं?

........................................................................................................................

........................................................................................................................

टिप्पणी

2. राजसिक आहार के कोई दो उदाहरण दें।

.............................................................................................................

.............................................................................................................

.............................................................................................................

3. तामसिक आहार लेने वाले की प्रवृत्ति कैसी होती है?

.............................................................................................................

.............................................................................................................

.............................................................................................................

## 6.4 अम्लीय और क्षारीय आहार

एक स्वस्थ व्यक्ति का शरीर रसायन और रक्त, क्षारीय होते हैं और मूत्र किंचित अम्ल। हमारे शरीर का अम्लता–क्षारीय संतुलन बहुत हद तक उस भोजन पर निर्भर करता है जो हम ग्रहण करते हैं। शरीर में अम्लीय और क्षारीय तत्वों की प्रतिक्रिया के बीच संतुलन ही उत्तम स्वास्थ्य के लिए सहायक होता है। आहार इस तरह का होना चाहिए कि क्षारीय–अम्लता का अनुपात 80:20 हो, अर्थात् अपने भोजन में उन्हें अत्यधिक क्षारीय खाद्य पदार्थों (लगभग 80 प्रतिशत) को सम्मिलित करना चाहिए और अम्लीय खाद्य पदार्थों को कम से कम (लगभग 20 प्रतिशत) सम्मिलित करना चाहिए।

जिन खाद्य पदार्थों में कार्बनडाइआक्साइड और कार्बनिक, लैक्टिक और यूरिक एसिड, क्लोरीन, फास्फोरस, गंधक और आयोडीन होता है, वे उन तत्वों में अम्लीय प्रभाव को बढ़ाते हैं। सोडियम, पोटेशियम, कैल्शियम, लोहा, तांबा, मैग्नेशियम और मैंगनीज जिन खाद्य पदार्थों में होते हैं, वे उनके क्षारीय प्रभाव को बढ़ाते हैं। विभिन्न खाद्यों में खनिजों और सूक्ष्म मात्रिक तत्वों की मात्रा, जिस भूमि में वे उत्पन्न होते हैं, उसमें उन तत्वों की उपस्थिति पर निर्भर करती है।

इन अम्लीय या क्षारीय तत्वों में से किसी की भी अधिकता अच्छे स्वास्थ्य के लिए ठीक नहीं होती है। इन तत्वों के बीच सही सन्तुलन, अच्छे स्वास्थ्य की ओर ले जाता है। इस संतुलन में किसी भी प्रकार के परिवर्तन से विभिन्न बीमारियाँ हो सकती हैं:

संक्रमण और जुकाम के कीटाणु क्षारीय तंत्र में जीवित नहीं रहते। वे एक अत्यधिक अम्लीय वातावरण में पनपते हैं। इन समस्याओं से अपनी रक्षा करने के लिए क्षारीय भोजन का अंतर्ग्रहण बढ़ाकर अपने तंत्र को क्षारीय रखना आवश्यक हो जाता है। इस प्रकार का प्रयास रोग से शीघ्र राहत देता है।

एक और विचार करने योग्य बात यह है कि अत्यधिक नमक, जिसमें सोडियम क्लोराइड होता है, क्षारीयता बढ़ाता है और कैंसर की स्थिति के निकट ले जाता है। अतः भोजन के अलावा, सलाद या फलों में ऊपर से अतिरिक्त नमक के सेवन से बचना चाहिए। पेट में अम्लता बढ़ने

के साथ बहुत सी पाचन संबंधी समस्याएं उत्पन्न हो जाती हैं। यदि समय पर इन्हें ठीक नहीं किया जाए तो धीरे—धीरे यह भयंकर रोग का रूप ले सकती हैं। अनाज, दालें, मैदा से बने उत्पाद, कोल्ड—ड्रिंक्स, उबाला हुआ दूध और सब प्रकार के मांस अम्लता बढ़ाते हैं। दूसरी ओर प्रायः ताजी, हरी सब्जियां और फल क्षारीयता बढ़ाते हैं और अम्लता कम करते हैं।

असंतुलित आहार लेने से जीव—विष उत्पन्न होता है और जब यह विष शरीर के विभिन्न तंत्रों द्वारा निकाला नहीं जा सकता तो यह शरीर के संबंधित अवयवों को नुकसान पहुँचाता है और रोग का कारण बन जाता है। इसलिए हमें संतुलित आहार लेना चाहिए और अपने रक्त प्रवाह को शुद्ध करना चाहिए।

प्राकृतिक आहार का सेवन करने वालों के लिए क्षारधर्मी या अम्लधर्मी खाद्य पदार्थों की समस्या नहीं है।

## 6.5 ऋतु—काल एवं आयु के अनुसार आहार

**ऋतु—काल व आयु के अनुसार आहार सूची नीचे दी गयी है जिसके अनुसार बच्चे और युवा आहार ले सकते हैं—**

### आहार सूची (ग्रीष्म ऋतु)

**प्रातःकालीन :** शुद्ध जल

**नाश्ता :** ताजे फल (खरबूजा, तरबूज, केला), अंकुरित आहार (मूँग, मोठ, चना, अल्फा—अल्फा) दलिया, भीगे बादाम, किशमिश।

**11—12 बजे :** ताजे फलों/सब्जियों का जूस, बेल का शरबत/जौ का सत्तू/ नारियल पानी।

**दोपहर का खाना :** सलाद—खीरा, ककड़ी, टमाटर, प्याज, चोकर वाली रोटी, सब्जी (लौकी, टिण्डा, परवल, तोरी, कद्दू, भिंडी आदि) ताजा दही, हरी चटनी (धनियां, पोदीना, हरी मिर्च, कच्चा आम) ताजा मट्ठा (छांछ)।

**शाम को :** ताजा नींबू पानी/नारियल पानी।

**रात का खाना :** सब्जी वाला दलिया, अथवा रोटी, सब्जी, सलाद।

**नोट : निषेध**

- ग्रीष्म ऋतु में तेज गरम उत्तेजक खाद्य पदार्थों जैसे चाय, कॉफी, मसालेदार तीखे भोजन का सेवन नहीं करना चाहिए।

### 2. आहार सूची (शीत ऋतु)

**प्रातःकालीन :** गुनगुना पानी।

**नाश्ता :** हर्बल चाय, दलिया।

टिप्पणी

**दोपहर का खाना :** सलाद, गाजर, चुकन्दर, पत्तागोभी, चोकर वाली रोटी, सब्जी (गोभी, गांजर, चुकन्दर, शलगम, साग (सरसों, बथुआ, मेथी)

**शाम को :** ड्राई–फ्रूट्स (सूखे मेवे) भुना चना, भुनी मूंगफली, गुड़, हर्बल चाय अथवा सब्जियों या टमाटर का सूप।

**रात का खाना :** रोटी + सब्जी या सब्जी वाला दलिया।

**रात को सोते समय :** गरम दूध।

**नोटः** शीत ऋतु में ठंडे खाद्य पदार्थों जैसे कोल्ड ड्रिंक्स, आइसक्रीम, ठंडे पेय पदार्थ, तरबूज, खरबूजा, चावल आदि का सेवन न करें।

## 3. आहार सूची (वर्षा ऋतु)

**प्रातःकालीन :** ताँबे के बर्तन का पानी (रात भर रखा हुआ) लें।

कुछ समय पश्चात् : नींबू (1/2 नींबू) + शहद पानी (1 चम्मच) गुनगुना।

**नाश्ता 8 बजे तकः** अंकुरित आहार (मूंग, मोठ, चना, भीगा बादाम, किशमिश, नारियल, खजूर दलिया, पोहा, उपमा।

**11 बजे :** ताजे फल (जामुन, अमरूद, पपीता, अनानाश)

**दोपहर का खाना :** सलाद–खीरा, ककड़ी, टमाटर, प्याज।

**1–2 बजे :** चोकर समेत रोटी, सब्जी (तोरी, परवल, लौकी, कद्दू, शिमलामिर्च आदि)।

**शाम को (4–5 बजेः** हर्बल चाय / नारियल पानी।

**खाने से पहले :** सब्जियों/टमाटर का सूप (सहजन की फली, कमलककड़ी आदि)

**रात का खाना (7–8 बजे):** सब्जी वाला दलिया अथवा रोटी और सब्जी।

**नोटः** वर्षा ऋतु में दही तथा अन्य वायु जनक खाद्यों का सेवन नहीं करना चाहिए जैसे मटर, आलू, भिंडी, गोभी, अरबी, उड़द दाल आदि।

## औषधि के अनुसार आहार

**प्रातःकालीन (5–6 बजे):** ताँबे के बर्तन का पानी (रात भर रखा हुआ) एक कली लहसुन।

**कुछ समय पश्चात्** : आँवला पानी (तीन–चार सूखे आँवले के छोटे टुकड़े रात को काँच के गिलास में लगभग 100 एम.एल. पानी में भिगो दें)

टिप्पणी

15 मिनट बाद (6.30 बजे) : किशमिश पानी, मेथी पानी (एक चम्मच मेथी रात को आधा कप पानी में भिगो कर रखें)।

**नाश्ता (7—8 बजे)** : अंकुरित आहार (मूँग, मोठ, चना, मेथी, तिल, अल्फा—अल्फा) भीगा हुआ बादाम, किशमिश, अंजीर, खजूर, नारियल, दलिया (गेहूँ अथवा जई या पोहा, उपमा, इडली आदि)

**11 बजे :** मौसम के अनुसार ताजे फल अथवा ताजे फलों/सब्जियों का जूस।

**दोपहर का खाना (1—2 बजे) :** सलाद, खीरा, ककडी, गाजर, टमाटर, प्याज, चोकर समेत मोटे आटे की रोटी (गेहू, चना, सोयाबीन) मौसम के अनुसार हरी सब्जियाँ, साग, दाल, पनीर, ताजादही, हरी चटनी, धनिया, पोदीना, हरी मिर्च, आंवला, कच्ची हल्दी, लहसुन, करी पत्ता।

**भोजन के बाद :** ताजा मट्ठा।

**शाम को :** हर्बल चाय/ताजा नींबू पानी, ड्राईफ्रूट्स या भुना चना, मूँगफली।

**खाने से पहले :** सब्जियों/टमाटर का सूप।

**रात का खाना :** केवल रोटी और सब्जी (दाल और चावल का सेवन रात में न करें) अथवा सब्जी वाला दलिया।

वृद्धों के लिए आहार सूची में थोड़ी सी भिन्नता रखनी आवश्यक है:

| | |
|---|---|
| **सुबह उठने पर** | आँवला + शहद पानी या गुनगुना पानी (एक ताजे आँवले का रस या 8, 10 सूखे आँवले के टुकड़े, रात भर एक गिलास पानी में भिगोकर एक चम्मच शहद के साथ में) |
| **शौच के बाद** | अंजीर पानी (दो सूखे अंजीर के टुकड़े रात भर पानी भीगे हुए) या (एक चम्मच मेथी दाना रात भर पानी में भीगे हुए) |
| **नाश्ता** | मौसम के फल जैसे— पपीता, तरबूज़, खरबूजा, अंकुरित मूंग, अल्फा—अल्फा अथवा अंकुरित गेहूं का दलिया + एक गिलास छाछ |
| **खाने से पहले** | हरी सब्जियों का सूप (जिसमें थोड़ी सी कच्ची हल्दी व लहसुन की एक—दो कली) |
| **दोपहर का भोजन** | सब्जी वाला दलिया या खिचड़ी अथवा सम्पूर्ण गेहूं की रोटी (चोकर समेत) हरी सब्जी जैसे— लौकी, तोरई, टिण्डा, परवल, सीताफल आदि + <br> हरी चटनी (हरा धनिया, पुदीना, आँवला, लहसुन, अदरक, कच्ची हल्दी आदि) |
| **शाम चार बजे** | मौसम के फल/ताजे फलों का जूस या नारियल पानी या जौ के सत्तू |

टिप्पणी

| | |
|---|---|
| रात का भोजन (रात्रि 8 बजे तक) | सब्जी वाला दलिया |
| रात को सोते समय | दो चम्मच चोकर पानी के साथ |

नोटः
- रात के भोजन में दाल, दही, मूली, अमरूद आदि के सेवन से बचें
- भोजन के बाद लगभग 10 ग्राम गुड़ का सेवन कर सकते हैं
- अत्यधिक नमक व चीनी से बचें
- मैदा आंतों में चिपक जाता है इसलिए मैदा व इससे बने उत्पादों से बचें
- दिन भर में दो कप चाय या कॉफी से ज्यादा न लें
- शाकाहारी भोजन लेने का प्रयास करें
- तम्बाकू, शराब, सिगरेट आदि के सेवन से बचें
- तले हुए खाद्य पदार्थ बिल्कुल न लें

## ऋतुओं के अनुकूल भोजन

हमारा शरीर मौसमी परिवर्तन से प्रभावित होता है गलत आहार से यह प्रभाव अत्यधिक हानिकारक भी हो जाता है। जो अनेकों रोगों का कारण बनकर रोगों की जड़ों को पकड़ लेता है। मौसमानुसार भोजन व जीवनशैली व दिनचर्या में परिवर्तन करके हम स्वयं को स्वस्थ व निरोगी व पाचन शक्ति को सुदृढ़ कर आने वाले मौसमी रोग से लड़ने की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सक्षम हो पाते हैं। जिसका परिणाम हमें ऋतु परिवर्तनों में शरीर की दृढ़ता से पता चलता है। अतः हम कह सकते हैं कि भोजन व दिनचर्या में बदलाव ही स्वस्थ जीवन की धरोहर है।

इन्हीं प्रयासों से हमारे शरीर में स्थित दोष – वात, पित्त व कफ का सही संतुलन बनता है व तीनों प्रकृतियों का लाभ प्राप्त होता है।

शारीरिक गठन, रंग, त्वचा, पसीना, बाल, आंखें, मुंह, भूख, प्यास, जीभ, मुंह का स्वाद, नाड़ी, रूचि–अरूचि, स्वभाव, रोगों की प्रकृति सभी मौसम में खाए आहार के प्रभाव से वात, पित्त एवं कफ को प्रभावित करते हैं। इसलिए ऋतु परिवर्तन के **समय खासतौर पर भोजन में सुधार की आवश्यकता होती हैं जिसकी तालिका निम्न प्रकार से है –**

टिप्पणी

| मास/माह | पच्य (प्रयोग करें) | अपच्य (उपयोग न करें) |
|---|---|---|
| चैत्र मास | नीम की पत्ती, काली मिर्च के साथ एक माह चना का सेवन | गुड़ |
| वैशाख मास | चावल, बेल | सरसों का तेल मना है मूंगफली व तिल तेल खा सकते हैं |
| ज्येष्ठ मास | दिन में सोना, अंगूर, मुनक्का | मार्ग—गमन, दोपहर की गर्मी में न निकलें। |
| आषाढ़ मास | अदरक | बेल |
| श्रवण मास | हरड़ (हर्र) | साग (पालक—पत्ते वाला कोई भी हरा साग) न खायें |
| भाद्रपद<br>(भादों) | चित्रक (चित्रकादिक—वटी)<br>का सेवन | दही |
| क्वार<br>(अश्विन) | गुड़<br>मूली | करेला, दूध<br>मट्ठा, छाछ |
| कार्तिक मास | तेल (सरसों आदि तेल की मालिश) करनी चाहिए या तिल का तेल | जीरा<br>धनिया<br>मिश्री |
| अगहन | दूध | चना |
| पूस (पौष मास) | घी खिचड़ी<br>आमलक हरा (आंवला) | |
| फाल्गुन | प्रातः स्नान | |

टिप्पणी

किस. ऋतु में कौन–सा खाद्य विशेष उपयोगी होता है इसका विवरण इस प्रकार है –

| नाम खाद्य | | जिस मात्रा में अधिक अनुकूल होता है |
|---|---|---|
| 1. | दूध तथा दूधजन्य खाद्य मट्ठा, दही | जून, जुलाई, अगस्त, सितम्बर, अक्तूबर एवं नवम्बर और फरवरी |
| 2. | रसीले ताजे फल | मार्च, अप्रैल, मई |
| 3. | अन्न कण तथा सूखे हुए काष्ठज फल | दिसम्बर, जनवरी, फरवरी |
| 4. | हरी सब्जी अपक्व और पकी हुई | जून, जुलाई, अगस्त, सितम्बर, अक्तूबर और नवंबर |

## भोजन औषधि के रूप में – विभिन्न पेड़–पौधों की उपचार में महत्वता

क्या आप जानते हैं कि मनुष्य की उत्पत्ति के साथ ही बीमारियों और तत्पश्चात् उनके उपचार की औषधि की आवश्यकता के अनुरूप उत्पत्ति हुई है। आदिकाल में मानव ने जब भोजन की खोज की तो उसने आकस्मिक पेड़ पौधों के फल, पत्तियां, तना या जड़ें उपयोग कीं और देखा कि उनके खाने से क्या हानि या लाभ हुए तब उसी प्रकार उन्हें अपना आहार मान लिया। उसने अपने अनुभव द्वारा इन पेड़ पौधों से विभिन्न रोगों का उपचार किया है।

भारत में औषधीय पौधों का ज्ञान बहुत ही पुराना है। पौधों के औषधीय गुणों की चर्चा अथर्ववेद में भी की गई है और वहीं से आयुर्वेद विकसित हुआ।

अब हम ऐसे ही कुछ औषधीय पेड़–पौधों के सामान्य एवं उपचारात्मक गुणों पर प्रकाश डालेंगे –

1. अमरूद – कब्ज दूर करने एवं स्नायु सशक्त बनाने में सहायक है।
2. आम – पाचन क्रिया को ठीक, कब्ज नाशक एवं वजन बढ़ाने वाला तथा नेत्रों के लिए विशेष लाभकारी है।
3. **अजवाइन पत्ती** – रक्त की रचना, स्नायुविक पीड़ा में।
4. **अखरोट** – मस्तिष्क को सशक्त बनाता है, कब्ज का नाश करता है और वजन बढ़ाता है।
5. **अनानास** – गले में खराश, पाचन एवं अमाशयिक गड़गड़ी में एवं रक्तचाप में काम आता है।
6. **आंवला** – पेट साफ करता है, त्वचा को सतेज एवं स्कर्वी रोग से बचाता है।
7. **आलू** – वजन वर्धन तथा गठिया में तथा श्वेतसार के बदले में काम आता है।

टिप्पणी

8. **अंगूर** – कब्ज, रक्त बनाने में, गुर्दा, गठिया, रोग, पीलिया, तिल्ली के रोग में काम आता है।

9. **अंजीर** – पाचन की गड़बड़ी, कब्ज, खांसी, यकृत दोष और नजले में काम आता है।

10. **कमलगट्टा** – घेंघा के रोग, बालों को लंबा और काले करने में।

11. **किशमिश** – कब्ज, रक्ताभाव, रक्तदोष, बुद्धि तथा हृदय रोग में।

12. **खरबूजा** – रक्तशोधक, इसके कल्प से त्वचा रोग विशेषकर सोराईसिस एवं मन्दाग्नि में विशेष लाभ होता है।

13. **जामुन** – इसके सेवन से मधुमेह एवं अपच में सुधार हो जाता है।

14. **धनिया पत्ती** – रक्ताभाव, पेशाब की जलन एवं यकृत की खराबी में।

15. **टमाटर** – यकृत, वात रोग, मलेरिया एवं पित्त प्रकोप में गुणकारी है।

16. **नारियल** – अतिशोषक, कब्ज नाशक, वजन बढ़ाने वाला एवं फेफड़े के लिए उपयोगी है। इसमें क्षारीय चिकनाई होती है।

17. **नींबू** – यकृत, सिरदर्द, मिचली, अमाशय की गड़बड़ी, गठिया, कब्ज में उपयोगी है।

18. **पपीता** –कब्ज और प्रोटीन के पाचन में उपयोगी है। छिलके समेत कच्चे पपीते एवं बीज का सूप मन्दाग्नि, यकृत दोष तथा आंत्रिक कमी में उपयोगी है।

19. **बेल** – कब्जनाशक, पतले दस्तों को बांधना, कड़े को गीला करना।

20. **संतरा** – मंदाग्नि, वजन, घटाना, रक्तशोधन में।

21. **शरीफा** – पेट साफ करता है एवं गठिया में लाभदायक होता है।

22. **सेब** – अपच, गठिया, यकृत की खराबी, कब्ज एवं पीलिया में।

23. **लहसुन** – रक्तचाप, वात, हृदय एवं गठिया रोग में हितकारी है।

24. **प्याज** – खांसी, स्नायुविक, दुर्बलता, कृमि रोग एवं अनिद्रा में उपयोगी है।

25. **अनानास का रस** – अनानास का पेट की खराबी, पेट के कीड़ों को मारने में मदद करता है एवं गले के रोगों का, ज्वर त्वचारोग, पीलिया एवं डिप्थीरिया में लाभकारी है। इसमें प्रोटीन पचाने की क्षमता भी है।

26. **गाजर का रस** – रक्तशुद्धि, एसीडिटी, आंखों, सांस संबंधी तकलीफों, पाचन संस्थान संबंधी रोगों, अनिद्रा, थकान, रक्त की कमी, दमा, क्षय, दुर्बल स्मरण शक्ति, रतौंधी, पीलिया, पेट के कीड़े, चर्म रोग, हृदय रोग, पित्ताशय की पथरी आदि रोगों में गाजर का रस अत्यंत लाभकारी है।

टिप्पणी

**विशेष – कुछ रोगों में आहार का विशेष ध्यान रखना चाहिए। जैसे –**

| रोग | नहीं लेना चाहिए | लेना चाहिए |
|---|---|---|
| डायबिटिज़ (मधुमेह) | अंगूर, आम, मौसमी का जूस, चुकंदर, आलू, शकरकंद | जामुन, करेला, चौलाई |
| नेफ्राइटिस (गुर्दा प्रदाह) | पालक, टमाटर, अधपका, अनार का जूस, प्याज, कच्चा आंवला, दालें, दूध, दही | पपीता, अमरूद, सीताफल, सफेदपेठा, लौकी, गाजर, चुकंदर, अनानास |
| हृदय रोग | केला, आम, नींबू, मांड (स्टार्च) युक्त आहार तथा मसालेदार आहार मांस, अंडा | अनार, पेठा, खीरा, लौकी, चने, टमाटर का जूस |
| यकृत रोग | दालें, मांस, अंडा, दूध व दूध से बने पदार्थ जैसे घी, मक्खन, पनीर व मसालेदार आहार | पेठा, जीरा, पुनर्नवा, आलू बुखारा, नाशपती, बबूगोशा, अंगूर का जूस |
| त्वचा रोग | नमक तथा मसालेदार आहार मांस, अंडा, प्रोटीन युक्त आहार जैसे दालें | सभी मौसमी फलों एवं कच्ची सब्जियों जैसे–गाजर, चुकंदर, पेठा, जीरा, लौकी आदि का जूस एवं सूप |

## यूनिटगत प्रश्न 6.3

*जोड़े मिलाइए*

| | क | | ख |
|---|---|---|---|
| 1) | अंगूर | i) | हरे साग |
| 2) | क्षारधर्मी खाद्य | ii) | गाय का दूध |
| 3) | अम्लधर्मी खाद्य पदार्थ | iii) | तले हुए पदार्थ |
| 4) | सात्विक आहार | iv) | अनिद्रा |
| 5) | राजसिक आहार | v) | मिठाई |

टिप्पणी

## 6.6 मिताहार भोजन की अवधारणा

**कब और कितना भोजन लें – मिताहार**

भोजन के समय के संबंध में कहा गया है कि जब मन शान्त हो, मल–मूत्र विसर्जित हो चुके हों, तत्व संतुलित हों, पेट हवा से मुक्त हो, शरीर हल्का हो, ज्ञानेन्द्रियाँ कार्य–कुशल हों और भूख हो केवल तभी भोजन ग्रहण करना चाहिए। **भोजन के समय हमें इस प्रकार भोजन करना चाहिए कि पेट में 50% भोजन का स्थान हो, 25% पानी के लिए स्थान हो और शेष 25 % स्थान खाली अर्थात् आकाश तत्व रहे। घेरण्ड संहिता में इस आशय का वर्णन इस प्रकार मिलता है–**

*अन्नेन पूरयेदर्ध तोयेन च तृतीयकम् उदर चतुर्थास संरक्षेद् वायुचारणे।*

भोजन लेने के विषय में एक प्रसिद्ध कहावत है–

''एक बार योगी, दो बार भोगी, तीन बार रोगी।'' एक मुख्य भोजन और एक या दो छोटे भोजन अच्छे स्वास्थ्य के लिए पर्याप्त होते हैं। यदि वे कई बार भोजन लेते हैं तो पाचन संस्थान को कई बार नए सिरे से अपनी प्रक्रियाएं शुरू करनी पड़ती हैं।

नियत समय पर भोजन करने में बहुत लाभ हैं। हमारे शरीर में मुख्यतः तीन क्रियाएं होती हैं – पाचन, पोषण और निष्कासन। सुबह चार बजे से दोपहर बारह बजे के बीच का समय 'निष्कासन' का होता है। इस दौरान शरीर के पोषण के लिए कम से कम खाना चाहिए। इसका अर्थ यह है कि प्रातःकालीन जलपान या नाश्ता हल्का होना चाहिए और पानी का अधिक से अधिक सेवन करना चाहिए। दोपहर बारह बजे से रात्रि आठ बजे का समय 'पाचन' का होता है। अतः इस अवधि में भोजन ग्रहण करना चाहिए। रात के आठ बजे से सुबह चार बजे तक का समय 'पोषण' का होता है। इस दौरान शरीर तथा पाचन तंत्रों को संपूर्ण आराम देना चाहिए। इसलिए रात का भोजन आठ बजे से पहले कर लेना स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है।

अब प्रश्न उठता है कि स्वस्थ रहने के लिए कितना भोजन लेना चाहिए? अधिक भोजन लेने से स्वास्थ्य गिरता है और जीवन की अवधि कम हो जाती है। यदि आप आवश्यकता से अधिक खाते हैं, तो शरीर में विषैले पदार्थ इकट्ठा हो जाते हैं, जो आगे चलकर, भयंकर रोग का कारण बनते हैं। इसलिए 'कब्ज' को अधिकतर बीमारियों की जननी माना जाता है।

उत्तम आहार लेने के साथ–साथ हमें खाने की अच्छी आदतों को विकसित करना भी अत्यंत आवश्यक है। ऐसी ही कुछ आदतों की चर्चा नीचे की गई है –

- भोजन हमेशा शान्त चित्त के साथ प्रारंभ करना चाहिए। कभी भी क्रोध, तनाव, जल्दबाजी में भोजन ग्रहण नहीं करना चाहिए।
- भोजन नियत समय पर करना चाहिए।

टिप्पणी

- कम खाना स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है। भोजन की अधिक मात्रा स्वास्थ्य को प्रभावित करतीहै।
- जब भूख लगे तभी भोजन लेना चाहिए। जब तक ठीक प्रकार से भूख न लगे तब तक भोजन नहीं लेना चाहिए।
- भोजन को हमेशा अच्छी तरह चबा–चबा कर खाना चाहिए, अन्यथा दांतों का काम आंतों को करना पड़ता है।
- भोजन करते समय बात नहीं करनी चाहिए।
- कच्ची सब्जियां और कच्चे फल एक ही समय पर नहीं खाइये।
- भोजन सुखासन में बैठकर करना सबसे अच्छा होता है। भोजन के तुरंत बाद पांच–दस मिनट के लिए भी वज्रसान में बैठने से भोजन जल्द पच जाता है।
- अंकुरित अन्न, मौसम के फल और हरी सब्जियों का अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिए। अंकुरित आहार शक्ति का स्रोत प्रदान करते हैं। ये दीर्घायु प्रवर्तक हैं।
- पक्व भोजन मे ंचोकर सहित आटे की रोटी, बिना पॉलिश वाला चावल तथा सूप आदि का सेवन करना चाहिए।
- जो आहार आग पर नहीं पकाया गया हो वह स्वास्थ्य के लिए बड़ा महत्वपूर्ण होता है। पकाने से एन्ज़ाइम, कुछ विटामिन और खनिज नष्ट हो जाते हैं।
- भोजन से आधा घण्टे पहले और कम से कम आधा घण्टे बाद तक पानी नहीं लेना चाहिए।

---

## यूनिटगत प्रश्न 6.4

**क. रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए।**

1. भोजन में क्षारीय–अम्लता का अनुपात ................ होना चाहिए।
2. भोजन .....................................में बैठकर करना सबसे अच्छा होता है।
3. ................................ और ............................भोजन में क्षारीयता बढ़ाते हैं और अम्लता कम करते हैं।

**ख. सही अथवा गलत का निशान लगाइए।**

1. आहार, पोषण और स्वास्थ्य के बीच एक सकारात्मक संबंध है। ( )
2. आहार में अधिक अम्लीय खाद्य पदार्थों को सम्मलित करना चाहिए। ( )

3. भोजन के तुरंत बाद कोई कड़ी मेहनत का काम नहीं करना चाहिए। ( )
4. अधिक भोजन लेने से स्वास्थ्य बढ़ता है। ( )
5. खाने के साथ खूब पानी पीना चाहिए। ( )

## 6.7 उपवास

स्वास्थ्य एवं दीर्घ आयु जीवन के लिए उपवास की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उपवास स्वस्थ्य जीवन जीने की कुंजी है। उपवास का अभिप्राय, शरीर के पाचन संस्थान को पूर्ण विश्राम देना है। उपवास एक प्राकृतिक स्थिति है। हमारे भारतवर्ष में आदिकाल से उपवास का बहुत महत्व रहा है। हमारी धार्मिक पुस्तकों व धर्मों में उपवास को शारीरिक शुद्धि व मानसिक पवित्रता की दृष्टि से एक साधन भी माना गया है। उपवास प्रकृति की मांग है। शरीर के पुनः स्वास्थ्य प्राप्ति एवं कायाकल्प के लिए उपवास बहुत ही उपयोगी एवं प्रभावकारी है। उपवास के दौरान मरे हुए, मरते हुए कोशिकाओं का निष्कासन तेजी से होता है और नवकोशिका निर्माण में सक्रियता आती है। उपवास के प्रभाव से शरीर में स्थित विष जो अस्वस्थता का कारण है, अवश्य निकल जाता है और शरीर निरोग और संभवतः शाक्तिशाली बन जाता है।

### उपवास का महत्व

- यह उत्तम स्वास्थ्य का द्वार है।
- उपवास अधिकांशतः शारीरिक एवं मानसिक रोगों को ठीक करता है।
- उपवास के दौरान शरीर आकाश तत्व की पूर्ति कर लेता है।
- यह स्वास्थ्य के लिए इतना महत्वपूर्ण माना गया है कि विभिन्न सम्प्रदायों में विविध प्रकार से उपवास रखने का प्रावधान है। हालांकि कुछ लोग उपवास के दौरान गरिष्ठ व तला हुआ भोजन लेते हैं जो स्वास्थ्य की दृष्टि से बहुत हानिकारक है।
- उपवास में तरल पदार्थों जैसे नींबू व शहद का पानी, शिकंजी, छांछ, ताजा सफेद पेठे का रस (बिना नमक) नारियल पानी और सादा पानी का सेवन अधिक करना चाहिए। स्वास्थ्य की दृष्टि से कमजोर व वृद्ध लोग एक दो दिन के लिए केवल फलों और फलों के रस का आहार ले सकते हैं। आहार में इस प्रकार का परिवर्तन स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है।
- साधारणतयः सब रोगों का मूल कारण पाचन संस्थान में विषाक्त पदार्थ का इकट्ठा होना है। अतः इस तंत्र की नियमित रूप से सफाई हो जाती है।
- उपवास से शरीर पूर्णरूप से साफ हो जाता है। और उसकी मरम्मत हो जाती है।

जीव–जंतु भी समय अनुरूप उपवास करते हैं। जब कोई जीव बीमार पड़ता है तो वह भोजन लेना बंद कर देता है और चुपचाप बैठा या लेटा रहता है। वह पानी खूब पीता है, यह उपवास का ही एक तरीका है।

टिप्पणी

क्षय, अल्सर, मिर्गी आदि के रोगियों और अत्यन्त दुर्बल व्यक्तियों को उपवास नहीं रखना चाहिए।

## यूनिटगत प्रश्न 6.5

रिक्त स्थान भरिए–

1. ............................ में केवल फल व सब्जियों का रस ही लिया जाता है।
2. उपवास अवधि में ............................ काल सैर अवश्य करें।
3. .................................... उपवास में रात्रि का भोजन वर्जित है।
4. उपवास का अभिप्राय .......................... संस्थान को पूर्ण विश्राम देना है।
5. ....................................उपवास को चिकित्सक के देखरेख में ही करना चाहिए।

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट में हमने सीखा कि :

1. शरीर के विकास, वृद्धि एवं क्षतिपूर्ति के लिए भोजन अति आवश्यक है। संतुलित आहार, पोषण एवं भोजन में विद्यमान पोषक तत्वों का बहुत महत्व होता है। यौगिक आहार के अंतर्गत सात्विक, राजसिक एवं तामसिक तीन प्रकार के आहार सम्मिलित हैं। स्वास्थ्य के लिए अम्लीय एवं क्षारीय आहार का संतुलित अनुपात परम आवश्यक है।

2. उत्तम आहार लेने के साथ–साथ हमें खाने की अच्छी आदतों को विकसित करना भी अत्यंत आवश्यक है।

   - भोजन हमेशा शान्त चित्त के साथ प्रारंभ करना चाहिए। कभी भी क्रोध, तनाव, जल्दबाजी में भोजन ग्रहण नहीं करना चाहिए।
   - भोजन नियत समय पर करना चाहिए।
   - कम खाना स्वास्थ्य के लिए अच्छा होता है। भोजन की अधिक मात्रा स्वास्थ्य को प्रभावित करती है।
   - जब भूख लगे तभी भोजन लेना चाहिए। जब तक ठीक प्रकार से भूख न लगे तब तक भोजन नहीं लेना चाहिए।
   - भोजन को हमेशा अच्छी तरह चबा–चबा कर खाना चाहिए, अन्यथा दांतों का काम आंतों को करना पड़ता है।

टिप्पणी

- भोजन करते समय बात नहीं करनी चाहिए।
- कच्ची सब्जियां और कच्चे फल एक ही समय पर नहीं खाइये।
- भोजन सुखासन में बैठकर करना सबसे अच्छा होता है। भोजन के तुरंत बाद पांच–दस मिनट के लिए भी वज्रसान में बैठने से भोजन जल्द पच जाता है।
- अंकुरित अन्न, मौसम के फल और हरी सब्जियों का अधिक से अधिक प्रयोग करना चाहिए। अंकुरित आहार शक्ति का स्रोत प्रदान करते हैं। ये दीर्घायु प्रवर्तक हैं।
- पक्व भोजन में चोकर सहित आटे की रोटी, बिना पॉलिश वाला चावल एवं सूप आदि का सेवन करना चाहिए।
- जो आहार आग पर नहीं पकाया गया हो वह स्वास्थ्य के लिए बड़ा महत्वपूर्ण होता है। पकाने से एन्ज़ाइम, कुछ विटामिन और खनिज नष्ट हो जाते हैं।
- भोजन से आधा घण्टे पहले और कम से कम आधा घण्टे बाद तक पानी नहीं लेना चाहिए।

3. भोजन के समय के संबंध में कहा गया है कि जब मन शान्त हो, मल–मूत्र विसर्जित हो चुके हों, तत्व संतुलित हों, पेट हवा से मुक्त हो, शरीर हल्का हो, ज्ञानेन्द्रियाँ कार्य–कुशल हों और भूख हो केवल तभी भोजन ग्रहण करना चाहिए। भोजन लेने के विषय में एक प्रसिद्ध कहावत है–

   ''एक बार योगी, दो बार भोगी, तीन बार रोगी।''

4. अच्छे स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए एक योगी के लिए यौगिक आहार सर्वाधिक महत्वपूर्ण है। अतः हमारा भोजन केवल स्वाद के लिए नहीं होना चाहिए अपितु उसमें सभी अनिवार्य पोषक तत्व होने चाहिए। साथ ही भोजन शुद्ध एवं सात्विक होना चाहिए।

5. अच्छे स्वास्थ्य के लिए उपवास परम आवश्यक है।

## यूनिटांत प्रश्न

1. उत्तम स्वास्थ्य के लिए यौगिक आहार के महत्व का वर्णन कीजिए।
2. 'योगियों के लिए सात्विक आहार आवश्यक है', इस तथ्य की विवेचना कीजिए।
3. आहार से आप क्या समझते हैं? सात्विक, राजसिक व तामसिक आहार का संक्षेप में वर्णन कीजिए।
4. ऋतु–काल, आयु व समय के अनुसार स्वस्थ्य व्यक्ति के लिए आहार सूची तैयार कीजिए।
5. स्वस्थ रहने में उपवास की भूमिका पर प्रकाश डालिए।

टिप्पणी

# यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

## 6.1

1. भोजन से तात्पर्य ऐसे खाद्य पदार्थों से है जिन्हें हम खाते हैं और जिनसे हमारे शरीर का पोषण होता है।
2. पोषण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा जीव पोषक तत्वों को अंतग्रहण, पाचन तथा उपयोग करता है।
3. कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, वसा, विटामिन, खनिज लवण, रेशा, पानी।
4. क. सही, ख. गलत, ग. सही, घ. सही

## 6.2

1. सरस, स्निग्ध, सारवान और हृदयगाही आहार को सात्विक आहार कहते हैं।
2. तेज मसालेदार आहार, लहसुन
3. तामसिक आहार लेने वाले की प्रवृत्ति असुरक्षा की भावना, अतृप्त इच्छाओं, वासना और भोग की इच्छा से ग्रस्त होती है।

## 6.3

1. iv 2. i, 3. v, 4. ii, 5. iii

## 6.4

क. 1. 80:20 2. सुखासन 3. ताजी हरी सब्ज़ियां, फल

ख. 1. सही 2. सही 3. सही 4. गलत 5. गलत

## 6.5

1. रसोपवास, 2. प्रातः, 3. सांयकालिक, 4. पाचन

5. लंबी अवधि

# 7

# प्राकृतिक स्वच्छता

जीवन तथा स्वास्थ्य को हर प्रकार से संतुलित एवं पूर्ण बनाने के लिए शारीरिक और मानसिक अनुरूपता एवं स्वच्छता अनिवार्य है। स्वास्थ्य का दूसरा अर्थ है स्वच्छता। स्वच्छता जीवन का वह गुण होता है जो मनुष्य को अधिक समय तक जीवित रहने योग्य बनाता है। अतः बचपन से ही खाने–पीने एवं व्यायाम के साथ–साथ आंख, कान, नाक, बाल एवं त्वचा की स्वच्छता पर ध्यान देना चाहिए। शारीरिक स्वास्थ्य एवं स्वच्छता के साथ ही पर्यावरण की स्वच्छता भी महत्वपूर्ण है। इस बात पर भी ध्यान दिया जाना चाहिए कि व्यक्ति का मानसिक एवं भावनात्मक स्वास्थ्य भी अच्छा एवं स्वच्छ रहे क्योंकि तभी व्यक्ति का आध्यात्मिक स्वास्थ्य भी अच्छा रहेगा तथा व्यक्ति देश एवं समाज कल्याण की दिशा में आगे बढ़ सकेगा। इस यूनिट के अंतर्गत हम व्यक्तिगत पर्यावरण तथा खान–पान की स्वच्छता का सही अर्थ जानेंगे जिससे कि सफाई की अच्छी आदतों एवं स्वस्थ जीवन द्वारा पूर्ण स्वास्थ्य की प्राप्ति हो सके।

## उद्देश्य

इस यूनिट का अध्ययन करने के पश्चात् आप :

- स्वास्थ्य का अर्थ समझा सकेंगे;
- पर्यावरण की स्वच्छता तथा खान–पान में स्वच्छता कायम करने के सही तरीकों का वर्णन कर सकेंगे;
- व्यक्तिगत स्वच्छता, पर्यावरण की स्वच्छता और खान–पान की स्वच्छता के लिए आवश्यक और अच्छी आदतों पर प्रकाश डाल सकेंगे।

टिप्पणी

## 7.1 स्वास्थ्य

स्वास्थ्य का अभिप्राय केवल इतना ही नहीं कि हम शारीरिक एवं मानसिक पीड़ा से मुक्त रहें या हमें कोई रोग न हो बल्कि रोगमुक्ति के साथ—साथ हमारे अंदर उत्साह एवं स्फूर्ति का स्रोत निरंतर बहता रहना चाहिए। हमारी जीवनी शक्ति इतनी सशक्त हो कि वह निरंतर संतुलित कार्य संपादन करती रहे। इसके अतिरिक्त हमारे अंदर दृढ़ता, आत्मनिर्भरता, सहजबुद्धि, स्वयं निर्णय लेने की शक्ति, चेतना शक्ति, धारणा शक्ति और जीवन का कोई निश्चित उद्देश्य होना भी अनिवार्य है। हमारा जीवन दुःखी एवं चिंतामय न हो अर्थात् यदि कोई व्यक्ति शारीरिक रूप से स्वस्थ हो या रोग मुक्त हो परन्तु दुःख, चिंता अथवा तनाव से घिरा रहे तो हम उसे पूर्ण रूप से स्वस्थ नहीं कह सकते।

स्वास्थ्य का सच्चा अर्थ तो यह है कि हम शारीरिक, मानसिक, आध्यात्मिक एवं सामाजिक स्तर पर स्वस्थ हों। हमारे जीवन के क्षण—क्षण में, हमारे अंदर उत्साह एवं आशा का स्रोत निरंतर झरता रहे। इसके लिए हमारे अंदर धैर्य, दृढ़ता, साहस एवं आत्मबल आदि गुणों का होना अनिवार्य है। पिछली यूनिट—सम्यक स्वास्थ्य में हम विश्व स्वास्थ्य संगठन (W.H.O) द्वारा दी गई स्वास्थ्य की परिभाषा पढ़ चुके हैं।

इसके साथ—साथ आप यह भी पढ़ चुके हैं कि, स्वास्थ्य के लिए आकाश, शुद्ध वायु, जल, मिट्टी, व्यायाम, श्वास, परोपकारिता एवं सांस्कृतिक संतुलन होना भी आवश्यक है। इसके बिना स्वस्थ एवं सुखी जीवन प्राप्त करना कठिन ही नहीं असंभव है। इसके अतिरिक्त हमारा आहार—विहार भी सात्विक एवं प्राकृतिक होना चाहिए। जैसा कि कहा गया है —

*युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।*

*युक्त स्वप्नावबोधस्य योगी भवति दुःखहा।।*

*गीता 6—17*

अर्थात्

यथायोग्य आहार—विहार करने वाले का, कर्मों में यथा योग्य चेष्टा करने वाले का और यथा योग्य शयन करने और जागने वाले का योग दुःखनाशक होता है।

सभी रोगों का मूल कारण एक ही है — शरीर में तथा आप के आस—पास के वातावरण में विजातीय पदार्थों का संग्रह। इससे ही रोग उत्पन्न होते हैं। रोग का मुख्य कारण कीटाणु नहीं हैं बल्कि कीटाणु तो आपके गंदे एवं आसपास के दूषित वातावरण के कारण, तथा शरीर में जीवनी शक्ति के ह्रास के कारण विजातीय पदार्थों के जमाव के पश्चात् तब आक्रमण करते हैं जब शरीर में उनके रहने और पनपने लायक अनुकूल वातावरण तैयार हो जाता है।

इसके विपरीत दूषित वातावरण तथा अप्राकृतिक आहार—विहार रोग का एक मुख्य कारण है। हमारे शरीर के अंदर विजातीय द्रव्य घातक या अधिक मात्रा में पहुंच जाने पर अनेक रोग

टिप्पणी

उत्पन्न होते हैं जैसे ज्वर, हैजा, खुजली, प्लेग आदि। सभी रोगों का मूल कारण शरीर एवं घर के आस–पास के वातावरण में दूषित मल का संचित हो जाना ही है। अतः शरीर के साथ–साथ आपके चारों ओर का वातावरण भी स्वच्छ एवं स्वस्थ होना चाहिए। तो आइए, अब हम उत्तम स्वास्थ्य के एक और पहलू की ओर ध्यान दें वो है स्वच्छता।

## 7.2 स्वच्छता

स्वच्छता, उचित आहार–विहार, व्यायाम, कार्य निष्ठा आदि स्वास्थ्य के आवश्यक सूत्र हैं। एक स्वस्थ व्यक्ति ही समाज तथा देश के विकास में सहायक होता है। अतः प्रत्येक व्यक्ति को अपने स्वास्थ्य को अच्छा बनाये रखने का प्रयास स्वयं करना चाहिए। इसके लिए शारीरिक स्वच्छता, व्यायाम, शौच, भोजन एवं उपवास, ध्यान, समुचित निद्रा जैसी आवश्यक चीजों पर विशेष ध्यान देने से जीवन पर्यन्त स्वस्थ एवं सुखी रहा जा सकता है।

स्वच्छता, स्वास्थ्य को कायम रखने और सुधारने की कला एवं विज्ञान है। स्वच्छता का मुख्य उद्देश्य है व्यक्ति का पर्यावरण के साथ स्वस्थ संबंध बनाए रखना।

### 7.2.1 व्यक्तिगत स्वच्छता

व्यक्तिगत स्वच्छता का अर्थ है अपने शरीर को साफ रखना। व्यक्तिगत स्वच्छता के अभाव में अनेक रोग जन्म लेते हैं क्योंकि कीटाणु गंदगी में ही पनपते हैं। अतः शरीर को स्वस्थ बनाये रखने के लिए त्वचा, आंख, दांत, नाक, कान, नाखून, बाल आदि अंगों की स्वच्छता पर विशेष ध्यान देना चाहिए।

व्यक्तिगत स्वच्छता से अभिप्राय केवल बाहरी त्वचा या शरीर के बाहर की स्वच्छता नहीं है, परन्तु शरीर की भीतरी सफाई भी उतनी ही महत्वपूर्ण है। व्यक्तिगत स्वच्छता के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है –

1. शरीर को स्वस्थ एवं साफ रखने के लिए प्रातःकालीन जल्दी उठना, संक्रमण दूर करने के लिए साबुन का प्रयोग, खाने से पहले तथा शौच के बाद हाथ धोना आवश्यक है।

2. पोषक, संतुलित एवं सुपाच्य भोजन, जिसमें धूल, मिट्टी और कीटाणु न हों तथा अधिक से अधिक हरी सब्जियां, ताजे फलों का सेवन आंतरिक तंत्र को स्वस्थ रखता है। फलों के सेवन से पहले इस बात का ध्यान रखें कि वो अधिक समय तक काट कर न रखें गए हों/वो पहले से ही कटे हुए न हों।

3. श्रम और विश्राम में संतुलन बनाये रखें। नियमित व्यायाम शारीरिक स्वास्थ्य के साथ–साथ मानसिक शांति भी प्रदान करता है। साथ ही निष्कासन क्रिया को भी सक्रिय करता है।

4. नियमित हल्के व्यायाम से शरीर का वजन नियंत्रित रहता है, भूख अच्छी लगती है और मन भी सकारात्मक ढंग से क्रियाशील रहता है।

टिप्पणी

5. बहुत से लोग अपने आप को स्वस्थ समझते हैं जबकि उनकी शौच क्रिया पूर्ण रुप से संतोषजनक नहीं होती। परिणाम स्वरूप गैस, कब्ज, आलस्य, बेचैनी, चर्मरोग, मुंह से बदबू आना आदि कई प्रकार के रोग हो जाते हैं। कब्ज को इसलिए सभी रोगों की जननी माना गया है। अतः प्रतिदिन प्रातःकाल शौच करना चाहिए और इसके लिए तेज औषधियों का इस्तेमाल नहीं करना चाहिए। शौच की शंका होने पर रोकें नहीं।

शरीर को स्वस्थ बनाये रखने के लिए निम्न अंगों की स्वच्छता पर विशेष ध्यान देना चाहिए—

1. **त्वचा** — त्वचा की स्वच्छता बहुत आवश्यक है क्योंकि पसीना और अन्य दूषित पदार्थ त्वचा के माध्यम से ही शरीर से बाहर निकलते हैं। यदि त्वचा की सफाई पर उचित ध्यान नहीं दिया जाता तो धूल, कीटाणु, गंदगी आदि की त्वचा पर एक परत जम जाती है जिनके कारण त्वचा से दुर्गंध आने लगती है और दाद—खाज, फोड़े—फुंसी आदि हो जाते हैं। त्वचा की सफाई के लिए निम्नलिखित बातों पर ध्यान देना चाहिए—

   - प्रतिदिन साफ पानी से स्नान करना चाहिए;
   - त्वचा के छिद्रों को खुला रखने के लिए, स्नान से पहले सूखे तौलिये से सारे शरीर की सूखी मालिश (सूखा घर्षण) करना अच्छा होता है;
   - अधिक से अधिक सूती वस्त्रों का प्रयोग करना चाहिए। कपड़े साफ—सुथरे, ढीले और सूखे होने चाहिए। अंदर के कपड़ों की सफाई पर भी विशेष ध्यान देना चाहिए ताकि संक्रमण से बचाव हो सके;
   - भोजन में साग—सब्जी, सलाद, ताजे फलों का अधिक प्रयोग करना चाहिए और गरिष्ठ एवं तैलीय पदार्थों जैसे समोसा, कचौड़ी आदि का कम से कम सेवन करना चाहिए।

2. नाखून

   यदि समय — समय पर नाखूनों को न काटा जाए तो उनमें गंदगी और कीटाणु भर जाते हैं जो स्वास्थ्य के लिए खतरा हैं। नाखून की स्वच्छता के लिए निम्न बातों पर ध्यान दें —

   - समय पर नाखून अवश्य काटें;
   - नित्य उनकी सफाई करते रहें;
   - नाखून को दांतों से न काटें और मुंह में न डालें;
   - हाथ धोते समय नाखून की सफाई पर भी ध्यान दें।

3. बाल

   बालों को यदि सही ढंग से साफ न रखा जाए तो सिर में जूँ तथा बहुत सी बीमारियाँ पैदा हो सकती हैं। इनसे बचने के लिए निम्न बातों पर ध्यान दें —

टिप्पणी

- बालों को नियमित धोयें और सप्ताह में कम से कम दो बार शैम्पू का प्रयोग करें;
- बच्चों के बाल प्रायः जल्दी गंदे हो जाते हैं और उनमें जूँ आदि भी जल्दी हो जाती है इसलिए उनके बाल प्रतिदिन धोयें और साफ रखें;
- बालों में रोज़ अच्छी तरह कंघी करें जिससे गंदगी बाहर निकल जाए और बाल उलझें भी नहीं;
- बालों में समय—समय पर तेल लगाते रहें।

### 4. आंखें

आंखें प्रकृति की अनमोल देन है लेकिन उचित देखभाल न करने के कारण कई लोगों को नेत्रहीनता का शिकार होना पड़ता है या फिर चश्मे का प्रयोग करना पड़ता है। इस महत्वपूर्ण अंग की सही देखभाल के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना चाहिए—

- आंखों को प्रतिदिन ठंडे पानी से 3—4 बार अवश्य धोएं;
- आंखों को धोने के लिए पहले मुंह में पानी भर लें, फिर आंखों में 6—7 बार छपाके मारें और बाद में मुंह का पानी बाहर फेंक दें;
- किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा इस्तेमाल किए गए रुमाल, चश्मा, सूरमे की सलाई आदि का प्रयोग कभी नहीं करना चाहिए;
- स्वयं का गंदा रुमाल या कोई दूसरा कपड़ा तथा गंदे हाथ आंखों में नहीं लगाना चाहिए;
- पढ़ते व लिखते समय, आंखों और पुस्तक के बीच कम से कम 32 सेंटीमीटर का अंतर होना चाहिए और रोशनी बाईं तरफ से अपनी चाहिए;
- लेटकर कभी नहीं पढ़ना चाहिए।

### 5. दांत

दांत भोजन को काटने, चबाने और शब्दों के सही उच्चारण में सहयोग देते हैं। यदि दांतों की सही ढंग से सफाई नहीं की जाए तो भोजन के छोटे कण इनमें फंस जाते हैं और सड़न पैदा करते हैं, जिससे दूसरे कई रोग जैसे पायरिया,दांतों में कीटाणु, मुंह से बदबू आना आदि हो जाते हैं। स्वस्थ एवं सुंदर दांतों के लिए निम्न बातों का ध्यान रखना चाहिए —

- प्रातः शौच करने के बाद तथा रात में सोने से पहले दांतों को ब्रुश या दातुन से अच्छी तरह साफ करना चाहिए;
- दांत साफ करने के लिए सही ब्रुश का चयन करें और हर तीन महीने के बाद ब्रुश को बदल लेना अच्छा होता है;

टिप्पणी

- सही दिशा में दांतों को साफ करें (जैसे ऊपर–नीचे) ताकि दांतों और मसूड़ों के बीच जमे खाने के कण एवं परत सही ढंग से और पूर्ण रुप से साफ हो जाए;
- दांत साफ करने के लिए उचित समय दें (कम से कम 30 सेकेंड से 1 मिनट)
- खाना खाने के बाद पानी से कुल्ला अवश्य करें। ठंडी व गर्म दोनों प्रकार की वस्तुओं का एक साथ प्रयोग न करें। गर्म पेय पदार्थ जैसे चाय, काफी, दूध या फिर ठंडे पदार्थ लेने के तुरंत बाद कुल्ला न करें।

6. कान

साफ सुनने तथा शरीर में संतुलन बनाये रखने के लिए कानों की स्वच्छता और देख–रेख आवश्यक है, इसके लिए निम्न बातों का ध्यान रखें–

- कान में किसी प्रकार की नुकीली वस्तु जैसे पेन, पेंसिल, लकड़ी या दियासलाई आदि का प्रयोग कभी न करें। जब बहुत आवश्यक हो तो रुई की फुरहरी (ear bud) से कानों के बाहर अच्छी तरह सफाई करें, ज्यादा अंदर तक न डालें;
- तीव्र शोरगुल और तेज संगीत से बचें;
- कानों में तेल तथा अन्य ऐसी चीज़ न डालें, इससे फंगल इन्फेक्शन होने का खतरा होता है;
- नहाने के बाद साफ एवं मुलायम कपड़े से कानों को बाहर से साफ कर लें;
- तीव्र सर्दी में कानों को ढक कर रखें।

7. नाक

नाक की स्वच्छता भी अति आवश्यक है क्योंकि वातावरण में जो धूल के कण होते हैं, सांस के साथ अंदर जाते हैं और नाक में उपस्थित बालों एवं श्लेष्मा द्वारा रोक लिए जाते हैं। नाक की स्वच्छता के लिए निम्न बातों का ध्यान रखें –

- प्रातःकाल नाक को पानी से अच्छी तरह से साफ करें;
- नाक में अंगुली या लकड़ी आदि नहीं डालें, आवश्यकता पड़ने पर साफ रुमाल का प्रयोग करें।

## यूनिटगत प्रश्न 7.1

1. व्यक्तिगत स्वच्छता का क्या अर्थ है?

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

टिप्पणी

2. व्यक्तिगत स्वच्छता के लिए आवश्यक कोई चार बातों का उल्लेख कीजिए।

3. व्यक्तिगत स्वच्छता में आंतरिक सफाई का क्या महत्व है?

4. आंखों की देखभाल के कोई दो मुख्य उपाय बताइए।

---

## 7.2.2 पर्यावरण स्वच्छता

व्यक्ति जिस वातावरण में रहता है, उसका प्रभाव उसके स्वास्थ्य पर भी पड़ता है। चाहे वह घर के अंदर का वातावरण हो या फिर बाहर का। अतः स्वस्थ रहने के लिए पर्यावरण तथा समुदाय की स्वच्छता भी बहुत आवश्यक है। यदि हम प्रकृति के नियमों का पालन करें और साफ–सुथरे, स्वच्छ वातावरण में रहें तो कई भयंकर बीमारियों जैसे मलेरिया, फाइलेरिया, चेचक, हैजा, टी.बी(यक्ष्मा रोग) आदि से बच सकते हैं। क्योंकि वातावरण और घर के आस–पास कूड़ा करकट और गंदा पानी जमा होने से इन रोगों के कीटाणु, मच्छर, मक्खी पनपते हैं और रोग फैलाते हैं।

इन सब से बचने और पर्यावरण की स्वच्छता बनाए रखने के लिए निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है –

- मल–मूत्र विसर्जन के लिए उपयुक्त शौचालयों का निर्माण करें और उनका सही इस्तेमाल करें;
- यदि यह संभव न हो तो आबादी से दूर किसी निश्चित स्थल पर मल–त्याग करें;
- मल–त्याग के पश्चात् उस जगह को मिट्टी से ढक दें;
- शौचालय की नियमित सफाई करें तथा उसे ढक कर एवं साफ–सुथरा रखें;
- बच्चों के मल में भी संक्रमण फैलाने वाले कीटाणु पाए जाते हैं अतः उसे भी तुरंत साफ करना चाहिए;
- जानवरों के मल /गोबर को भी घरों एवं पानी के स्रोतों से दूर रखा जाना चाहिए;
- गोबर का इस्तेमाल गैस प्लांट या खाद बनाने अथवा उपले बनाने के लिए, किसी निश्चित स्थान पर किया जाना चाहिए;

- शौच के बाद हाथों को अच्छी तरह साबुन से धोना चाहिए (बच्चों का मल साफ करने के बाद भी);
- गांवों में यदि साबुन की सुविधा न हो तो 'राख' से भी हाथ साफ किया जा सकता है किन्तु मिट्टी से नहीं क्योंकि मिट्टी में भी कीटाणु होते हैं;
- छोटे बच्चों के हाथ तथा मुंह जितनी बार गंदे हों, बार–बार पानी से अच्छी तरह से धोना चाहिए ताकि मक्खी, मच्छर उनके मुंह, आंखों या त्वचा के समीप न आयें और संक्रमण न फैला सकें;
- इसके अलावा आपके रहने का स्थान भी खुला हवादार एवं शांत होना चाहिए जिसे आपको ताजी हवा और प्राकृतिक सूर्य रश्मि(रोशनी) मिल सके। बंद, अंधेरे घरों में ज्यादा देर तक रहने से भी कई रोग यहां तक कि कैंसर होने का खतरा होता है।

## यूनिटगत प्रश्न 7.2

1. **रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए:**
   1. मल–मूत्र के विसर्जन के लिए उपयुक्त ................................ का निर्माण करें।
   2. जानवरों का मल/गोबर घरों एवं पानी के स्रोतों से .....................रखा जाना चाहिए।
   3. गोबर का इस्तेमाल .................................... या .......................बनाने के लिए किया जा सकता है।
   4. यदि साबुन की सुविधा न हो तो हाथ धोने के लिए ............................... का प्रयोग किया जा सकता है।
   5. आपके रहने का स्थान खुला एवं ............................................ होना चाहिए।

## 7.3 खान-पान की स्वच्छता

अच्छे स्वास्थ्य के लिए खान–पान की स्वच्छता भी अति आवश्यक है। यदि खान–पान की चीज़ें खरीदने, बनाने, खाने और रखने में स्वच्छता के मूलभूत नियमों पर ध्यान न रखा जाए तो उसके दुष्परिणाम बहुत भयंकर हो सकते हैं।

अतः खान–पान की स्वच्छता के लिए निम्नलिखित तरीकों को अपनाना अति आवश्यक है –

### 7.3.1 स्वच्छ/साफ रसोईघर

कीटाणुओं को बढ़ने के लिए भोजन, उष्णता, नमी और समय चाहिए इसलिए रसोई घर बिल्कुल साफ–सुथरा एवं सूखा रहना चाहिए;

टिप्पणी

- खाना हमेशा ढक कर रखें;
- खाने के अवशेष इधर–उधर न बिखरे रहें, उन्हें साथ–साथ पोंछ देना चाहिए;
- कूड़ेदान को नित्य खाली करते रहें और रसोई में कूड़ा जमा न होने दें;
- पालतू जानवरों को खाने व रसोईघर से दूर रखें।

## 7.3.2 स्वच्छ भोजन

खाना बनाते समय भी सावधानी बरतें –

- भोजन के संपर्क में आने से पहले हाथ अच्छी तरह से धो लें;
- खांसते, छिंकते या नाक साफ करते समय रुमाल या कोई साफ कपड़े का प्रयोग करें, ताकि कीटाणु खाने में न चले जाएं और पुनः हाथ धोयें;
- पकाने से पहले सब्जियों, विशेषकर पत्तेदार सब्जियों को अच्छी तरह धो लें क्योंकि उनमें लगी मिट्टी या गंदगी में रोग उत्पन्न करने वाले कीटाणु हो सकते हैं;
- कच्ची चीजें काटने से पहले तथा बाद में चाकू को अच्छी तरह से धो लें;
- नियमित समय पर फ्रिज को भी अंदर – बाहर से साफ करते रहना चाहिए। इसके लिए फ्रिज में रखा सब सामान तथा शैल्फ बाहर निकाल कर साबुन के गर्म पानी से फ्रिज को अंदर से अच्छी तरह साफ करें। सोडा बाईकार्बोनेट का घोल एक अच्छा शोधक है और इससे फ्रिज में गंध भी नहीं आती।

## 7.3.3 स्वच्छ पानी

स्वास्थ्य कायम रखने के लिए स्वच्छ एवं निर्मल पानी भी आवश्यक है। यह शरीर के सभी कार्य तथा आंतरिक सफाई के लिए बहुत उपयोगी है। कई बीमारियां गंदे तथा दूषित पानी से उत्पन्न होती हैं। अतः खाना बनाने तथा पीने के लिए बिल्कुल साफ पानी का प्रयोग करना चाहिए। पानी के कीटाणुओं को मारने तथा शुद्ध करने के लिए, पानी को कम से कम 5 मिनट उबालें, फिर ठंडा करके साफ बोतल में भर लें। इस तरह का साफ एवं शुद्ध पानी विशेषकर बच्चों के स्वास्थ्य के लिए बहुत महतवपूर्ण है क्योंकि बच्चों में रोग प्रतिरोधक शक्ति इतनी उन्नत नहीं होती।

जहां साफ पानी की उचित व्यवस्था नहीं है और पानी तालाब या कुंए से लाना पड़ता है, वहां भी स्वच्छता का पूरा ध्यान रखना चाहिए। कुंए की, संक्रामक दोष से शुद्धि आवश्यक है। इसके लिए 'क्लोरीन' दवा की टिकिया का प्रयोग करना चाहिए। 10 लीटर पानी में, क्लोरीन की एक टिकिया को तोड़कर डाल दें। यह पानी आधा घंटे के बाद ही उपयोग में लाया जा सकता है। ध्यान रखें कि इस पानी का प्रयोग 24 घंटे के अंदर कर लें। 24 घंटे बाद वह पानी फेंक दें और पुनः शुद्ध पानी तैयार करें।

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 7.3

**सही (√) अथवा गलत (×)बताएं**

क. रसोईघर में रोग के कीटाणु नहीं पनपते। ( )

ख. खांसते, छिंकते या नाक साफ करने के लिए हाथों का इस्तेमाल करें। ( )

ग. खाने की स्वच्छता के लिए फ्रिज को भी नियमित समय पर अंदर–बाहर से साफ करते रहना चाहिए। ( )

घ. पानी के कीटाणुओं को मारने के लिए पानी को कम से कम पांच मिनट उबालना चाहिए। ( )

ड. कुंए के पानी की स्वच्छता के लिए 'क्लोरीन' टेबलेट का प्रयोग करना चाहिए। ( )

## 7.4 मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक स्वच्छता

अभी तक आपने शारीरिक स्वच्छता के बारे में जानकारी प्राप्त की अब हम पूर्ण स्वच्छता का एक और पहलू देखेंगे और वो है –मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक स्वच्छता अर्थात् शरीर की सफाई के साथ–साथ आपके मन तथा विचारों की स्वच्छता भी अत्यंत आवश्यक है।

बीमारी का न होना या कमजोर न होना ही पूर्ण स्वास्थ्य नहीं है बल्कि शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक और आध्यात्मिक स्वास्थ्य तथा सामाजिक कल्याण की दशा पूर्ण स्वास्थ्य कहलाता है।

चिंता, कुंठा, तनाव आदि से रहित अवस्था मानसिक स्वच्छता कहलाती है। अपने वचन या वाणी से किसी को दुख एवं हानि नहीं पहुंचाना, अप्रिय और अवांछनीय शब्दों का प्रयोग नहीं करना तथा सकारात्मक दृष्टि से सोचना, मन एवं मस्तिष्क को स्वच्छ रखने के लिए आवश्यक हैं।

क्रोध, लोभ, अहंकार, घृणा आदि से रहित संतुलित अवस्था भावनात्मक स्वच्छता कहलाती है।

भारतीय संस्कृति में नम्रता, शिष्टाचार तथा आदर सत्कार का विशेष महत्व है। अतः भावनात्मक स्वच्छता के लिए बड़ों के प्रति शिष्टाचार एवं आदर के साथ–साथ छोटों पर वात्सल्य भाव और समकक्ष लोगों से अच्छा व्यवहार तथा मैत्रीपूर्ण भाव रखना आवश्यक है।

समता से अपने आप में रहना आध्यात्मिक स्वास्थ्य है। अपने धर्म की आस्था रखते हुए दूसरे धर्म को भी समभाव दृष्टि से देखना, सृष्टि की समस्त रचनाओं जैसे पेड़–पौधे, जीव–जन्तु, आकाश, पृथ्वी एवं जल आदि को स्वच्छ रखते हुए पर्यावरण संतुलन बनाये रखना, आध्यात्मिक स्वच्छता है।

अतः पूर्ण स्वच्छता तभी प्राप्त हो सकती है जब प्रत्येक व्यक्ति, परिवार, समाज एवं राष्ट्र स्वच्छता के उपर्युक्त नियमों एवं सूत्रों का पालन करें।

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट के अंतर्गत आपने पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त करने के लिए स्वच्छता के महत्व को जाना। साथ ही स्वच्छता के विभिन्न पहलुओं जैसे—व्यक्तिगत स्वच्छता, भोजन की स्वच्छता तथा पर्यावरण की स्वच्छता पर भी चर्चा की। आपने पूर्ण स्वच्छता के लिए मानसिक, भावनात्मक एवं आध्यात्मिक स्वच्छता के महत्व को भी जाना।

शारीरिक स्वच्छता के साथ—साथ मन तथा विचारों की स्वच्छता भी अत्यंत आवश्यक है।

अतः अब आप जान चुके हैं कि स्वच्छता के सभी पहलुओं को ध्यान में रखते हुए, स्वास्थ्य के नियमों का पालन करके पूर्ण स्वास्थ्य प्राप्त किया जा सकता है तथा कई भयंकर बीमारियों से बचा जा सकता है।

## यूनिटांत प्रश्न

1. पर्यावरण की स्वच्छता का विस्तार से वर्णन कीजिए।
2. व्यक्तिगत स्वच्छता एवं पर्यावरण स्वच्छता की महत्वता एवं उपयोगिता पर प्रकाश डालिए।
3. मानसिक, भावनात्मक एवं आध्यात्मिक स्वच्छता पर अपने विचार प्रकट कीजिए।

## यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

### 7.1

1. शरीर की सफाई रखना
2. 
   - खाने से पहले हाथ धोना
   - शौच के बाद साबुन से हाथ धोना
   - संतुलित एवं पोषक आहार
   - व्यायाम

टिप्पणी

3. आंतरिक सफाई न होने पर कई रोग जैसे गैस, कब्ज, एसिडिटी, बेचैनी, मुंह से बदबू आना आदि हो सकते हैं।

4. • प्रतिदिन ठंडे पानी से 3—4 बार धोएं
   • गंदे हाथ या रुमाल आंख में न लगाएं

## 7.2

1. शौचालय
2. दूर
3. गैस प्लांट, उपले
4. राख
5. हवादार

## 7.3

क. गलत

ख. गलत

ग. सही

घ. सही

ङ. सही

टिप्पणी

# 8

# आकाश तत्व चिकित्सा

जैसा कि हम पिछली यूनिटों में पढ़ चुके हैं कि प्राकृतिक तत्व जैसे– आकाश, वायु, अग्नि, जल व पृथ्वी, यदि हमारे शरीर में संतुलित रहते हैं, तभी हम पूर्ण रूप से स्वस्थ रह सकते हैं। मानव शरीर का निर्माण प्रकृति के सर्वोत्कृष्ट प्रयासों का फल है और इसे पूर्ण स्वस्थ रखना, हमारा परम कर्त्तव्य है। यह तभी संभव है जब इन महत्वपूर्ण तत्वों की जानकारी हो और उनकी प्राप्ति के साधनों का समुचित ज्ञान हो। इसी तथ्य को ध्यान में रखते हुए हम इस यूनिट में प्रथम तत्व, आकाश के बारे में अध्ययन करेंगे, जिसे शून्य तत्व भी कहा जाता है। यह शरीर में उपस्थित रिक्त स्थान है, जो आकाश तत्व का द्योतक है।

## उद्देश्य

इस यूनिट का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- आकाश तत्व की अवधारणा समझा सकेंगे;
- आकाश तत्व की प्राप्ति के साधन बता सकेंगे;
- उपवास के सही अर्थ, उसकी विधियों और महत्वता पर प्रकाश डाल सकेंगे।

## 8.1 आकाश तत्व अवधारणा एवं महत्व

आकाश तत्व को समझने से पहले हमें पंचतत्व को समझना आवश्यक है। आइए सबसे पहले यहाँ पंचतत्वों को समझने का प्रयास करें–

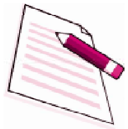

टिप्पणी

**पंच तत्व क्या हैं? पंचतत्व अर्थात् पाँच तत्व, जो हमारे शरीर में उपस्थित हैं।**

वास्तव में हमारा शरीर पंचमहाभूत इन्द्रिय,मन और आत्मा के संयोग से निर्मित है।

**क्षितिजल पावक गगन समीरा**

**पंचतत्व मिलि बना सरीरा ।**

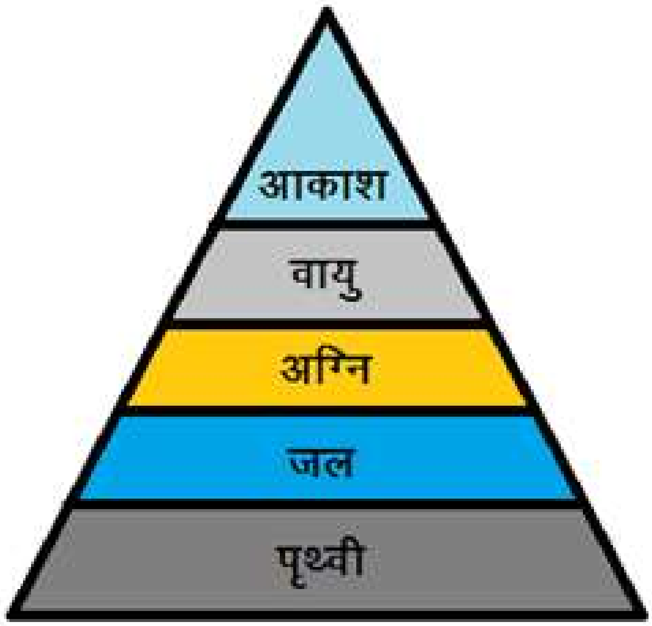


चित्र 8.1

पंचमहाभूतों (आकाश, वायु, सूर्य, जल और पृथ्वी) से निर्मित इस शरीर में जब तक प्राण होते हैं, यह जीवित दिखता है और प्राणहीन होते ही यह शव में बदल जाता है और शव फिर से इन प्रकृति के तत्वों में विलीन हो जाता है।

आकाश से वायु, वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथ्वी की उत्तरोतर उत्पत्ति हुई है।

**आकाश तत्व क्या है ?**

आकाश तत्व पंचतत्वों में सबसे अधिक उपयोगी व प्रधान तत्व है। इसे आकाश व शून्य भी कहते हैं।

जिस प्रकार ईश्वर निराकार असीम, अविनाशी, निर्विकार व विशुध्द होता है, उसी प्रकार आकाश तत्व में भी उपरोक्त सभी गुण विद्यमान रहते हैं।

**आकाश का अर्थ :—**

आकाश का शाब्दिक अर्थ खाली जगह अर्थात् अवकाश देने वाला है। आकाश में देवताओं का वास माना गया है। जहाँ खाली स्थान होता है, वहाँ वायु उपस्थित होती है। जिस प्रकार जलीय प्राणी जल में रहते हैं, उसी प्रकार मनुष्य भी पृथ्वी पर रहते हुए आकाशमयी में

टिप्पणी

जीवन–यापन करता है। आकाश तत्व के अभाव में मानव जीवन, जीव जन्तु की कल्पना करना कठिन है। यदि आकाश तत्व नहीं है, तब प्राणी की गति भी असंभव है।

ठोस जगह में गति हो ही नहीं सकती। जिस प्रकार आकाश में देवता वास करते हैं और वे अमर कहलाते हैं,उसी प्रकार हम भी आकाश तत्व का सेवन कर स्वयं को दीर्घायु व रोगमुक्त तो रख ही सकते हैं।

जिस प्रकार हमारे बाहर सर्वत्र आकाश है, उसी प्रकार हमारे शरीर के भीतर भी आकाश है। हमारा शरीर असंख्य कोशिकाओं से निर्मित है। इन कोशिकाओं को जीवित रहने के लिए पोषक तत्व, जल, प्राणवायु, आदि की आवश्यकता होती है, जो इन्हें रक्त संचार के द्वारा प्राप्त होता है।

शरीर में रक्त व वायु का संचार खाली स्थान (आकाश) रूपी नलिकाओं व वाहिकाओं द्वारा होता है। इस प्रकार ईश्वर ने शरीर में खाली जगह के रूप में आकाश का निर्माण किया है। आकाश तत्व शेष महाभूतों (तत्वों) का आधार है।

आकाश महाभूत के अभाव में हमारी स्थिति व अस्तित्व असंभव है। अतः उपरोक्त बातों को समझने पर हमें यह ज्ञात होता है कि बिना आकाश तत्व के प्राणीमात्र जीवित नहीं रह सकता। आकाश ब्रह्माण्ड का आधार है।

**यथा पिंडे तथा ब्रह्माण्डे–** अर्थात् प्रत्येक वस्तु जिन तत्वों से निर्मित है, यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड भी उन्हीं तत्वों से निर्मित है। अतः जिन तत्वों से शरीर निर्मित है, उन्हीं तत्वों से इस ब्रह्माण्ड का भी निर्माण हुआ है। पिंड ब्रह्माण्ड का ही एक अंश है।

अब हम यह जानेंगे कि आकाश तत्व को कैसे प्राप्त किया जा सकता है ?

**आकाश तत्व प्राप्ति के साधन :–**

आकाश तत्व की प्राप्ति कहाँ–कहाँ से हो सकती है ?

आकाश तत्व की प्राप्ति के स्थान क्या हैं ?

1. उपवास व मिताहार से (अल्पमात्रा में भोजन करने से)
2. खुले आकाश के नीचे सोने से
3. ढीले व आरामदायक वस्त्रधारण करने से
4. निर्वात से
5. ब्रह्मचर्य व संयम से
6. उज्ज्वल चरित्र से
7. मानसिक अनुशासन से

टिप्पणी

8. समुचित निद्रा व आराम से
9. संयम से
10. मनोरंजन व उत्सव से
11. प्रसन्न चित्त रहने से

आकाश तत्व की उपस्थिति जिस प्रकार सर्वत्र है, उसी प्रकार हमारे शरीर में भी है। हमारी त्वचा में अनगिनत छिद्र हैं, जिनके द्वारा पसीना व विषैले तत्वों का उत्सर्जन होता है। त्वचा के द्वारा ही श्वसन क्रिया भी होती है यदि आकाश तत्व न हो तो भोजन, रक्त, विभिन्न प्रकार के आवश्यक स्राव आदि का एक स्थान से दूसरे स्थान पहुँचना व मल–मूत्र, पसीना आदि का शरीर से बाहर निकलना कठिन होगा।

**अब हम आकाश तत्व के मुख्य कार्यों पर प्रकाश डालेंगेः**

**आकाश तत्व के कार्य –**

- मानसिक विकार जैसे शोक, काम, क्रोध, मोह एवं भय आदि से मन को मुक्त करना।

**आकाश तत्व का शरीर में विशेष स्थान–**

आकाश तत्व– सिर, कंठ, हृदय, उदर व कटिप्रदेश में रहता है।

हृदय देश में स्थित आकाश अन्न का पाचन करता है। मस्तिष्क में स्थित आकाश प्राण का मुख्य स्थान है। उदर प्रदेश में स्थित आकाश मल विसर्जन का कार्य करता है। कटि अर्थात् कमर में स्थित आकाश गन्ध का आश्रय होता है।

अतः उपरोक्त बिन्दुओं से यह निष्कर्ष निकलता है कि आकाश तत्व पंचमहाभूतों का अधिपति (राजा) है। जिस प्रकार एक योगी आत्मा के स्वरूप को जानने के लिए तत्पर रहता है, उसी प्रकार हमें आकाश तत्व के बारे में ज्ञान होना चाहिए। ज्ञान होने पर ही हम उस तत्व को समझ कर आरोग्य की प्राप्ति व पर्यावरण को शुद्ध रखने के लिये प्रयत्न कर सकते हैं।

सांसारिक वस्तुओं को त्यागकर यदि हम इस महान तत्व को जानकर प्राकृतिक चीजों का उपयुक्त रीति से अनुसरण करेंगे तब निश्चय ही हम सुखी व निरोगी काया पा सकेगें। अपने घर में अनावश्यक चीजों का त्याग करने पर आकाश तत्व की प्राप्ति हो सकती है। उस अनन्त से कैसे संबंध बनायें। सिर्फ आधारभूत वस्तुओं का उपयोग करते हुए निश्चित खाली स्थान रखते हुए आकाश तत्व का उपयोग किया जा सकता है। इस प्रकार अभ्यास से भौतिक वस्तुओं के अभाव में भी सब कुछ प्राप्त होगा। इस प्रकार आकाश तत्व से संबंध स्थापित होगा और शरीर बुद्धि और चित्त की शुद्धि होगी व व्यक्ति पूर्णरूप से स्वस्थ होगा।

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 8.1

1. क्रम से पंचतत्वों की उत्पत्ति लिखिये ? (एक वाक्य में)

   ..........................................................................................................................................

   ..........................................................................................................................................

   ..........................................................................................................................................

2. पंचतत्वों में प्रथम तत्व है :—

   अ. वायु

   ब. आकाश

   स. जल

   द. अग्नि

3. आकाश तत्व है :

   अ. सूर्य की ऊष्मा

   ब. आर्द्रता या नमी

   स. ठंडी वायु का स्पर्श

   द. रिक्त स्थान

4. जोड़ी मिलाइये—

| | |
|---|---|
| अ) पृथ्वी | 1. रस |
| ब) जल | 2. गंध |
| स) वायु | 3. शब्द |
| द) आकाश | 4. स्पर्श |

## 8.2 प्राप्ति के साधन

अब हम आकाश तत्व को कैसे प्राप्त किया जा सकता है यह जानेंगे।

आकाश तत्व को प्राप्त करने के मुख्य साधन निम्न हैं।

### 8.2.1 अल्पाहार या मिताहार

हठप्रदीपिका में स्वामी स्वात्माराम जी ने मिताहार की परिभाषा निम्न प्रकार दी है :—

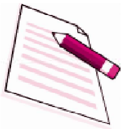

टिप्पणी

**सुस्निग्धमधुराहारश्चतुर्थांशविवर्जितः। भुज्यते शिवसम्प्रीत्यै मिताहारः स उच्यते ।।**

(ह.प्र.प्र.अ. 58)

अर्थात् सुस्निग्ध, मधुर (मीठा) आहार यदि आमाशय के चतुर्थांश को रिक्त छोड़कर शिवजी को अर्पण करके संतुष्ट मन से ग्रहण किया जाये तो उसे मिताहार कहते हैं। हठयोग के अभ्यास में मिताहार का अद्वितीय महत्व है।

उदर के चार भागों में से दो भाग अन्न से पूर्ण करके तथा एक भाग जल से पूर्ण करके एक चौथाई भाग वायु के संचरण के लिए खाली छोड़ना चाहिए।

ऋतु अनुसार, रोगानुसार भोज्य पदार्थों का निश्चय करके खाने से शरीर में दोष विकृत नहीं होते हैं। जिससे रोगों की उत्पत्ति नहीं होती हैं। मिताहार से तात्पर्य है– भूख (क्षुधा) से कुछ कम, ताजा सात्विक, पुष्टिदायक, स्निग्ध (वसा, घी, तेल आदि) आसानी से पचने वाला और रसयुक्त भोजन करने से है।

आहार में दूध, दूध से बने पदार्थ व हरी पत्तेदार सब्जियों का मुख्य स्थान है। आयुर्वेद के अनुसार तीन उपस्तम्भों आहार, निद्रा और ब्रह्मचर्य में आहार का प्रथम स्थान है।

**त्रय उपस्तम्भा इति – आहारः स्वप्नो ब्रह्मचर्यमिति।**

## 8.2.2 ढीले व आरामदायक वस्त्र

हमें ढीले व आरामदायक वस्त्र क्यों पहनने चाहिए?

ढीले व आरामदायक वस्त्र पहनने से हमारी त्वचा के छिद्र खुले रहते हैं व त्वचा का संपर्क आकाश तत्व से होता रहता है। इस तरह त्वचीय श्वसन सुचारू रूप से होता है। शरीर से विषैले पदार्थ आसानी से बाहर निकल जाते हैं। और शरीर की शुद्धि होती है एवं आकाश तत्व की प्राप्ति होती रहती है।

सिले हुए या तंग वस्त्र पहनने से ऊर्जा की गति में बाधा पहुँचती है और साधना या ध्यान की क्रिया में हम ऊर्जा को संग्रह कर उसकी गति को ऊर्ध्व करने का प्रयास करते हैं। ऐसे समय में तंग कपड़े बाधा पहुँचाते हैं। ध्यान साधना में सूक्ष्मता व शून्यता की ओर जाना ही प्रमुख लक्ष्य होता है। इसके लिए आकाश तत्व की अधिकता जितनी अधिक होगी वह सूक्ष्म होती जायेगी। सूती ढीले वस्त्र आकाशीय क्षेत्र अर्थात् खाली स्थान को बढ़ाते हैं, जिससे शून्यता का स्तर बढ़ता जाता है और धीरे–धीरे ऊर्जा की वृद्धि होकर उच्चस्तर में पहुँचने में सहायता मिलती है।

शरीर को जब आकाश तत्व उचित मात्र में मिलता रहता है तो उसमें वायु तत्व का आश्रय हो जाता है। इस वायु तत्व के विभिन्न प्रकारों द्वारा सभी शारीरिक क्रियायें सुचारू रूप से चलने लगती हैं। इस प्रकार ढीले, आरामदायक वस्त्र आकाश तत्व के द्वारा ऊर्जा की वृद्धि कर उच्च स्तर तक पहुँचने में सहायक होते हैं।

### 8.2.3 निर्वात

निर्वात क्या है? क्या आप निर्वात के बारे में जानते हैं? आइए इसी बारे में हम थोड़ा जानकारी प्राप्त करते हैं।

निर्वात वह स्थान है जहाँ कोई पदार्थ नहीं होता है। इसे अंग्रेजी में Vaccum कहते हैं, जो लेटिन शब्द Vaccus से बना है, जो कि अंग्रजी के Vacant यानि खाली स्थान से समानता रखता है। हिन्दी में निर्वात का अर्थ –अवकाश होता है।

**भौतिक शास्त्र के अनुसार–**

निर्वात वह स्थान है जहाँ पर दाब वायुमंडलीय दाब से कम होता है।

निर्वात में कोई भी पदार्थ अनुपस्थित होता है। इसे दाब की इकाई पास्कल में नापा जाता है। यह एक ऐसी अवस्था विशेष है जहाँ पर बाहरी वायुमंडल से कोई संपर्क या प्रभाव नहीं रहता है। निर्वात में ध्वनि का आवागमन नहीं होता है। ध्वनि के आवागमन के लिये माध्यम का होना आवश्यक होता है, किन्तु सिर्फ रेडियो एक्टिव विकिरण ही निर्वात से गुजर सकते हैं। निर्वात स्थान में गुरूत्वाकर्षण नहीं होता है। आकाश तत्व शून्यता का द्योतक है। निर्वात एवं पंचमहाभूत के प्रथम तत्व आकाश में समानता होती है। जो शांत स्थिर हो, चंचल न हो, जहाँ हवा भी न हो जिसमें वायु का आश्रय न हो ऐसा स्थान निर्वात कहलाता है।

निर्वात का वर्गीकरण दाब के अनुसार किया जाता है।

सामान्य दाब

मध्यम निर्वात

उच्च निर्वात

अल्ट्रा उच्च निर्वात

अति उच्च निर्वात

आदर्श निर्वात– आदर्श निर्वात में दाब शून्य होता है और इसी की तुलना आकाश तत्व से की जा सकती है। आकाश तत्व रिक्त स्थान होता है, जो विभु है। आकाश की तन्मात्रा शब्द होती है।

## यूनिटगत प्रश्न 8.2

1. आकाश तत्व किन–किन साधनों से प्राप्त होता है? (एक वाक्य में उत्तर दीजिए)।

   ..................................................................................................................

   ..................................................................................................................

टिप्पणी

2. हमें अपने पेट का कितना भाग रिक्त रखना चाहिए ?

   अ) 100%

   ब) 75%

   स) 50%

   द) 25%

3. निर्वात में कौन सा तत्व उपस्थित होता है?

   अ) पृथ्वी

   ब) वायु

   स) आकाश

   द) जल

4. ढीले व आरामदायक वस्त्र से प्राप्त होता है :

   अ) जल तत्व

   ब) वायु तत्व

   स) पृथ्वी तत्व

   द) आकाश तत्व

5. आकाश तत्व की समानता है :

   अ) निर्वात से

   ब) जल से

   स) पौधों से

   द) पक्षियों से

## 8.3 उपवास

प्राकृतिक चिकित्सा पद्धति में उपवास एक महत्वपूर्ण चिकित्सा है।

**आइये पहले उपवास का शाब्दिक अर्थ समझें–**

उपवास का शाब्दिक अर्थ है (उप=ऊपर या समीप, वास–निवास करना अर्थात्) ऊपर या समीप निवास करना। सामान्य परिस्थितियों में हमारा मन शरीर में ही वास करता है। वह शरीर से संबंधित कार्यों में लगा रहता है। जब हम आहार करते हैं तब वह इन्द्रियों से संयोग करता है। किन्तु निराहार या उपवास काल में अगर मन को शांत रखा जाए तब ऐसी स्थिति

में वह ऊपर उठने लगता है अर्थात् शरीर को छोड़ किसी अन्य तत्व से संयोग कर लेता है जिसमें आनंद की अनुभूति होती है।

आहार को रोक देने पर मन गहराई में जाने के लिये प्रयत्नरत् रहता है। यदि मन को अन्तर्मुखी बना लिया जाए तो वह चित्त के स्वरूप को समझने की कोशिश करता है, मैं कौन हूँ? वह कौन है? और इस जिज्ञासा में आत्म निरीक्षण करता हुआ वह योगपथ की ओर अग्रसर होने लगता है।

यदि इस उपवास काल में मन को श्रवण, कीर्तन, चिन्तन, मंत्रजाप आदि ध्यान की क्रियाओं में लगाते हैं तो तन और मन की शुद्धि होने लगती है। इस प्रकार सात्विकता की वृद्धि होती है। उपवास का यही मुख्य लक्ष्य है।

## 8.3.1 उपवास क्या है?

**यत्किंचिल्लाघवकरं देहे तल्लङ्घनं स्मृतम् ।। च.सू.22/9**

उपवास शरीर को स्वस्थ व शुद्ध रखने की एक पारंपरिक व धार्मिक पद्धति है जो पूर्णतः वैज्ञानिक है। आयुर्वेद के अनुसार उपवास काल में शरीर के पाचन तंत्र को पूर्ण विश्राम मिलता है। हमारा पाचन जन्म से मृत्यु तक निरंतर कार्य करता रहता है। जिस प्रकार हमें समय–समय पर विश्राम की जरूरत होती है व हम विश्राम के बाद ऊर्जा का अनुभव करते हैं ठीक उसी प्रकार पाचन संस्थान को उपवास काल में विश्राम मिल जाने पर वह अपने कार्यों को और ज्यादा सुचारू रूप से चलाने में सक्षम हो जाता है।

प्राकृतिक तौर पर भी देखा जाए तो हम देखते हैं कि जब पशु–पक्षी बीमार होते हैं तो वे भोजन छोड़ देते हैं व उसकी तरफ देखते भी नहीं हैं और इस प्रकार प्राकृतिक रूप से अपने रोग का स्वतः उपचार कर लेते हैं। जब हम बीमार होते हैं तो हमारी भूख भी स्वभावतः बंद हो जाती है।

## 8.3.2 उपवास क्यों जरूरी है?

वर्तमान में खाने की चीजों की अति उपलब्धता हो गई है। अनियमित व अधिक मात्रा में भोजन करने से पाचन क्रिया पर अनावश्यक भार बढ़ता है जिससे वह विकृत हो जाती है और विभिन्न प्रकार के रोग उत्पन्न हो जाते हैं। इससे जीवन शक्ति का ह्रास होता है।

उपवास काल में शरीर में कई प्रकार से हानि उत्पन्न करने वाले कारकों का नाश होता है। इस काल में शरीर की जीवनी शक्ति रोग के कारण को दूर करने में लग जाती है।

आधुनिक युग में आहार की बहुलता, श्रमरहित अनियमित जीवन को संतुलित बनाने के लिए आज उपवास की अत्यधिक आवश्यकता है।

इससे अनुशासन व संयमपूर्ण स्वभाव बनता है। आज व्यक्ति कई प्रकार के छोटे–बड़े रोगों से ग्रसित हो रहा है। जिन्हें विभिन्न प्रकार के उपवासों से दूर किया जा सकता है। जिससे

टिप्पणी

रसना (जिह्वा) पर नियंत्रण होता है व मन पर नियंत्रण की क्षमता बढ़ती है। जब भी एक विशेष क्षेत्र में नियंत्रण की आदत हो जाती है तो यह पूरे मन पर नियंत्रण की क्षमता को बढ़ा देता है इस प्रकार मन का भटकाव दूर होता है व शारीरिक, मानसिक स्वस्थता आती है।

उपवास के महत्व को जानने के बाद हम यह जानने का प्रयत्न करेंगे कि इसके क्या लाभ हैं।

## 8.3.3 उपवास के लाभ

1. **प्राकृतिक क्रिया**– प्राकृतिक चिकित्सा क्रिया होने से यह प्रकृति के नियमों के अधीन रहकर कार्य करती है और प्रकृति की मांग के अनुसार ही कार्य करती है।

2. **पाचन संस्थान को पूर्ण विश्राम**– उपवास के काल में पाचन संस्थान को पूर्ण विश्राम मिलता है, जिससे उसकी कार्य करने की क्षमता में वृद्धि होती है।

3. **विषैले व विजातीय द्रव्यों का निष्कासन**– उपवास काल के दौरान शरीर से मल पदार्थों का व विषैले द्रव्यों का निष्कासन होता है। मलों व विषैले द्रव्यों के निकल जाने से जीवनी शक्ति का क्षय रूक जाता है, जिससे शरीर स्वस्थ व शक्तिशाली बन जाता है।

4. **चित्त की शुद्धि व आध्यात्मिकता की ओर रूझान**– उपवास के अभ्यास से चित्त की शुद्धि होकर मानसिक व आत्मिक संतोष की प्राप्ति होती है। व्यक्ति का रूख ईश्वर की तरफ होता जाता है। व्यक्ति का दृष्टिकोण आध्यात्मिक हो जाता है।

5. **शारीरिक, मानसिक, सामाजिक व आध्यात्मिक स्वस्थता**– उपवास के अभ्यास से शारीरिक, मानसिक, सामाजिक व आध्यात्मिक स्वस्थता की प्राप्ति होती है। अर्थात् व्यक्ति पूर्ण रूपेण स्वस्थ हो जाता है।

6. **तप व त्याग की भावना का जाग्रत हो**ना– उपवास के अभ्यास से व्यक्ति में त्याग की भावना बढ़ती है। वह अधिक सहनशील व संतोषी बनता है।

7. **बुरी आदतों को दूर करने में सहायक**– उपवास बुरी आदतों को दूर करने में अति सहायक है। ऐसा माना जाता है कि यदि किसी आदत को दूर करना है तो मन को स्थिर व कड़ा कर प्रण कर लेना चाहिए कि मैं उक्त आदत को पुनः नहीं दोहराऊँगा। यदि ऐसी कठोर भावना से मन पर 7 दिन तक नियंत्रण कर लिया जाता है तो 8 वें दिन से यह व्यक्ति की शारीरिक व मानसिक आदत बन जाती है। और इसे जैविक घड़ी या Biological clock कहते हैं।

8. **धार्मिक प्रवृत्ति का जागृत होना**– उपवास के अभ्यास से जब मन पर नियंत्रण होता है और सकारात्मक भाव उत्पन्न होने लगते हैं तो व्यक्ति अधर्म व नकारात्मक क्रियाओं से स्वयं को दूर रखने की कोशिश करता है। उसकी यह कोशिश धार्मिक प्रवृत्ति को जागृत करती है।

9. **आत्मविश्वास से बढ़ना**

10. **मानसिक विकारों से मुक्ति**— भय, चिन्ता, शोक, क्रोध, मोह, निद्रा, तन्द्रा आदि पर विजय प्राप्त होती है, क्योंकि ये सभी मन से संबंधित हैं। मन पर नियंत्रण होने पर रोगों को दूर करने में सफलता मिलती है।

**मोटापे को दूर करने में सहायक—**

स्थूलकाय व्यक्तियों में उपवास अत्यंत उपयोगी सिद्ध होता है। जब मुख द्वारा आहार देना बंद किया जाता है तब शरीर विभिन्न क्रियाओं के लिये ऊर्जा को शरीर में संचित वसा द्वारा लेना शुरू कर देता है। इस प्रकार शरीर की चर्बी कम करने में उपवास महत्वपूर्ण सिद्ध होते हैं।

क्या आप जानते हैं कि उपवास का इतिहास क्या है ?

**उपवास का इतिहास—**

उपवास का अभ्यास सदियों पुराना है। उपवास को धार्मिक उत्सव के रूप में अति प्राचीनकाल से मनाया जाता है। भारत में ऐसा विश्वास किया जाता है कि जो व्यक्ति उपवास करता है वह ईश्वर के अति निकट है। हमारे धार्मिक ग्रंथो में उपवास को शरीर व मन की शुद्धि का साधन माना गया है।

आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रंथ भावप्रकाश में यह स्पष्ट रूप से कहा गया है कि शरीर से दोषों अर्थात् विजातीय द्रव्यों को बाहर निकालने की यह एक विशेष विधि है।

महर्षि सुश्रुत जो प्रसिद्ध आयुर्वेदिक शल्य चिकित्सा के जनक माने जाते हैं उनके अनुसार जिस व्यक्ति की पाचन क्रिया मंद हो गई हो, जिसके अंग अपने कार्यों को सुचारू रूप से नहीं चला पा रहे हों ऐसे व्यक्ति को उपवास अनिवार्य रूप से करना चाहिए। उपवास क्रिया से वे अंग पुनः सक्रिय हो जाते हैं।

हिपोक्रेट्स— जो आधुनिक चिकित्सा जगत के पिता हैं उनके अनुसार रोगकाल में भोजन करना बीमारी को बढ़ाता हैं। अति प्राचीन ग्रीक लेखक व इतिहासकार प्लुकार्ट लिखते हैं कि औषधि के बजाय उपवास रखना बेहतर क्रिया है। प्रसिद्ध दार्शनिक प्लूटो व अरस्तु ने भी उपवास का पुरजोर समर्थन किया है और इसे शुद्धिकरण की श्रेष्ठ चिकित्सा बताया है।

परमहंस योगानंद के अनुसार उपवास प्रकृति प्रदत्त चिकित्सा है। उपवास की क्रिया प्राणियों में एक स्वतः क्रिया है। जब ये रोगग्रस्त होते हैं तो स्वभाव से ही उपवास की क्रिया करने लगते हैं जिससे शरीर से विषैले तत्व बाहर निकल जाते हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि उपवास स्वचिकित्सक है जो प्रत्येक शरीर में नैसर्गिक प्रकृति के रूप में विद्यमान है।

विश्व के प्रत्येक क्षेत्र में व हर धर्म में उपवास की प्रक्रिया वर्णित है। हिन्दू एकादशी, शिवरात्रि, चतुर्मास, जन्माष्टमी आदि में व ऋतु अनुसार पथ्य—अपथ्य का ध्यान कर उपवास करते हैं।

टिप्पणी

इससे उनके शरीर से वात, पित्त, कफ दोष बाहर निकल जाते हैं व शरीर स्वस्थ बनता है। इसी प्रकार मुस्लिम रमजान के महीने में सूर्योदय से सूर्यास्त तक उपवास क्रिया करते हैं।

क्या आप जानते है उपवास के कितने प्रकार होते हैं?

## 8.4 उपवास के प्रकार

1. **प्रातःकालिक** उपवास– सुबह के नाश्ते को छोड़ देना प्रातःकालिक उपवास कहलाता है।
2. **सायंकालिक** – इस प्रकार के उपवास में रात्रि का भोजन निषिद्ध होता है, इससे पुराने रोगों को दूर करने में सहायता मिलती है।
3. **एकाहारोपवास**– एक बार में एक ही चीज का सेवन जैसे सुबह सिर्फ कोई एक प्रकार का फल व रात्रि में दूध या सुबह रोटी खाये तो शाम को सिर्फ सब्जी का ही सेवन करें।
4. **रसोपवास**– इस प्रकार के उपवास में फलों का रस या सब्जियों का सूप ही लिया जाता है (इससे पोषकतत्व व विटामिन, खनिज लवण) आसानी से मिल जाते हैं।
5. **फलोपवास**– इसमें कुछ दिनों तक केवल फलों के रसों का सेवन किया जाता है।
6. **दुग्धोपवास**– स्वस्थ गाय के धारोष्ण अर्थात् सीधे गाय के थन से निकले दूध का ही 5–7 दिनों तक सेवन किया जाता है।
7. **मठोपवास**– दही में 4 गुना पानी मिलाकर मट्ठा या छाछ तैयार की जाती है। फिर इस ताजी छाछ का सेवन किया जाता है। मट्ठा कम खट्टा होना चाहिए।
8. **पूर्णोपवास**– इस प्रकार के उपवास में सिर्फ शुद्ध जल का उपयोग किया जाता है।
9. **साप्ताहिक उपवास**– सप्ताह में एक दिन पूर्ण उपवास करना चाहिए। यह उपवास क्षुधा को मिटाता है व शारीरिक बल बढ़ाता है।
10. **लघु उपवास**– यह 3–7 दिन का उपवास है।
11. **कड़ा उपवास**– ऐसे रोग जो आसानी से ठीक नहीं हो पाते है उन्हें दूर करने के लिए कड़ा उपवास करने का निर्देश दिया जाता है।
12. **टूट उपवास**– इसमें पहले 2–7 दिनों का पूर्णोपवास रखा जाता है। इसके बाद हल्का प्राकृतिक भोजन करवा देने के बाद पुनः 2–7 दिनों तक पूर्णोपवास रखा जाता है।
13. **दीर्घ उपवास**– इसमें 21 से 60 दिन तक का उपवास रखा जाता है। लंबे समय तक उपवास रखने से विषैले तत्व पूर्ण रूप से निकल जाते हैं। किन्तु यह उपवास किसी विशेषज्ञ की देखरेख में ही किया जाना चाहिए। साधु–संत, भक्तगण व सज्जन पुरूषों को यह आसान लगता है।

टिप्पणी

## 8.5 उपवास करने व तोड़ने की विधि

अब उपवास को शुरू करने व समाप्त करने की विधि को समझें।

**पूर्ण उपवास की अवधि या काल—**

पूर्ण उपवास सप्ताह में एक दिन, प्रत्येक माह में दो बार (एकादशी) वर्षभर में 8,10,15 दिन का किया जा सकता है।

उपवास काल में करने योग्य कार्य—

निम्नकार्य हमें उपवास काल में मुख्य रूप से करने चाहिए—

1. **जलसेवन**— उपवास काल में अधिक से अधिक जल पीना चाहिए, जिससे पानी की कमी न हो अन्यथा जल की कमी हो जाती है। पानी में नारंगी, मौसमी, मीठा नींबू, अनार रस, मिलाकर पीने से यह सोने में सुहागा सिद्ध होता है।

2. **एनिमा जलवस्ति**—पाचन क्रिया के आराम करने के कारण आँत अपना कार्य नहीं कर पाती है। अतः उन्हें क्रियाशील रखने व स्वाभाविक गंदगी निकालने के लिये रोजाना हल्के गर्म पानी में थोडा नींबू का रस मिलाकर एनिमा द्वारा साफ करते रहना चाहिए।

3. **स्नान कर्म**—शरीर को रोजाना साफ रखना उपवास काल का मुख्य कार्य है। शीतल जल से स्नान, असमर्थ होने पर गीले कपड़े द्वारा शरीर को पोंछना इन उपायों द्वारा स्नान कार्य कर शरीर को स्वच्छ रखना चाहिये।

4. **शारीरिक परिश्रम** :— अपने दैनिक कार्यों को करते हुए उपवास काल में उचित व्यायाम करना चाहिये व्यायाम अपनी शक्ति अनुसार करना चाहिए। व्यायाम अपने बल के आधे बल तक करना चाहिए। दुबले—पतले लोगों को छोड़कर भारी शरीर वाले व्यक्तियों को उपवास काल में भी श्रम करना चाहिए, जिससे अंग प्रत्यंगो में गतिशीलता बनी रहे।

5. **आराम व शिथिलीकरण** :— उपवास के परिणामस्वरूप होने वाले उपद्रवों से बचने के लिए, उपवास काल में व उसके पश्चात् निश्चित समय के लिए आराम करने से अधिक स्वास्थ्य लाभ होता है।

6. **श्रवण मनन** :— उपवास काल में मानसिक शांति व स्थिरता प्राप्त करने के लिए मंत्रजाप, कीर्तन, मनन करना चाहिये। ईश्वर का ध्यान व जरूरतमंदो के लिये सेवा द्वारा भी चित्त शुद्धि होकर मन शांत व स्थिरता प्राप्त करता है।

7. **उपचार अथवा औषधि चिकित्सा**:— अधिकतर दीर्घ उपवास करने के बाद शरीर में उपद्रव होने की संभावना हो सकती है। जिनका निराकरण प्राकृतिक विधियों द्वारा ही किया जाना चाहिए। हमें औषधियों का सेवन इस दौरान नहीं करना चाहिए अन्यथा इसके भयंकर परिणाम देखने को मिलते हैं।

टिप्पणी

8. **धैर्य व साहस** :— इस काल में धीरता व हिम्मत से काम लेना चाहिए। अन्तः करण को स्वच्छ रखना चाहिए।

   1. मोटे लोगों को सप्ताह में एक बार उपवास करना चाहिए। अपने भोजन में फलों व सब्जियों का अधिक उपयोग करना चाहिए।

   2. दुबले पतले, कमजोर, क्रोधी स्वभाव, कमजोर दिल वाले लोगों को सिर्फ बीमारी में ही उपवास करना चाहिए अन्यथा नहीं। उन्हें पौष्टिक द्रव्यों का सेवन करना चाहिए।

   3. आध्यात्मिक शक्ति वर्धन के लिये विधिपूर्वक तप, ध्यान, चिन्तन, ईश्वरोपासना, कीर्तन आदि करना चाहिए।

आइए, अब हम उपवास को शुरू करने व समाप्त करने की विधि के बारे में जानें।

- उपवास के पहले, उपवास के बाद व उपवास काल में मल पदार्थ ठीक से निकलते रहें, इसका विशेष ध्यान रखना चाहिए। इस काल में शरीर से मल पदार्थ इकट्ठे होकर पेट में आ जाते हैं और वहाँ से शरीर से बाहर निकल जाते हैं अन्यथा यह शरीर में रोग उत्पन्न करते हैं।

- मल—मूत्र , पसीने का समुचित निष्कासन होता रहे।

- उपवास से पूर्व 2 सप्ताह तक फल, दूध, सब्ज़ियाँ आदि खाना चाहिए।

- शरीर को विभिन्न प्राकृतिक साधनों द्वारा स्वच्छ रखना चाहिए।

- शीतल जल स्नान, मर्दन, व्यायाम आदि क्रियायें पूर्व में ही शुरू कर शरीर को तैयार रखना चाहिए।

- स्वयं को अनुशासन में रखकर ईश्वर की साधना में चित्त को लगाने का प्रयत्न करना चाहिए।

- धूप में बैठना, वायु सेवन करना आदि से परिणाम अच्छे मिलते हैं। उपवास काल में आरंभ में दो दिन तो भूख लगती है, किन्तु तीसरे दिन भूख नहीं लगती है।

उपवास प्रायः 1 दिन, 2 दिन, 3 दिन से लेकर 2 मास, 4 मास तक किया जाता है। उपवास काल में मलों के निष्कासन से जीभ में लेप , दाँतो में मल, श्वास में दुर्गंध आती है अतः नींबू मिला हुआ गुनगुना पानी पीकर मल को समय पर निकालते रहना चाहिए।

**उपवास के पश्चात् कर्म :–**

अब हम उपवास को कैसे समाप्त किया जाना चाहिए, इसके बारे में चर्चा करेंगे।

प्रारंभ में तरल पदार्थ :–

1. हमें फलों के रस का सेवन करना चाहिए।
2. इसके बाद सूप या पतली खिचड़ी का सेवन करना चाहिए।
3. फिर क्रमशः ठोस आहार का सेवन करना चाहिए।

लंबे समय तक भोजन न करने के कारण पाचन प्रणाली की क्रियाशीलता मंद हो जाती है। इसलिए उपवास की समाप्ति पर आहार में विशेष सावधानी बरतनी चाहिए।

उपवास तोड़ने के लिए आहार क्रम :–

1. प्रथम फलों के रस उत्तम आहार हैं।

   संतरे का रस, मौसंबी का रस।

**चित्र 8.2**

2. द्वितीय 1—2 दिन पश्चात् अंगूर, अनार, सेब आदि के रस का सेवन करें।
3. जितने दिन तक उपवास रखा जाए उसके चौथाई दिन तक फलों के रस का सेवन करें। जैसे :– 20 दिन के उपवास में 5 दिन फलों के रस का सेवन ।

टिप्पणी

चित्र 8.3

4. इसके पश्चात् 1/8 दिन अर्थात $2\frac{1}{2}$ दिन अन्य फल जैसे सेब, अमरूद, चीकू तथा उबली हुई सब्जियों का सेवन ।
5. फिर दूध व खिचड़ी (सूप) आदि का सेवन करना चाहिए।
6. अंत में चावल, रोटी, दाल आदि लेना चाहिए।
7. दूध का सेवन अन्न के साथ ही करना चाहिए।

## यूनिटगत प्रश्न 8.3

1 उपवास का क्या अर्थ है ?

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

..........................................................................................................................

2. उपवास से मिलता है :—

अं) पाचन तंत्र को विश्राम

ब) मानसिक उद्वेग

स) भूख व प्यास की प्रतीति

द) स्वादिष्ट भोजन

3. उपवास से प्राप्ति होती है :—

अ) पृथ्वी

ब) जल

स) आकाश

द) वायु तत्व की

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट में हमने सीखा कि:

- मानव शरीर को स्वस्थ रखने के लिए, पंचमहाभूतों में आकाश तत्व अत्यंत उपयोगी एवं महत्वपूर्ण है।
- शरीर में रिक्त स्थान का होना अति आवश्यक है और इसी के द्वारा शरीर में रक्त व वायु का संचार होने से वाहिकाओं द्वारा महत्वपूर्ण द्रव्य एक स्थान से दूसरे स्थान पर पहुंचाए जाते हैं।
- आकाश तत्व की प्राप्ति उपवास, मिताहार, निर्वात, ढीले आरामदायक वस्त्र, अनुशासन, सम्यक् निद्रा, ब्रह्मचर्य आदि से प्राप्त कर सकते हैं।
- उपवास व उपवास के प्रकारों के बारे में जाना। उपवास के पश्चात् कर्मों को जानकर उपवास तोड़ने के विषय में समझा और जाना कि फलों के रसों का सेवन करते हुए धीरे–धीरे सामान्य आहार पर आना चाहिए।

## यूनिटांत प्रश्न

1. आकाश तत्व की प्राप्ति के विभिन्न साधनों की चर्चा कीजिए।
2. उपवास की महत्वता पर विस्तार से प्रकाश डालिए।
3. आकाश तत्व स्वास्थ्य की दृष्टि से परम उपयोगी है, विवेचना कीजिए।

## यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

### 8.1

1. आकाश से वायु, वायु से सूर्य, सूर्य से जल, जल से पृथ्वी की उत्पत्ति हुई।
2. ब. आकाश
3. द. रिक्त स्थान

टिप्पणी

4. अ) पृथ्वी 2. गंध

   ब) जल 1. रस

   स) वायु 4. स्पर्श

   द) आकाश 3. शब्द

## 8.2

1. अल्पाहार, ढीले वस्त्र, अवकाश (खाली स्थान)
2. द — 25%
3. अ — आकाश
4. द — आकाश तत्व
5. अ — निर्वात से

## 8.3

1. ऊपर या समीप निवास करना
2. अ — पाचन तंत्र को विश्राम
3. स — आकाश

# 9

# वायु तत्व चिकित्सा

पिछली यूनिट में हम आकाश तत्व के बारे में पढ़ चुके हैं। आकाश तत्व से वायु तत्व की उत्पत्ति हुई है। वायु तत्व पंचमहाभूतों में दूसरा महत्वपूर्ण तत्व है। शरीर की संपूर्ण जीवनी क्रियाएं वायु तत्व के द्वारा ही संचालित होती हैं। आहार, रक्त, लसिका, तंत्रिका आवेद, मल मूत्र निष्कासन विभिन्न शारीरिक तंत्रों की क्रियायें, वायु तत्व के द्वारा ही संपादित होती हैं, अतः इस यूनिट में हम वायु तत्व के बारे में अध्ययन करेंगे।

## उद्देश्य

इस पाठ का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- वायु तत्व की अवधारणा पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- वायु तत्व की जीवन में उपयोगिता समझा सकेंगे;
- वायु तत्व की उत्पत्ति, प्रकार, कार्य व महत्त्व का उल्लेख कर सकेंगे;
- वायु सेवन और इस के साधनों के बारे में समझा सकेंगे;
- पवन स्नान का उचित काल और लाभ का वर्णन कर सकेंगे;
- प्राणायाम तथा वायु प्रवेश निकास व्यवस्था को बता सकेंगे;
- व्यायाम और शरीर मर्दन (मालिश) की उचित जानकारी दे सकेंगे।

टिप्पणी

## 9.1 वायु तत्व अवधारणा एवं उसका महत्व

वायु तत्व को समझने के लिए हमें प्रथम पंचतत्व को समझना आवश्यक है। पिछली यूनिट में भी पंचतत्व पर चर्चा की गई है।

प्राकृतिक चिकित्सा प्राणीमात्र के लिए स्वभावतः होने वाली रोगोपचार की विधि है। यह सिर्फ रोगों का ही निराकरण नहीं करती अपितु स्वस्थ जीवन जीने की एक कला सिखाती है।

जन्म से मृत्यु तक का काल, आयु कहलाता है, जिसमें शरीर + इन्द्रियाँ + मन + आत्मा का संयोग है।

**(शरीरेन्द्रिय सत्वात्मसंयोगो धारि जीवितम्)**

यह शरीर पंचमहाभूत, इन्द्रिय, मन और आत्मा के संयोग से मिलकर बना है।

**क्षितिजलपावक गगन समीरा,**
**पंचतत्व मिलि बना सरीरा।**

ये पंचमहाभूत आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी हैं।

आकाश से वायु, वायु से तेज, तेज से जल, जल से पृथ्वी की उत्तरोत्तर उत्पत्ति हुई है।

आइए, वायु तत्व को जानें–

वायु तत्व क्या है ? इसकी उत्पत्ति का कारण क्या है ?

वायुतत्व पंचमहाभूतों में द्वितीय तत्व है। आकाश तत्व से वायु तत्व की उत्पत्ति हुई है।

हम जानते हैं कि वायुतत्व परम आवश्यक तत्व है। इसके बिना जीवन असंभव है। आहार, जल व वायु आदि जीवन के मुख्य आधार में भी वायु अति महत्वपूर्ण है। शरीर की संपूर्ण जीवनीय क्रियाओं को संपादित करने के लिए वायु का होना जरूरी है। अर्थात् जिस प्रकार जलीय प्राणी जल के बिना जीवित नहीं रह सकते उसी प्रकार स्थलीय प्राणी, वायु के बिना जीवित नहीं रह सकते हैं।

हमारी इन्द्रियाँ अपने संबंधित विषयों को वायु की अनुपस्थिति में ग्रहण नहीं कर सकती हैं। जब शरीर को पर्याप्त शुद्ध वायु मिलती रहती है तभी जीवनीय क्रियाओं के संपादन से जीवनीय शक्ति बनी रहती है। इसे ही प्राणिक ऊर्जा कहते हैं। प्राणिक ऊर्जा का मुख्य स्रोत प्राणवायु है। प्राणवायु के बिना हम एक पल भी जीवित नहीं रह सकते हैं। यह अनवरत चलने वाली क्रिया है, जिसके माध्यम से प्राणी शरीर में श्वसन क्रिया का निष्पादन होता है। एक मिनट में हम 16–18 बार श्वास लेते हैं। पृथ्वी के चारों ओर वायु 300 मील के घेरे में विद्यमान है।

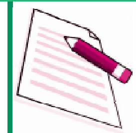



वायु का विस्तार –

- पृथ्वी के चारों ओर – 300 मील तक
- फेफड़ों में (आंतरिक वायु) – 15 वर्गफुट से अधिक
- बाहर निकाली गई वायु 25–30 घन इंच

वायुमंडल में उपस्थित विभिन्न गैसों में ऑक्सीजन शरीर द्वारा ली जाती है। किन्तु नाइट्रोजन जिस रूप में प्रवेश करती है, उसी रूप में वापस आ जाती है। जहाँ जीव–जन्तु ऑक्सीजन ग्रहण करते हैं व कार्बनडाई–ऑक्साइड को निकालते हैं वहीं पेड़–पौधे कार्बनडाईऑक्साइड को ग्रहण करते हैं व ऑक्सीजन को बाहर निकालते हैं। अतः प्राणीमात्र व पेड़–पौधों का एक दूसरे को जीवन प्रदान करने में घनिष्ट संबंध है।

**क्या आप जानते हैं कि** वायु तत्व की उत्पत्ति आकाश तत्व से हुई है।

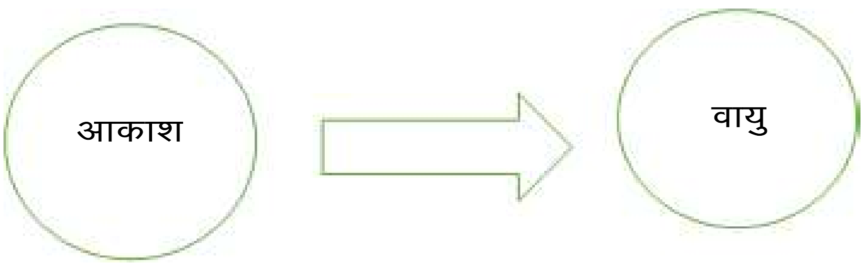


अर्थात् आकाश से वायु की उत्पत्ति हुई और जहाँ रिक्त स्थान होता है वहीं वायु भर जाती है। जिस प्रकार जीवित शरीर के त्रिदोषों में शरीरगत वात का महत्व है उसी प्रकार जीवन के पोषक आहार जल–वायु में पर्यावरण की वायु का महत्व है। वायु तन्त्र–यन्त्र को धारण करने वाली है।

**वायुस्तन्त्रयन्त्रधर । (चरक संहिता)**

**वायु के प्रकार –**

वायु अपने कार्य व स्थान के अनुसार पाँच प्रकार की होती है–

1. प्राण – प्राण का स्थान हृदय है।
2. अपान – अपान का स्थान गुदा है।
3. समान – समान का स्थान नाभि है।
4. उदान – उदान का स्थान कंठ है।
5. व्यान – व्यान का स्थान सारा शरीर है।

टिप्पणी

वायु

- प्राण वायु
- उदान वायु
- समान वायु
- व्यान वायु
- अपान वायु

दिशा के भेद से वायु 4 प्रकार की होती है

वायु →

1. पूर्वी वायु – पूर्व दिशा से बहने वाली वायु है।
2. पश्चिमी वायु – पश्चिम दिशा से बहने वाली वायु है।
3. उत्तरी वायु – उत्तर दिशा से बहने वाली वायु है।
4. दक्षिणी वायु – दक्षिण दिशा से बहने वाली वायु है।

वायु के प्रकारों को समझकर अब हम वायु के कार्यों पर प्रकाश डालते हैं।

**वायु के कार्य –**

**आइए, अब वायु के सामान्य कार्य जानें।**

1. **चेष्टाओं की प्रर्वतक**–वायु शरीर की सभी छोटी बड़ी चेष्टाओं की प्रर्वतक है।
2. **प्रणेता व नियन्ता** – यह मन की प्रणेता भी है और नियन्त्रक भी है।
3. **ग्रहणकर्ता** –सभी इन्द्रियों के विषयों को ग्रहण करने वाली है।
4. **मूलतत्व**– यह शब्द व स्पर्श के ग्राहक कर्ण व त्वचा की मूल है।
5. **हर्ष व उत्साह** की जनक है।
6. **अग्नि की प्रेरक है**– जठराग्नि बढ़ाने वाली है व अग्नि महाभूत की उत्पत्ति की कारक है।
7. **शोषक व निर्हरक**– दोषों का शोषण करने वाली व उन्हें शरीर से बाहर निकालने वाली है।
8. **आकृति प्रदान करने वाली**– गर्भ को आकृति प्रदान करने वाली है।
9. **वाणी**– वायु, वाणी की प्रर्वतक है। वायु के बिना हम बोलने में असमर्थ हैं।

हमारे वायुमंडल में ऑक्सीजन, कार्बनडाइ–ऑक्साइड, नाइट्रोजन आदि के अलावा कई गैसें होती हैं। सामान्यतः 21% ऑक्सीजन, 78% नाइट्रोजन, 0.03% कार्बनडाइआक्साइड तथा अन्य गैसें वायुमण्डलें में उपस्थित रहती हैं।

ऑक्सीजन प्राणवायु है व अत्यधिक ज्वलनशील है। नाइट्रोजन इस पर नियंत्रण रखती है। जीव–जन्तु ऑक्सीजन का सेवन करते हैं और पेड़–पौधे कार्बनडाइ ऑक्साइड का उपयोग

कर सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में करते हैं। इस प्रकार वे अपने भोजन का निर्माण करते हैं। इस क्रिया में वे ऑक्सीजन को बाहर निकालते हैं। इस प्रकार ऑक्सीजन व कार्बनडाइ आक्साइड एक दूसरे के अस्तित्व के लिए महत्वपूर्ण हैं। शुद्ध वायु में ओजोन नामक परम उपयोगी वायु भी होती है। वायु दूषण से वायुमण्डलीय वायु के अनुपात में परिवर्तन होता है। कार्बनडाइ आक्साइड के बढ़ने से अन्य पदार्थों को मिलने से तथा जलन, सड़न, दुर्गन्ध, धूम, धूलि, वाष्प आदि से वायु दूषित होती है व रोग उत्पन्न करती है। इसके अतिरिक्त कुछ मुख्य कारण और भी हैं, जैसे–

- कारखानों, स्व–चालित वाहनों द्वारा विषैली गैसों का उत्पन्न होना।
- मलमूत्र आदि द्वारा,
- रोग उत्पन्न करने वाले जीवाणुओं द्वारा,
- धूल, परागकण, खनिज द्रव्यों के सूक्ष्म कणों के द्वारा।

इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि इस अशुद्ध वायु का यदि हम सेवन करते हैं तो कई प्रकार के रोग उत्पन्न हो सकते हैं जिससे सभी जीव–जन्तु अस्वस्थ हो सकते हैं।

क्या आप जानते हैं कि अशुद्ध वायु से कौन–कौन से रोग उत्पन्न हो सकते हैं, जैसे–

सिरदर्द, आलस्य, अरूचि, खून की कमी, खाँसी, दमा, क्षयरोग, सर्दी–जुकाम, अग्निमांद्य (जठराग्नि का मंद होना) दुर्बलता आना, चेचक, डिफ्थीरिया, एलर्जी आदि रोग।

## 9.2 पवन स्नान

पवन स्नान क्या है अब यह समझते हैं।

'वायु का सेवन करना ही पवन स्नान कहलाता है'। खुले स्थान में बहती हुई हवा के संपर्क में आकर आनंद का अनुभव करना पवन स्नान है। पवन स्नान त्वचा के माध्यम से होता है। हमारी त्वचा में असंख्य छिद्र होते हैं। त्वचा इन छिद्रों के द्वारा श्वसन क्रिया करती है और इन्हीं छिद्रों से मल पदार्थों को बाहर निकालती है।

खुले स्थान में टहलना पवन स्नान का ही रूप है। टहलने पर हम आकाश महाभूत के साथ–साथ वायु महाभूत के संपर्क में आते हैं, जिससे ताजगी का अनुभव होता है जिस प्रकार हमारे घरों में खिड़की व झरोखे होते हैं और वहाँ से शुद्ध वायु का आगमन होता रहता है, उसी प्रकार त्वचा के छिद्रों से शरीर को शुद्ध वायु की प्राप्ति होती रहती है। पवन स्नान के लिए उचित स्थान हैं खुले आकाश के नीचे, हरे–भरे उपवन, नदी के किनारे, झरनों के किनारे व समुद्र के तट के किनारे जहाँ रमणीक शान्त वातावरण होता है वहां पर शारीरिक शांति के अलावा मानसिक शांति व आनंद की अनुभूति होती है। खुले आकाश के नीचे (टहलना)– खुले आसमान के नीचे सुरम्य स्थान पर टहलने से हमारा शरीर वायु के संपर्क में आता है व इस प्रकार उसे वायु तत्व की प्राप्ति होती है। शरीर कांतिमय बनता है, वह विशुद्ध वायुमंडल के संपर्क में आता है। फेफड़ों को शुद्ध वायु मिलती है व दीर्घायु बनता है।

टिप्पणी

शुद्ध वायु के मिलने से शरीर के सभी तंत्रों को समुचित कार्य करने के लिए ऊर्जा मिलती है। शरीर स्फूर्ति व हर्ष का अनुभव करता है।

नदी, झरने व समुद्र के किनारे टहलने पर खुली हवा के स्पर्श का अनुभव होता है। प्राणवायु की प्राप्ति होती है व शरीर को शुद्ध हवा मिलने से शरीर की प्रत्येक कोशिका सहज रूप से कार्य करने के लिये प्रेरित होती है।

प्रातःकालीन वायु में किसी भी प्रकार के प्रदूषण की संभावना अति अल्प होती है। इस प्रकार प्राकृतिक तत्व वायु का अधिकाधिक सेवन हो पाता है।

टहलना कसरत के अलावा आराम भी है। खुली हवा में टहलने से हमें शिथिलीकरण की अनुभूति होती है।

टहलने से हमारे शरीर की 200 से अधिक माँसपेशियाँ क्रियाशील होती है। रक्त का संचार बढ़ता है, जठराग्नि प्रदीप्त होती है भूख अच्छी लगती है। पवन स्नान के लिये उचित स्थान बस्ती से दूर हरे—भरे वृक्षों के बीच साफ—सुथरे पथ पर होना चाहिए। पवन स्नान के लिए ठंडी ओसयुक्त हरी घास पर टहलना चाहिए। नंगे पैरों से ही टहलना चाहिए।

### 9.2.1 पवन स्नान का काल

पवन स्नान वर्ष भर किया जा सकता है। गर्मी के दिनों की अपेक्षा सर्दी के दिनों में इसका एक अलग ही मजा है। टहलना एक ऐसी कला है जिसमें हम संसार की सर्वश्रेष्ठ कसरत से अवगत होते हैं। यह जीवन की आवश्यकता है। सुबह ब्रह्ममुहूर्त में टहलना सर्वोत्तम माना गया है। इस काल में हमारे शरीर के तंत्र अति क्रियाशील रहते हैं। सूर्योदय से कुछ पहले सभी दिशाओं की वायु सभी दोषों से मुक्त होती है।

### 9.2.2 पवन स्नान के लिये दिशाओं का महत्व

1. **पूर्व दिशा की वायु**— भारी, गरम, स्निग्ध, दाह करने वाली व वातदोष को बढ़ाने वाली होती है।

2. **दक्षिण दिशा की वायु**— हल्की, बल बढ़ाने वाली तथा नेत्रों के लिये हितकारी होती है।

3. **पश्चिम दिशा की वायु**— तेज, सुखाने वाली, बल का नाश करने वाली, हल्की, चर्बी, कफ व पित्त का नाश करने वाली होती है।

4. **उत्तर दिशा की वायु**—शीतल, कफ को बढ़ाने वाली, मधुर तथा कोमल होती है।

प्रातः बेला जिसे ब्रह्ममुहूर्त कहते है इस काल में पवन स्नान व टहलना अति उत्तम होता है व त्रिदोषनाशक होता है।

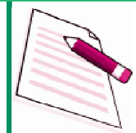

टिप्पणी

### 9.2.3 पवन स्नान के लाभ

**पवन स्नान से क्या लाभ होते हैं ? अब यह समझने का प्रयत्न करेंगे।**

- पवन स्नान करने वाले का जीवन नियमित, ऊर्जा, हर्ष और आनंद से भरा होता है।
- उसकी जठराग्नि संतुलित रहती है व भोजन का पाचन समुचित रूप से होता रहता है।
- त्वचा कांतिमय व स्वस्थ रहती है।
- नेत्रज्योति बढ़ती है व नेत्ररोगों का शमन होता है।
- श्वास से संबंधित रोगों से मुक्ति मिलती है व परम आरोग्य की प्राप्ति होती है।
- पवन स्नान से मानसिक संतुलन बढ़ता है व इस प्रकार मानसिक बल में वृद्धि होती है।
- अग्निमांद्य, कब्ज़ की बीमारी दूर होती है।
- पवन स्नान से जीर्ण रोगों से मुक्ति मिलती है व स्नायु दुर्बलता दूर होती है। मानसिक दोष, अनिद्रा, स्वप्नदोष, सर्दी, खाँसी, दुबलापन, कमजोरी, क्षयरोग, मलिनता, अवसाद, चिन्ता आदि की रामबाण औषधि है।
- निराशा व हताशा से मुक्ति मिलती है व मन आनंदित होता है।
- सकारात्मकता का अनुभव होता है।

इस प्रकार जब शरीर क्षीण होता जाता है तब पवन स्नान शरीर में स्फूर्ति भरकर उसे नष्ट होते हुए रूप को पुनः जीवित करता है। अर्थ अर्थात् धन की हानि जो अस्वस्थता व दवाओं के रूप में होती है वह रूक जाती है। इस प्रकार वायु सेवन या पवन स्नान एक अचूक दवा है।

## 9.3 वायु सेवन

क्या आप जानते हैं कि वायु सेवन क्या है? यह किन–किन साधनों द्वारा किया जा सकता है?

आइए अब वायु सेवन पर चर्चा करें–

हम जानते है कि बिना वायु के हम जीवित नहीं रह सकते, जीने के लिये वायु की उपस्थिति आवश्यक है। हम श्वसन क्रिया के द्वारा प्रतिक्षण वायु का सेवन करते रहते हैं। अष्टांग योग की चौथी सीढ़ी हमें प्राणायाम के बारे में निर्देश देती है। प्राणायाम का अर्थ प्राणों का आयाम या विस्तार करना है।

- श्वास लेने की क्रिया को पूरक कहते हैं।
- श्वास छोड़ने की क्रिया रेचक कहलाती है।
- जब श्वास को अन्दर भरकर या बाहर निकालकर रोक लिया जाता है तब उसे कुंभक कहते हैं। नाड़ी शोधन प्राणायाम में पूरक, कुंभक व रेचक में आवृत्तियों का अनुपात 1:4:2 रखा जाता है।

टिप्पणी

## 9.3.1 प्राणायाम के प्रकार

प्राणायाम विषय पर आप प्रथम–विषय के अन्तर्गत विस्तृत रूप से अध्ययन कर चुके हैं।

प्राणायाम या श्वास की क्रियायें मुख्य रूप से निम्नांकित प्रकार की बताई गई हैं :

1. सूर्यभेदी
2. उज्जायी
3. शीतली
4. सीत्कारी
5. भ्रामरी
6. भस्त्रिका
7. प्लाविनी
8. मूर्च्छा
9. केवली

यहाँ पर हम उज्जायी प्राणायाम के बारे में जानते हैं। सबसे पहले नाड़ीशोधन प्राणायाम करते हैं।

### नाड़ी शोधन प्राणायाम

सभी प्राणायामों के पूर्व अभ्यास के रूप में सर्वप्रथम हमें नाड़ीशोधन प्राणायाम करना चाहिये। यह श्वसन पथ की शुद्धिकरण की क्रिया है, जिससे हमारे शरीर की 72000 नाड़ियाँ शुद्ध होती हैं। नाड़ी शोधन का अनुलोम– विलोम प्रकार सबसे उत्कृष्ट माना जाता है। इसे करने की विधि निम्नानुसार है।

बाँयी नासिका से श्वास भरकर दाहिनी नाक से निकालें फिर दाहिनी नाक से श्वास भरकर बाँयी नासिका से निकालें, इस प्रकार एक आवृत्ति होती है।

इसमें पूर्ण निपुण होने पर, इसे कुंभक के साथ भी किया जाता है। उज्जायी प्राणायाम करने की उचित विधि का मस्तिष्क, सुषुम्ना तथा नाड़ी विज्ञान से गहरा संबंध है। प्राणायाम के पूर्व आसन की सिद्धि आवश्यक होती है। पतंजलि मुनि के अनुसार प्राणायाम की परिभाषा *"तस्मिन सति श्वास प्रश्वास योर्गतिविच्छेदः"* उस आसन के सिद्ध हो जाने पर श्वास व प्रश्वास की गति का विच्छेद होना (रूक जाना) प्राणायाम कहलाता है।

उज्जायी प्राणायाम किसे कहते है ? यह समझने के लिये पहले हमें उज्जायी का अर्थ समझना होगा।

उज्जायी शब्द संस्कृत की 'उद्' धातु में 'जि' प्रत्यय लगने पर बनता है, जिसका अर्थ है विजयी होना अर्थात् जो विजयी है। उज्जायी प्राणायाम का अर्थ है जीतने वाली श्वसन क्रिया।

टिप्पणी

### उज्जायी प्राणायाम विधि—

आइए, महर्षि घेरंड जी के अनुसार उज्जायी में श्वास क्रिया की सही विधि समझने का प्रयास करें—

उज्जायी प्राणायाम में जिह्वा के अग्र भाग को थोड़ा मोड़कर ऊपर तालू पर लगाते हैं अब दोनों नासिकाओं से श्वास भर कर अन्दर खींचते हैं और वायु को मुँह में ही रखते हैं। इसके बाद कण्ठ को संकुचित कर सूक्ष्म आवाज (ध्वनि) करते हुये हृदय एवं कण्ठ भाग से वायु को खींचते हैं। इस वायु का मिलन पूरक द्वारा खींची गई वायु से करते हैं। इस विधि में कण्ठ को संकुचित किया जाता है। इस प्रकार यह विधि ऑक्सीजन की मात्रा में वृद्धि करती है। जब हम कण्ठ को संकुचित करते है तब श्वासनली का छिद्र छोटा हो जाता है। वायु इस छिद्र से प्रवेश करती है, तब बच्चे के कोमल खर्राटे के समान आवाज उत्पन्न होती है। इसमें श्वास की आवाज ऊँची नहीं होती है यह सिर्फ अभ्यासी को ही सुनाई देनी चाहिए। इस विधि के द्वारा श्वास पर नियंत्रण होकर चित्त उच्च स्थिति को प्राप्त करने में सक्षम हो जाता है। उज्जायी प्राणायाम का काल या अवधि 10—20 मिनट की होती है। आइए, उज्जायी प्राणायाम के लाभों को समझें—

### उज्जायी प्राणायाम के लाभ—

- यह शांति प्रदायक और वायु सेवन के लिए उपयुक्त प्राणायाम है।
- इस अभ्यास से ध्यान की विधि अजपाजप का लाभ मिलता है।
- यह तंत्रिका तंत्र को स्वस्थ रखने का उपयोगी उपाय है।
- यह अनिद्रा को दूर कर मानसिक शिथिलता प्रदान करता है।
- यह हृदयगति को धीमा करता है जिससे उच्च रक्तचाप के रोगी में सहायक सिद्ध होता है। कफ रोग, कब्ज, आँव, आँत का अल्सर , जुकाम, बुखार और यकृत आदि के रोग नहीं होते है।

उज्जायी प्राणायाम की विधि में पेट का भी संकुचन होता है। पूर्ण उज्जायी में श्वास लेकर वायु को अंदर रोककर ठोड़ी को कण्ठकूप में लगाते हैं (जालन्धर बंध)। इस प्रकार शरीर की धातुयें पुष्ट होती हैं। व्यक्ति जितेन्द्रिय होता है व उसमें  योग पथ की उच्च अवस्थाओं को प्राप्त करने की क्षमता आ जाती है। ढीले व सूती कपड़े पहनने से भी वायु की मात्रा बढ़ाई जा सकती है।

### ढीले व सूती वस्त्रों द्वारा वायु सेवन—

अब हम इसके बारे में समझेंगे कि ढीले व सूती कपड़े किस प्रकार वायु सेवन में सहायक होते हैं।

ढीले व सूती वस्त्र धारण करने से हमारी त्वचा ठीक प्रकार से श्वसन कर पाती है। श्वसन की क्रिया नासिका छिद्र से फेफड़ों तक श्वसन पथ के द्वारा होती है। जिसमें ऑक्सीजन प्राणवायु

टिप्पणी

फेफड़ो में पहुँचकर रक्त द्वारा शरीर की सर्वत्र कोशिकाओं में पहुँचती है। इस प्रकार कोशकीय श्वसन होता है। ठीक इसी प्रकार हमारी त्वचा में भी सूक्ष्म छिद्र होते हैं जिनके द्वारा ऑक्सीजन व कॉर्बनडाइ ऑक्साइड का आदान–प्रदान होता है। त्वचा से श्वसन के माध्यम से विषैले पदार्थ व पसीना शरीर से बाहर निकाला जाता है। सूती वस्त्र अच्छे अवशोषक होते हैं। वे विषैले द्रव्यों को अपने में शोषित कर लेते हैं। इसके अलावा सूती वस्त्रों के तन्तुओं में आपस में छोटे–छोटे छिद्र होते हैं, जिनसे वायु अंदर बाहर आ जा सकती है। अतः सूती वस्त्र वायु ग्रहण करने में सहायक होते हैं। इनके द्वारा शरीर अधिक मात्रा में ऑक्सीजन का ग्रहण कर पाता है। यह शरीर को शिथिल व सुखपूर्वक लंबे समय तक बैठने में सहायक होते हैं व सुकोमलता व शीतलता प्रदान करते हैं।

वायु की प्राप्ति का एक साधन वायु के आवागमन का निर्बाध होना है। जिसे वायु प्रवेश निकास व्यवस्था कहते हैं। अब हम इसके बारे में पढ़ेंगे।

**निवास स्थान में वायु प्रवेश– निकास व्यवस्था एवं सेवन**

वायु की उचित प्राप्ति के लिये हमें ऐसे घर में रहना चाहिये जिसमें वायु के आवागमन की उचित व्यवस्था हो। वायु का अन्दर आना व बाहर जाना बिना किसी रूकावट के होना चाहिए।

निवास स्थान (हमारे गृह, ग्राम, तथा नगर) में यदि वायु के आने का मार्ग हो व जाने का मार्ग न हो तो वायु का आवागमन उचित रूप से नहीं हो सकेगा। फलस्वरूप वायु अशुद्ध होने लगेगी। इसके अलावा आवास के पास कोई वायु को अशुद्ध करने वाले संयंत्र या कारखाने नहीं होने चाहिए।

इसके लिए निम्न मुख्य बातों पर ध्यान देना चाहिए–

1. निवास स्थान चारों ओर से खुला हो।
2. घर के सामने व पीछे के रास्ते व पथ चौड़े हों।
3. निवास स्थान की छतें ऊँची हों व दीवारें भी ऊँची हों।
4. गर्म हवा ऊपर उठने पर अंदर एकत्रित न होकर बाहर निकले व ठंडी हवा उसका स्थान ले ले, जिससे कमरे का तापमान संतुलित रहे।
5. वायु के समुचित प्रवाहण के लिये घर में जाली, खिड़की, झरोखे व रोशनदान हों जो एक दूसरे के सामने लगे हों।

भोजन बनाने के कक्ष में वायु निकास के लिये पंखों की व्यवस्था होनी चाहिए। जब प्रश्वास में वायु बाहर निकाली जाती है तो उसमें कार्बनडाइ ऑक्साइड की मात्रा अधिक होती है। यह विषैली गैस हल्की होने के कारण ऊपर उठती है। अतः दूषित वायु के निकलने के लिये वायु निकासक आवश्यक है व साथ ही शुद्ध वायु का प्रवेश भी हो जाता है। वायु के समीकरण

में वायु के ताप व आर्द्रता पर नियंत्रण होता है। इस प्रकार वायु के आवागमन को नियंत्रित कर ऋतुओं के अति प्रकोप से बचा जा सकता है।

अब आप यह समझ गये होंगे कि वायु के आवागमन की समुचित व्यवस्था होने पर बहुत से लाभ हो सकते हैं।

प्राणीमात्र को जीने के लिये शुद्ध वायु हो यह अति आवश्यक है। उचित रूप से वायु के प्रवेश व निकासी की व्यवस्था होने पर मुख्य रूप से निम्न लाभ मिलते हैं–

1. **अशुद्धियों पर नियंत्रण–**

   कई बार हमें ऐसा लगता है कि हम बहुत शुद्ध वातावरण में रह रहे हैं किन्तु ऐसा नहीं होता है ।हमारे घर के अंदर की वायु बाहरी वायु से ज्यादा अशुद्ध होती है। यदि वायु के प्रवेश व निकासी की उचित व्यवस्था होती है तब प्रदूषकों, जीवाणुओं, नमी व बुरी गंध से मुक्ति मिलती है।

2. **बिजली का व्यय –**

   यह बिजली के अधिक व्यय से बचाता है जिससे यह आर्थिक दृष्टिकोण से उत्तम उपाय है।

3. **नमी को हटाना –**

   यह नमी को हटाता है, जिससे जीवाणुओं की वृद्धि नहीं हो पाती है। इसके अलावा एलर्जी को भी रोकती है।

4. **तापमान को कम करना–**

   यह तापमान को कम करती है। जब एक स्थान पर ज्यादा लोग इकट्ठा होते हैं तब वहाँ का वातावरण गरम हो जाता है। यदि कमरे में हवा की निकासी व प्रवेश की पूर्ण व्यवस्था हो तो वहाँ पर अधिक देर तक रूकना आरामदायक हो जाता है।

5. **स्वास्थ्य संबंधी लाभ–**

चित्र 9.1: हवादार आवास

टिप्पणी

कमरे के अंदर की अशुद्ध वायु कई प्रकार के रोगों की उत्पत्ति की कारक होती है। जैसे—दमा, साईनोसाईटिस, सिरदर्द, एलर्जी, त्वचा में चकत्ते आदि। इन्हें एक अच्छी वायु प्रवेश निकासक व्यवस्था के द्वारा दूर किया जा सकता है ।

इस प्रकार उपरोक्त बिन्दुओं के आधार पर यह कह सकते हैं कि यदि निवास स्थान में वायु प्रवेश निकासक व्यवस्था समुचित होती है तो हमें लगातार शुद्ध वायु प्राप्त हो सकेगी।

## यूनिटगत प्रश्न 9.1

1. सही व गलत बताइये—

   क. वायु तत्व की उत्पत्ति जल तत्व से हुई है।

   ख. स्पर्श आकाश तत्व का गुण है।

   ग. प्राणायाम के द्वारा वायुतत्व का आदान—प्रदान होता है।

   घ. पवन स्नान उत्तम जल चिकित्सा है।

2. खाली स्थान भरिये :

   अ) उज्जायी प्राणायाम में उज्जायी का अर्थ ................................ होता है।

   ब) ढीले व आरामदायक वस्त्रों से ..................व ................. तत्व की प्राप्ति होती है।

   स) भोजन बनाने के कक्ष में वायु निकास के लिये ............की व्यवस्था होनी चाहिये।

## 9.4 व्यायाम से वायु सेवन तथा जीवन में व्यायाम का महत्व

प्रथम हम व्यायाम को समझते हैं कि, व्यायाम क्या है?

आयुर्वेद में महर्षि चरक के अनुसार :

*शरीर चेष्टा या चेष्टा स्थैर्यार्था बलवर्धिनी ।। देहव्यायाम् सङ.ख्याता।। (च.सू. 7/30)*

अर्थात् शरीर का वह अभीष्ट कर्म जो शरीर में स्थिरता एवं बल वृद्धि करता है, शारीरिक व्यायाम कहलाता है।

इसी प्रकार आयुर्वेद के महर्षि सुश्रुत व्यायाम की परिभाषा इस प्रकार देते है ।

**शरीरायासजननं कर्म व्यायामसंसितम् ।।**

सु.चि. 24/38

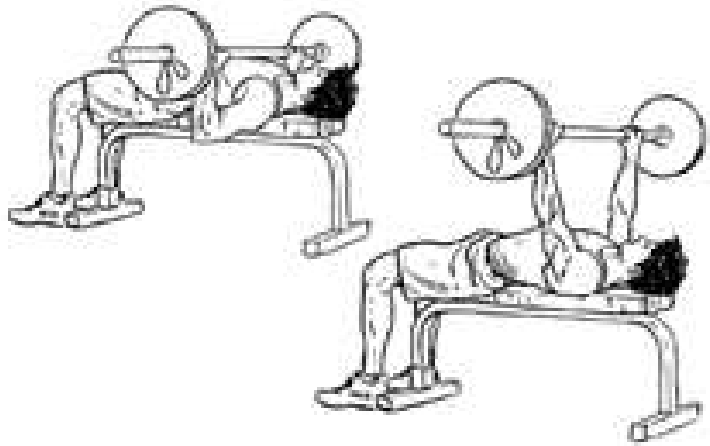

चित्र 9.2: व्यायाम

अर्थात् शरीर में थकावट उत्पन्न करने वाला कर्म व्यायाम कहलाता है । नियमित व्यायाम निसर्गोपचार का एक महत्वपूर्ण अंग है। व्यायाम से शरीर की पुष्टि होती है। व्यायाम का शरीर के भौतिक विकास, दृढ़ता व निरोगता में महत्वपूर्ण योगदान होता है।

## व्यायाम करने का उद्देश्य व महत्व–

शरीर को कांतिवर्धक, बलवर्धक, पुष्टिवर्धक बनाना ही इसका मुख्य उद्देश्य है। अंग–प्रत्यंग क्रियाशील बनते हैं, माँसपेशियां व संधियां मजबूत बनती हैं। शरीर में लघुता, स्थिरता व लचीलापन आता है और दोषमुक्त काया निर्मित होती है। यह शरीर को स्वच्छ व जीवाणु मुक्त बनाता है।

व्यायामकाल में शरीर के सभी अंग प्रत्यंगों में अचानक हलचल पैदा होने से वह क्रियाशील हो जाते हैं। इस कार्य में ऊर्जा की आवश्यकता होती है । इस आवश्यकता को पूरा करने के लिए रक्त उस विशेष स्थान की तरफ बहने लगता है, जिससे उस स्थान में ऊर्जा की पूर्ति होने लगती है । इस समय ऑक्सीजन की मांग बढ़ने लगती है। फेफड़े अपने कार्य की गतिशीलता को बढ़ाते हैं जिससे कार्य में तेजी आती है व श्वसन क्रिया की दर बढ़ जाती है। फलस्वरूप अधिक ऑक्सीजन का प्रवेश व विषैली गैस कार्बनडाई ऑक्साईड का निष्कासन होता है। इस प्रकार फेफड़ों में रक्त का शुद्धिकरण तेजी से होने लगता है यह शुद्ध रक्त हृदय के द्वारा समस्त शरीर के अवयवों में ऑक्सीजन रूपी ऊर्जा प्रदान करता है।

मनुष्य के लिए जिस प्रकार ऊर्जा की आवश्यकता के लिये भोजन आवश्यक है, उसी प्रकार व्यायाम करना भी जरूरी है। यह एक प्राकृतिक क्रिया है। जीव–जन्तु भी नैसर्गिक रूप से अंगड़ाई के रूप में यह क्रिया कर शरीर के निष्क्रिय अंगों को चुस्त बनाते हैं। कुत्ते, बिल्ली, व्याघ्र आदि इस क्रिया द्वारा ऊर्जा की प्राप्ति कर आलस्य को दूर भगाते हैं।

व्यायाम शरीर में रक्त के प्रवाह को तथा ऑक्सीजन की मात्रा को बढ़ाकर शक्ति, स्फूर्ति, बल, ओज, शारीरिक सौष्ठव व कांति को बढ़ाता है । नियमित व्यायाम से शरीर के छोटे–बड़े अंग चलायमान बनते हैं।

**व्यायाम के लाभ–**

*लाघवं कर्मसामर्थ्य स्थैर्यक्लेशसहिष्णुता ।।*

*दोषक्षयोऽग्निवृद्धिश्च व्यायामादुपजायते ।।* (च.सू. 7/32)

व्यायाम से शरीर पुष्ट होता है। कान्ति बढ़ती है, अंग–अंग प्रत्यंग सुडौल होते हैं। पेशियाँ दृढ़ हो जाती हैं। चर्बी का क्षय होता है, शरीर की शुद्धि होकर, स्थिरता, लघुता प्राप्त होती है।

- व्यायाम से आयुवर्धन आरोग्यता प्राप्त होती है।
- शरीर के अंग सुडौल बनते हैं।
- नित्य व्यायाम करने वाले व्यक्ति का पाचन संस्थान शक्तिशाली होता है।
- व्यायाम से शारीरिक रूप से कुरूप व्यक्ति भी रूपवान व दीर्घायु बनता है।
- व्यायाम से वजन कम होता है अतः मोटे व्यक्तियों के लिए यह हितकर होता है।
- व्यायाम से विषैले तत्व पसीने के रूप में शरीर से उत्सर्जित होते हैं। अतः यह शरीर की सफाई भी करता है।
- मॉंसपेशियां मजबूत होती हैं व शरीर की संधियाँ नित्य चलायमान बनी रहती हैं।

**व्यायाम के प्रकार–**

व्यायाम करने की विधि अनुसार उनके अलग–अलग नाम रखे गये हैं जैसे–

1. कुश्ती
2. कबड्डी
3. दंड बैठक
4. आसन
5. तैरना
6. टहलना
7. साइकिल चलाना
8. मुगदर चलाना
9. मैदान में खेल खेलना, बेडमिंटन, लॉनटेनिस, फुटबाल आदि।
10. नृत्य करना और कई प्रकार के विदेशी व्यायाम।
11. दौड़ लगाना , घुड़सवारी करना आदि।

आइए यहाँ कुछ व्यायामों के विषय में जानें–

टिप्पणी

## 9.4.1 टहलना

टहलना एक सर्वोत्तम व्यायाम माना जाता है। इसे परिभ्रमण भी कहते है। परिभ्रमण से शरीर को कोई कष्ट नहीं पहुॅचता है। यह सभी आयु वर्ग के व्यक्तियों के लिए, व्यायाम का एक आसान तरीका है।

चित्र 9.3: टहलना

आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रंथ सुश्रुत संहिता में टहलने का महत्व इस प्रकार बताया है।

*यतु चङक्रमणं नातिदेहपीडाकरं भवेत्।*

*तदायुर्बलमेधाग्नि प्रदामिन्द्रियबोधनम् ।। सु.चि. 24/80।।*

बहुत अधिक पैदल चलना, त्वचा के वर्ण, कफ, स्थूलता और सुकुमारता को नष्ट करता है परन्तु व्यायाम करने वाले अशक्त व्यक्तियों को नियमित रूप से परिभ्रमण के लिए जाना चाहिए।

- परिभ्रमण ना ज्यादा तेज व ना ज्यादा धीमा करना चाहिए।
- टहलते समय शरीर को सीधा रखना चाहिए।
- शरीर की आकृति को सामान्य बनाए रखते हुए मध्यम गति से टहलना चाहिए।
- टहलने से आयु, बल, मेधा और जठराग्नि वर्धन होता है।
- यह इन्द्रियों को चेतनता प्रदान करता है।

अतः टहलना एक अति उत्तम व्यायाम है, जिससे मनुष्य निरोगी, दीर्घायु होता है।

टिप्पणी

## 9.4.2 तैरना

तैरने की क्रिया पानी में होती है, जिसमें शरीर पानी पर एक सूखे पत्ते की भाँति तैरता है। तैरना एक श्रेष्ठ शारीरिक व्यायाम है। तैरने की क्रिया में व्यक्ति को पानी के बहाव के विपरीत दिशा में बल लगाना पड़ता है। यह एक सर्वांगीण व्यायाम है, जिससे शरीर के सभी भागों पर प्रभाव पड़ता है।

तैरने की क्रिया में ह्रदय की धड़कन की गति बढ़ जाती है, फलस्वरूप शारीरिक तनाव से मुक्ति मिलती है क्योंकि ह्रदय दर में वृद्धि होने से ऑक्सीजन की आवश्यकता बढ़ती है। और यह बढ़ी हुई ऑक्सीजन रक्तसंचार के माध्यम से सम्पूर्ण शरीर में पहुँचती है। फलस्वरूप संपूर्ण शरीर की कोशिकायें ऊर्जा से भर जाती हैं व जीवित हो उठती हैं। इस प्रकार शारीरिक ऊर्जा में वृद्धि होने से शारीरिक बल बढ़ता है, पेशियों में सशक्तता आती है और रक्त परिवहन तंत्र बलशाली बनता है। तैरना शारीरिक ही नहीं वरन् मानसिक स्वास्थ्य को भी बनाये रखता है।

चित्र 9.4: तैरना

**तैरने से होने वाले लाभ व उनका महत्व–**

1. तैरने की क्रिया एक पूर्ण व्यायाम है। इस क्रिया द्वारा ऑक्सीकरण की क्रिया बढ़ती है। जिससे शरीर की प्रत्येक कोशिका को ऊर्जा के रूप में ऑक्सीजन मिलती है।
2. ह्रदय गति की दर में भी तैरने से वृद्धि होती है। फलस्वरूप ह्रदय की पेशियाँ मजबूत होकर, ह्रदय को बलशाली बनाती है।
3. तैरने से माँसपेशियां मजबूत व लचीली बनती हैं। तैरने की क्रिया में तैराक द्वारा अधिक से अधिक माँस पशियों का उपयोग होता है।
4. अस्थियों के वजन में वृद्धि– तैरने से हड्डियों के अस्थिर खनिज घनत्व BMD (Bone mineral density) बढ़ती है।
5. इससे शरीर लचीला व सुडौल बनता है। तैरने से शरीर में लचीलापन, खिंचाव, तनाव आदि होता है जिससे शरीर का लचीलापन बढ़ता जाता है।

टिप्पणी

6. इससे ऊर्जा का व्यय होता है व वजन कम होता है। तैरने की क्रिया में बैक स्ट्रोक में 80 कैलोरी, फ्रीस्टाईल में 100 कैलोरी व बटरफ्लाई में 150 कैलोरी ऊर्जा खर्च होती है। इस प्रकार कैलोरी खर्च कर वजन कम करने का यह उत्तम उपाय है।

7. यह दमा रोग का उपचार है—

दमा रोग में फेफड़ों व श्वसन पथ में रूकावट या ऑक्सीजन की कमी से श्वास लेने में कठिनाई होती है। तैरने के नियमित अभ्यास से प्राणायाम की भाँति फेफड़ों की क्षमता बढ़ती है, जिससे ऑक्सीजन की मात्रा में भी उत्तरोत्तर वृद्धि होती है। इस प्रकार यह दमा रोग के उपचार में भी सहायक होता है।

8. **तैरने से तनाव व अवसाद** कम होता है—

तैरने से योग की भांति मन प्रसन्न होता है। इससे नकारात्मक विचार खत्म होते हैं व व्यक्ति भावनात्मक रूप से स्वयं को स्वस्थ महसूस करता है।

तैरने की क्रिया के दौरान खुशी के हॉरमोन जिसे एन्डोरफिन कहते हैं, स्रावित होता है और रक्त के माध्यम से समस्त शरीर में फैलकर कोशिकाओं को स्वस्थ बनाता है, जिससे अवसाद, तनाव जैसे मानसिक विकार दूर होते है।

9. नियमित तैरने से व्यक्ति दीर्घायु होता है—

नियमित तैरने से व्यक्ति की आयु में वर्धन होता है। शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ती है व जठराग्नि की वृद्धि होती है ।अन्तः स्रावी ग्रंथियों के हारमोन उचित मात्रा में स्रावित होते हैं व शारीरिक तंत्र सुचारू रूप से क्रियान्वित होते हैं।

तैरने की क्रिया से त्वचा व शरीर सुंदर व कांतियुक्त होता है। त्वचा स्वस्थ होती है विजातीय द्रव्य समयानुसार शरीर से उत्सर्जित होते रहते हैं व शारीरिक क्रियाओं के समुचित रूप से होने पर शरीर सुंदर, बलशाली व कांतियुक्त हो जाता है।

**तैरने के लिये कुछ उपयुक्त बातें—**

- हमें तैरने के लिये सुरम्य वातावरण व साफ नदी के पानी, तालाब या तरण ताल का चुनाव करना चाहिए।
- तैरने से पूर्व शरीर को सूक्ष्म व्यायामों के द्वारा या सूर्यनमस्कार आदि के द्वारा गर्म कर लेना चाहिए।
- पीने के पानी व फलों के रस आदि की उपलब्धता होनी चाहिए।
- यदि प्रारंभिक अवस्था है व पहले कभी यह क्रिया नहीं की हो तो कम अभ्यास से शुरू करना चाहिए।
- यदि पहले कभी लम्बे समय तक व्यायाम नहीं किया है तो तैरना शुरू करने से पहले अपने चिकित्सक का परामर्श लेना चाहिए।

टिप्पणी

इस प्रकार हम देखते हैं कि तैरने के द्वारा हमें कई शारीरिक व मानसिक लाभ प्राप्त होते हैं। अतः तैरना हमारे जीवन का महत्वपूर्ण भाग होना चाहिये।

## 9.4.3 स्वास्थ्य के लिये साइकिल चलाने का महत्व

साइकिल क्या है। इसका हमारे स्वास्थ्य से क्या संबंध है। साइकिल चलाने के क्या फायदे है अब हम इस बारे में जानेंगे।

### साइकिल– पूर्ण व्यायाम का साधन

साइकिल एक दुपहिया वाहन है। इसका आविष्कार 19 वीं शताब्दी में हुआ था और इसका उपयोग एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाने के अलावा व्यायाम के लिये भी होता है।

साइकिल चलाना अपने आप में एक पूर्ण व्यायाम है। नियमित रूप से साइकिल चलाने से हमारा स्वास्थ्य ठीक रहता है।

साइकिल एक पूर्ण व्यायाम का साधन है। इससे मुख्य रूप से ऑक्सीकरण की क्रिया में वृद्धि होती है। शरीर में उपस्थित ऊर्जा का व्यय होता है । भोजन का चयापचय ठीक प्रकार होता है व हृदय, फेफड़े आदि सामान्य से अधिक क्रियाशील हो जाते हैं और उनकी क्षमता बढ़ जाती है। ऑक्सीजन का स्तर शरीर में बढ़ने लगता है, जिससे सभी शारीरिक तंत्र सुचारू रूप से कार्य करने लगते हैं। विषैले तत्वों का भी शरीर से नियमित निष्कासन होता रहता है।

चित्र 9.5: साइकिल चलाना

साइकिल चलाने से मुख्य रूप से निम्न लाभ होते हैं :

- शरीर मजबूत व सुदृढ़ होता है।
- हृदय व रक्तवाहिकाओं की क्रियाशीलता बढ़ जाती है।

टिप्पणी

- कंकाल व पेशीयतंत्र मजबूत होता है।
- त्वचा कांतिवान होती है क्योंकि पसीने के द्वारा विजातीय तत्व बाहर निकलते हैं।
- यह फेफड़ों का एक अच्छा व्यायाम है, जिससे उनकी क्षमताओं में वृद्धि होती है। विजातीय द्रव्य बाहर निकल जाते हैं।
- शारीरिक व मानसिक तनाव कम होता है जिससे निद्रा अच्छी तरह आती है। मस्तिष्क में रक्त का संचार बढ़ने से तंत्रिका तंत्र अच्छे से कार्य करता है। जिससे शारीरिक व मानसिक संतुलन बना रहता है। शरीर में जमा चर्बी की मात्रा कम होती है। अतः मोटापे को कम करता है।
- अस्थियों व संधियों को मजबूत कर संधियों को चलायमान रखता है। चिंता, क्रोध, शोक, अवसाद आदि को कम करता है।

**विशेष बिमारियों में लाभ–**

नियमित साइकिल चलाने से बहुत से स्वास्थ्य संबंधी रोगों को रोका व ठीक किया जा सकता है। जिनमें निम्न रोग मुख्य हैं :

1. **मोटापा व उसका नियंत्रण–**

   साइकिल चलाने से हमारी चयापचय का दर बढ़ जाती है। जिससे माँसपेशियां सुदृढ़ होती हैं व वसा का पाचन होता है। यह शरीर में जमा चर्बी को दूर करती है।

   जहाँ साइकिल से एक घंटे में 300 कैलोरी ऊर्जा का व्यय होता है, वहीं व्यायाम से एक सप्ताह में 2000 कैलोरी ऊर्जा का व्यय होता है। इस प्रकार चर्बी कम करने का सुगम व आसान तरीका है।

2. **मधुमेह नियंत्रण–**

   साइकिल के द्वारा मधुमेह का नियंत्रण भी किया जा सकता है। इस क्रिया के दौरान ऊर्जा की आवश्यकता होती है। यह ऊर्जा रक्त में उपस्थित ग्लूकोज व यकृत तथा पेंशियों में जमा ग्लाइकोजन के द्वारा ली जाती है। इस प्रकार ऊर्जा के व्यय से ग्लूकोज व ग्लाईकोजन का भी व्यय होता है।

3. **गठिया रोग में उपयोगी–**

   अस्थि व संधि रोगों में जहाँ जोड़ों में सूजन व अक्रियाशीलता आ जाती है, ऐसी स्थिति में साइकिल चलाने से सूजन कम होकर, वे चलायमान हो जाते हैं।

4. **कैंसर रोग में उपयोगी–**

   आंत के कैंसर, स्तन के कैंसर में साइकिल चलाने से रोगी में इस रोग की तीव्रता कम हो जाती है।

टिप्पणी

5. **मानसिक रोगों पर नियंत्रण—**

साइकिल चलाने से कई प्रकार के मानसिक रोगों को दूर करने में सहायता मिलती है। इससे तनाव व चिंता दूर होते हैं और व्यक्ति प्रसन्न चित्त होने लगता है। इस प्रकार उपरोक्त लाभों को समझते हुए पूर्ण स्वास्थ्य बनाये रखने के लिये यह एक उत्तम व्यायाम है।

**व्यायाम करने के नियम व लक्षण—**

1. मनुष्य को अपनी आयु, बल, प्रकृति, देशकाल, आहार—विहार व रोगानुसार विचार करके ही व्यायाम का चयन करना चाहिए।
2. व्यायाम के काल में जब श्वसन की क्रिया मुख द्वारा शुरू हो जाए तब बलार्ध समझना चाहिए। इस कथन का आशय यह है कि व्यायाम अपनी शक्ति से आधी शक्ति तक ही करना चाहिए।
3. शरीर से पसीना आना, हृदय गति में वृद्धि, श्वास गति में वृद्धि और अंग प्रत्यंगों में हल्केपन का अनुभव होना व्यायाम के मुख्य लक्षण हैं।

**व्यायाम से हानि—**

ऐसा कहा जाता है कि ''अति सर्वत्र वर्जयते'' ।।

अर्थात् अति सभी जगह वर्ज्य है। अति से लाभ के बजाय हानि होने की संभावना होती है।

अतः व्यायाम अपनी शक्ति अनुसार ही निर्देशित है। अति से अधिक व्यायाम करने पर शारीरिक व मानसिक हानि होती है। अधिक व्यायाम से निम्न व्याधियां उत्पन्न हो सकती हैं जैसे: क्षयरोग, प्यास, भोजन में अरूचि, शरीर में सूजन आ जाना व श्वास रोग या दमा का होना ।

अति व्यायाम से शरीर में वात दोष की वृद्धि हो जाती है। अतः व्यायाम का अतिसेवन वर्जित है।

**व्यायाम के अयोग्य व्यक्ति**

अब हम उन व्यक्तियों के बारे में जानेंगे जिन्हें व्यायाम नहीं करना चाहिए :

- भूख—प्यास से ग्रसित।
- जो भय से आक्रान्त हो।
- जो क्रोध व परिश्रम से आक्रांत हो।
- जिनकी पाचन क्रिया ठीक प्रकार कार्य न कर रही हो,
- जिसे चक्कर आ रहे हों।
- जो व्यक्ति वातप्रकृति वाला हो। टी.बी या क्षयरोग से पीड़ित व्यक्ति को भी व्यायाम नहीं करना चाहिए।

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 9.2

रिक्त स्थानों की पूर्ति कीजिए :—

1. अ) व्यायाम शरीर में ................................ और ................................ वृद्धि करता है।

   ब) नियमित व्यायाम ....................................... उपचार का एक महत्वपूर्ण अंग है।

## 9.5 मालिश या शरीर मर्दन

शरीर की मालिश या मर्दन प्राकृतिक चिकित्सा का एक अति उपयोगी अंग माना जाता है। आयुर्वेद में इसे अभ्यंग कहते हैं। यह पंचकर्म चिकित्सा का महत्वपूर्ण अंग है। जिस प्रकार आंतरिक पुष्टिकरण भोजन के द्वारा होता है, उसी प्रकार बाह्यपुष्टिकरण मर्दन के बिना अधूरा है। जब शरीर का मर्दन होता है तो मर्दन करने वाले तेलों के साथ मर्दन करने वाले व्यक्ति के शरीर की ऊर्जा भी स्थानान्तरित होती है, जिससे स्पर्श चिकित्सा द्वारा आनन्द की अनुभूति होती है । सामान्यतः जब हमें किसी स्थान पर चोट लग जाती है तो स्वतः ही हमारा हाथ उस स्थान पर जाकर उसे थपथपाने लगता है। इससे कुछ समय के लिए राहत का अनुभव होता है।

एडोल्फ जस्ट के अनुसार शरीर को थपथपाने या मलना, पीड़ा दूर करने की सबसे आदिम तथा प्राकृतिक विधि है।

थपथपाने की क्रिया में स्नेह व प्यार का भी महत्व होता है, क्योंकि बिना प्रेमभाव के इस कार्य को करने पर अच्छी अनुभूति नहीं होगी। जीवन शक्ति का सकारात्मक प्रभाव तभी होगा जब उसे निःस्वार्थ भाव व प्रेमभाव से किया जाए। ऐसी अवस्था में दुर्बल व्यक्ति भी बलवादी हो जाता है।

शहर की अपेक्षा ग्रामीण क्षेत्र में रहने वाले लोग अधिक बलवान होते हैं क्योंकि इनमें प्रेमभाव व ईश्वर के प्रति आस्था होती है। वे करूणा व दया के भंडार होते हैं और उनके चित्त शुद्ध होते हैं। अतः उनसे सकारात्मक ऊर्जा की प्राप्ति होती है।

**मालिश की अवधारणा व आवश्यकता—**

मलिश निम्न प्रकार से की जाती है :

1. स्निग्ध व रूक्ष या आर्द्र व शुष्क—

   यह घी, तेल या जल से व इनके बिना भी होती है।

2. उद्वर्तन व उत्सादन—

सूखे चूर्ण व उबटन से की जाने वाली मालिश त्वचा में स्थित मलों को शीघ्रता से बाहर निकालती है।

चित्र 9.6: मालिश—1

टिप्पणी

मालिश करने के तरीके में भेद होने से यह 5 प्रकार की होती है :

- रगड़ना– शरीर को सुडौल बनाने के लिये
- गुंथन–शरीर के अनुचित कड़ेपन को दूर करने के लिये
- मुक्की
- थपथपाना
- कंपन

चित्र 9.7: मालिश–2

## मालिश करने की विधि–

मालिश कराने वाले को पहले पेट के बल लिटाकर दोनों हाथों को ऊपर रखना चाहिए। शरीर को बिल्कुल ढीला छोड़ना चाहिए। शरीर को सीधा रखते हुए सिर दाँयी या बाँयी तरफ रखना चाहिए।

## पीठ की मालिश –

- पीठ पर रीढ़ की हड्डी पर नीचे की तरफ हथेली से दोनों ओर गोलाकार घुमाकर मालिश करनी चाहिये। हथेली से थपथपी देनी चाहिए।

चित्र 9.8: पीठ मालिश

- फिर ऊपर की ओर दोनों तरफ पसलियों में गोलाकार मालिश करनी चाहिए।
- फिर नीचे से ऊपर गर्दन तक सीधी मालिश करनी चाहिये।

टिप्पणी

- अंगूठों से नीचे से ऊपर की तरफ दबाव देते हुए मर्दन करना चाहिए।
- अंगूठों से पसलियों पर एक सिरे से दूसरे सिर तक मर्दन करना चाहिये।
- समस्त पीठ व रीढ़ की हड्डी पर थपकी देनी चाहिये।

समस्त पीठ पर नीचे से ऊपर मुक्की मारनी चाहिये। इस प्रकार गोलाकार मालिश, अंगूठों से दबाव, थपकी, मुक्की आदि का प्रयोग कर मर्दन क्रिया की जाती है।

**उदर में मालिश के लिये —**

- प्रथम नाभि के चारों ओर बांयी से दाहिनी ओर हथेली से मालिश करनी चाहिए।
- नाभि को मध्य में बार—बार दबाकर छोड़ना चाहिए। पेट के ऊपरी भाग में गोल घुमाकर मालिश करनी चाहिए।
- नाभि भाग से दोनों ओर हथेलियों व अंगुलियों के द्वारा दबाते हुए पीठ तक मालिश करनी चाहिये।

**बाहों की मालिश—**

आइए अब जाने, हमें बाहों की मालिश कैसे करनी चाहियेः

- बाहों का मर्दन बारी—बारी से किया जाता है।
- बाहों की मालिश के लिये नीचे से ऊपर की तरफ मालिश करनी चाहिये।

चित्र 9.9: उदर मालिश

**टांगों की मालिश—**

टांगों में घुमावदार मर्दन करना चाहिये। तलवों व घुटने की मालिश हथेली से करनी चाहिये। टांगों में माँसपेशियों की उत्पत्ति व अंतिम भाग कहाँ जुडा होता है उसकी बनावट के अनुसार ही मालिश की जानी चाहिये।

टिप्पणी

**सिर की मालिश—**

- हथेली पर तेल लगाकर सिर के तल भाग पर तेल को डालकर थपकी देनी चाहिये।
- फिर अंगुलियों से पूरे सिर में कंपन करना चाहिये।
- बालों के मूल भाग पर अंगुलियों के सिरों से हल्का—हल्का मलते हुए मर्दन करना चाहिये।
- गर्दन के पीछे दोनों तरफ अंगुलियों से दबाव देते हुये मालिश करनी चाहिए।

चित्र 9.10: सिर की मालिश

मालिश हो जाने के पश्चात् गुनगुने पानी से स्नान करना चाहिये व कुछ समय के लिये विश्राम करना चाहिए।

**मालिश की आवश्यकता एवं उसके आधारभूत लाभ**

- प्राकृतिक मर्दन के द्वारा शरीर सुंदर व सुडौल बनता है।
- माँसपेशियों में लचीलापन व बल की वृद्धि होती है।
- मर्दन से ऊष्मा, ऊर्जा व जीवनी शक्ति की प्राप्ति होती है।
- रक्त संचार बढ़ता है व रक्त द्वारा त्वचा को पोषक तत्वों की प्राप्ति होती है।
- मर्दन से विषैले द्रव्यों का निष्कासन होता है।
- मालिश से वेदना व सूजन दूर होती है।
- शरीर कोमल, त्वचा कांतियुक्त व स्वस्थ बनती है।
- मालिश से शरीर की रूक्षता कम होती है व वातदोष दूर होता है।
- अस्थि व संधियाँ चलायमान हो जाती हैं।
- मर्दन से कार्य को करने उत्साह बढ़ता है व आरोग्य प्राप्त होता है।

## यूनिटगत प्रश्न 9.3

1. मालिश को आयुर्वेद में कहते हैं :

   अ. मर्दन

टिप्पणी

ब. अभ्यंग

स. स्वेदन

द. उपरोक्त में से कोई नहीं

2. मालिश से शमन होता है।

अ. वातदोष

ब. पित्तदोष

स. कफ दोष

द. त्रिदोष

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट में हमने सीखा किः

- मानव शरीर को स्वस्थ बनाए रखने के लिए पंचमहाभूतों में महत्वपूर्ण दूसरे तत्व वायु की उत्पत्ति आकाश से हुई है व यह जीवनी क्रियाओं के लिए अति महत्वपूर्ण तत्व है।
- वायु के द्वारा ही शरीर की समस्त प्रणालियां कार्य करती हैं।
- पवन स्थान के उचित काल में लाभों के बारे में जानकारी मिली।
- वायु के स्थान भेद से पांच प्रकार होते हैं प्राण, उदान, समान, व्यान, अपान व दिशा भेद से पूर्वी, पश्चिमी, उत्तरी व दक्षिणी में विभाजित है। वह चेष्टाओं की प्रवर्तक है व मन की प्रणेता व नियंत्रक भी है।
- अशुद्ध वायु से सिर दर्द, आलस्य, अरुचि आदि रोग होते हैं।
- प्राणायाम, व्यायाम, तैरना, साइकिल चलाने से वायु तत्व की प्राप्ति होती है।

## यूनिटांत प्रश्न

1. वायु के विभिन्न प्रकार बताइए।
2. पवन स्नान पर प्रकाश डालिए।
3. तैरने से होने वाले लाभ व उनके महत्व पर चर्चा कीजिए।
4. वायु तत्व चिकित्सा की अवधारणा पर प्रकाश डालते हुए उसके महत्व को समझाइए।

# यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

## 9.1

1. क. गलत

   ख. गलत

   ग. सही

   घ. गलत

2. अ) विजयी

   ब) आकाश, वायु

   स) पंखों

## 9.2

1. अ) रक्त प्रवाह, ऑक्सीजन

   ब) निसर्गोचार

## 9.3

ब) अभ्यंग

अ) वातदोष

# 10

# अग्नि तत्व (सूर्यकिरण) चिकित्सा

पिछली यूनिट में हम आकाश तथा वायु तत्व के बारे में पढ़ चुके हैं। अब हम पंचमहाभूतों में उपस्थित तीसरे तत्व को जानेंगे। अग्नि सृष्टि के उपादान पंच तत्वों में तीसरा उपयोगी तत्व है। आकाश और वायु की तरह यह अदृश्य तत्व नहीं है। अग्नि को अग्निदेव मानकर उनकी पूजा अर्चना का विधान शास्त्रकारों ने बताया है। अग्नि तत्व की उत्पत्ति वायु तत्व से हुई है। समस्त सृष्टि का दर्शन, भोजन का पाचन व कई प्रकार की शारीरिक व मानसिक क्रियाएं सूर्य से प्राप्त अग्नि तत्वों के द्वारा ही संपादित होती हैं। अतः इस यूनिट में हम अग्नि तत्व के बारे में अध्ययन करेंगे।

## उद्देश्य

इस यूनिट का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- अग्नि तत्व की अवधारणा पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- अग्नि तत्व की उत्पत्ति व उसकी प्राप्ति के साधन, समझा सकेंगे;
- आतप स्नान, उसका उचित काल व सावधानियां स्पष्ट कर पाएंगे;
- वर्ण चिकित्सा व सूर्य प्रकाश का महत्व समझा सकेंगे;
- इन्फ्रारेड व पराबैंगनी किरणें जो चिकित्सा में सहायक हैं, उनका उल्लेख कर सकेंगे;
- सौर मंडल व नवग्रहों के रंग व प्रकृति का वर्णन कर सकेंगे।

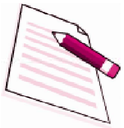

टिप्पणी

## 10.1 अग्नि तत्व की अवधारणा

प्रिय शिक्षार्थियो, पंचमहाभूतों में अग्नि तत्व का तीसरा स्थान है। अग्नितत्व की उत्पत्ति वायु से हुई है।

चित्र 10.1: अग्नि

**वायुराग्नि**

आकाश व वायु की तरह अग्नि तत्व अदृश्य न होकर दृश्य तत्व है। हिन्दू धर्म में अग्नि को देवता माना जाता है व उसकी पूजा की जाती है। सूर्य की किरणें प्राणी मात्र के जीवन का महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। प्राणी मात्र के शारीरिक व मानसिक विकास में सूर्य का महत्वपूर्ण योगदान है। अग्नितत्व की प्राप्ति का स्थान सूर्य ही है। ऋग्वेद के प्रथम मंत्र 'अग्नि मीडे पुरोहितम्' आदि में ईश्वर के प्रत्यक्ष रूप अग्नि की ही प्रार्थना की गयी है।

## 10.2 हमें अग्नि तत्व कहाँ से प्राप्त होता है?

अग्नितत्व की प्राप्ति सूर्य से ही है। अग्नि तत्व की तन्मात्रा रूप है और इन्द्रिय नेत्र है। सूर्य के प्रकाश के अभाव में प्राणीमात्र बंधा है वह किसी भी वस्तु को देख नहीं सकता है। भारतवर्ष में आदिकाल से ही सूर्य की पूजा अर्चना की जाती है और इसे ईश्वर का नेत्र माना गया है। यही वह ईश्वरीय शक्ति है जिसके द्वारा प्राणीमात्र जगत का दर्शन करता है।

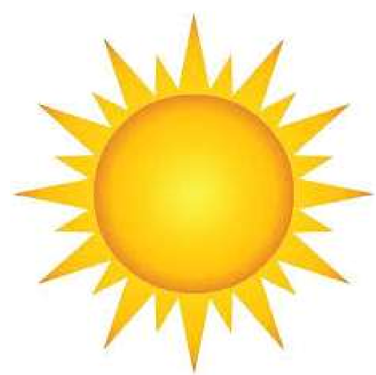

चित्र 10.2: सूर्य

| सूर्य के द्वारा ही प्रकाश, गर्मी, बल, दीर्घायु प्राप्त होती है। |
|---|

यजुर्वेद में कहा गया है–

*'चक्षोः सूर्यरिजायत्'* अर्थात् सूर्य भगवान का नेत्र है। ज्योतिषशास्त्र के अनुसार भी सूर्य के चारों ओर शेष ग्रह घूमते रहते हैं। ये सूरज का परिवार है, जिसे सौरपरिवार कहते हैं। पुराणों में सूर्य की सात रश्मियों (वर्णों) को सप्तमुखी घोड़े की संज्ञा दी गई है।

सूर्य चिकित्सा शरीर में अग्नितत्व वर्धन की महत्वपूर्ण चिकित्सा है।

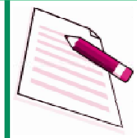

टिप्पणी

## 10.2.1 धूप स्नान (आतप स्नान)

आतप या धूप स्नान का तात्पर्य, सूर्य के खुले प्रकाश में निर्वस्त्र स्नान से है। सूर्य चिकित्सा, अग्नितत्व प्राप्ति का एक महत्वपूर्ण स्रोत है। स्वास्थ्य वर्धन व व्याधिहरण के लिये, यह चिकित्सा उत्तम मानी गई है।

हम देखते हैं कि, प्रकृति में पाये जाने वाले जीव–जन्तु, पेड़–पौधों को यदि, अंधकार में रख दिया जाये, तो वे पीले पड़ जाते हैं, पेड़–पौधे मुरझा जाते हैं। अतः सौर ऊर्जा की आवश्यकता जीव–जन्तु, पेड़–पौधों सहित सभी को होती है।

प्रकृति ने प्रत्येक जीव–जन्तु को, निर्वस्त्र ही इस जगत में भेजा था। हमने शरीर को वस्त्रों से ढक लिया है। बिना वस्त्रों के त्वचा के रोमकूपों में ऊर्जा का आदान–प्रदान होता रहता है।

सूर्य के प्रकाश से त्वचा में विटामिन डी का निर्माण होता है, जो हमारी हड्डियों के लिये आवश्यक तत्व है। प्रकृति में रोगोत्पादक जीवाणुओं के नाश के लिये सूर्य की रश्मियां अति आवश्यक है।

क्या आप जानते हैं कि, हिपोक्रेट्स, जो आधुनिक चिकित्सा के जनक माने जाते हैं, वे अपने रोगियों को सूर्यस्नान कराते थे। क्योंकि सूर्य की किरणों में विषनाशक शक्ति होती है। और यह सत्य है कि, सूर्य की किरणों में, खुले आसमान के नीचे विचरण करने वाले मनुष्य कभी रोगी नहीं होते हैं।

अतः मनुष्य को आतप स्नान (Sunbath) करना चाहिए।

चित्र 10.3: आतप स्नान

आतप स्नान से हमें, क्या–क्या प्राप्त होता है? आइये जानें–

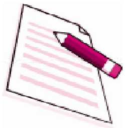

टिप्पणी

## अ) विटामिन–डी

विटामिन डी एक जीवनीय तत्व है, जो सूर्य की अल्ट्रावॉयलेट किरणों के, मानव त्वचा के संपर्क में आने पर बनता है। यह वसा में घुलनशील होता है। प्राणियों की त्वचा में हाईड्रोकोलेस्ट्रॉल नामक स्टेरॉल होता है जो सूर्य की अल्ट्रावॉयलेट किरणों के संपर्क में आने पर विटामिन डी में परिवर्तित हो जाता है।

यही कारण है कि सूर्य प्रकाश से दूर, अंधेरे मकानों में रहने पर विटामिन डी की शरीर को प्राप्ति नहीं हो पाती है, इसकी कमी से बच्चों में रिकेट्स व वयस्कों में अस्टियोमलेशिया नामक रोग हो जाता है, जिसमें अस्थियाँ कोमल व टेढ़ी हो जाती हैं।

विटामिन डी कैल्शियम अवशोषण में सहायक होता है और कैल्शियम हड्डियों का एक प्रमुख तत्व है। अतः विटामिन डी अतिआवश्यक जीवनीय तत्व है जो दूध, अंडे की जर्दी, मक्खन, घी व मछली के यकृत में पाया जाता है। हमारे शरीर में विटामिन डी की पर्याप्त मात्रा बनाए रखने के लिये आवश्यक है कि, हम रोजाना आतप सेवन करें, ताकि वह विटामिन, जो हमें प्रकृति से बिना किसी धनव्यय के मिल सकता है, उसे हम सहजता से प्राप्त कर सकें।

## ब) इन्फ्रारेड किरणें **(IR Rays)**

जब श्वेत प्रकाश किरण को प्रिज्म या त्रिपार्श्व शीशे से गुजारा जाता है, तब किरण सप्तरंगों में विभाजित हो जाती है, जिसमें पहला बैंगनी व अंतिम लाल रंग होता है। इन दोनों ही किरणों के सिरों के बाहर अन्य किरणें भी होती है जो नग्न आंखों द्वारा दिखाई नहीं देती हैं। बैंगनी किरणों से पूर्व  की लाल किरणों के पश्चात् की किरणें क्रमशः पराबैंगनी व इन्फ्रारेड किरणें कहलाती हैं। यह किरणें सुबह के समय शरीर पर अत्यधिक लाभ पहुँचाती हैं।

प्रकाश विश्लेषण पर ये किरणें, इस प्रकार दिखाई देती हैं।

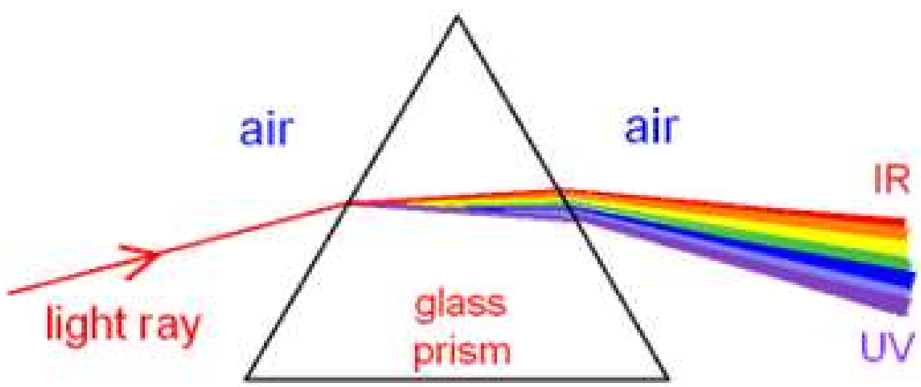


चित्र 10.4: प्रकाश विश्लेषण

टिप्पणी

सूर्य की किरणों में 80 प्रतिशत लाल किरणें होती हैं। ये किरणें त्वचा द्वारा 100 प्रतिशत तक सोख ली जाती हैं। अतः यह शरीर में अग्नितत्व का वर्धन करती हैं।

**लाल किरणों से लाभ–**

1. शरीर में गर्मी प्रदान करती हैं अतः ठण्ड के दिनों में फायदा मिलता है।
2. रक्तहीनता व गठिया आदि रोगों में विशेष लाभदायी होती हैं।
3. इनके प्रयोग से जोड़ो के दर्द में अतीव लाभ मिलता है।
4. शरीर की सूजन को कम करने में, इन्फ्रारेड बल्ब का उपयोग, सिकाई के लिये किया जाता है।
5. लाल किरणों से तप्त तेल, जोड़ों की सूजन व वेदना कम करने के लिये उपयोग में लाया जाता है।
6. ये शरीर की कोशिकाओं को चेतना प्रदान करती हैं।
7. पक्षाघात या लकवे जैसे गंभीर रोगों में, लाल किरणों की चिकित्सा से अत्यंत लाभ मिलता है।

### स) पराबैंगनी किरणें (Ultraviolet Rays) (नीलोत्तर किरणें)

आपको यह जानना चाहिए कि, सूर्य में अनेक किरणें पाई जाती हैं, किन्तु पराबैंगनी किरणों का प्रभाव अत्यधिक होता है। पराबैंगनी किरणें, सूर्य किरणों में उपस्थित होती हैं। अतः अग्नितत्व की प्राप्ति में इन किरणों का विशेष महत्व है। इस किरण के प्रभाव से अति क्लिष्ट जीवाणु भी नष्ट हो जाते हैं। अतः यह रोगनाशक के रूप में उपयोग में लाई जाती हैं। हमारे पौराणिक ग्रंथों में सूर्य को ईश्वर का रूप माना गया है अर्थात् अनन्त शक्तियुक्त। सूर्य किरणों में उपस्थित पराबैंगनी किरणें जीवनीय शक्ति को बढ़ाने वाली होती हैं।

पराबैंगनी किरणें सूर्योदय के समय सूर्य की किरणों में कुछ समय के लिये अल्प मात्रा में उपस्थित होती हैं। अतः प्रातःकाल नंगे सिर अल्पवस्त्रों में शुद्ध वातावरण में बाहर निकलकर इस प्रसाद को ग्रहण करना चाहिए। इसी बात को ध्यान में रखते हुये सूर्योदय के समय पूर्व दिशा की ओर मुख करके जल चढ़ाकर सूर्य की उपासना का निर्देश दिया जाता है।

**पराबैंगनी किरणों से लाभ–**

1. विटामिन डी के निर्माण में सहायक होती हैं।
2. जीवनशक्ति बढ़ाकर अस्थियों को मजबूती प्रदान करती हैं।
3. इनमें रोगनाशक क्षमता होती है।

4. त्वचा के रोग फोड़े–फुन्सियों, जीर्ण रोग व संक्रामक रोगों को नष्ट करती हैं।
5. गहरे घावों में भी आसानी से पहुँच कर, रोगों के हेतुओं का नाश करती हैं।
6. गठिया आदि रोगों में चमत्कारी प्रभाव दिखाती हैं।
7. स्त्रियों में मासिक धर्म के दौरान होने वाली पीड़ा में इन किरणों के प्रभाव से पीड़ा कम हो जाती है।
8. रोगनाश में इन किरणों का महत्वपूर्ण स्थान है।

## 10.2.2 आतप स्नान का उचितकाल एवं सावधानियाँ

अग्नितत्व के प्राप्ति स्थान को जानने के पश्चात् हम इसके उचित समय और सावधानियों पर गौर करेंगे। सूर्य की किरणों द्वारा मिलने वाले लाभों को प्राप्त करने के लिये, हमें निम्न निर्देशों का उचित रूप से पालन करना चाहिये :

1. आतप स्नान के लिये सिर, मुख, गर्दन को भली प्रकार धोकर सिर को ढक लेना चाहिए।
2. आतप स्नान के लिये सुबह व शाम की हल्की किरणें ही लेनी चाहिए।
3. दिन की तेज धूप में आतप स्नान नहीं करना चाहिये, इससे त्वचा जल सकती है।
4. धूप स्नान कम समय से शुरू करते हुये धीरे–धीरे बढ़ाना चाहिये व एक घंटे से ज्यादा समय तक धूप स्नान नहीं करना चाहिए।
5. धूप स्नान पीठ के बल, पेट के बल , दांयी, बांयी करवट पर बराबर समय के लिये लेना चाहिये।
6. खुले व स्वच्छ वातावरण युक्त स्थान पर आतप स्नान लेना चाहिए।
7. सूर्य स्नान भोजन के 1 – 2 घंटे के पश्चात् लेना चाहिए।
8. धूप स्नान करते समय स्वच्छ वस्त्र कम संख्या में पहनने चाहिये।
9. आतप स्नान के पश्चात् शीतल जल से स्नान कर स्वच्छ वस्त्र से पोंछना चाहिए।
10. स्नान के पश्चात् थोड़ी देर शीघ्रता से टहलना चाहिए।
11. ठंड के दिनों में सूर्यस्नान दोपहर 12 बजे से 2 बजे के मध्य व गर्मियों में 8–10 बजे के बीच करना चाहिये। शाम को सूर्यास्त के 1 – 2 घंटे पूर्व यह कार्य करना चाहिए।
12. दमा व श्वास संबंधी रोगों में आतपस्नान से लाभ मिलता है। हृदय रोग से पीड़ित व्यक्ति और ज्वरादि में आतप स्नान वर्जित है।

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 10.1

1. आतप स्नान किसे कहते हैं?

   ..............................................................................................................

   ..............................................................................................................

2. विटामिन डी का मुख्य स्रोत बताइये।

   ..............................................................................................................

   ..............................................................................................................

3. हमें अग्नितत्व कहाँ से प्राप्त होता है?

   ..............................................................................................................

   ..............................................................................................................

## 10.3 वर्ण चिकित्सा

आतप स्नान को समझ लेने के पश्चात् अब हम, सूर्य रश्मियों में उपस्थित वर्णों के बारे में जानेंगे और यह समझेंगे कि, ये वर्ण हमारी शारीरिक स्वस्थता बनाये रखने के लिए किस प्रकार उपयोगी हैं?

क्या आप जानते हैं कि, ये रंग किस प्रकार कार्य करते हैं ? आईये अब इसका अध्ययन करें। हम जानते हैं कि, सूर्यरश्मियों में मुख्य सात वर्ण होते हैं, जिन्हें सप्तवर्ण या इन्द्रधनुष कहते हैं जो हर समय क्रमानुसार ही दिखाई देते हैं। विभिन्न वर्णों के अनेक गुण धर्म के आधार पर, चिकित्सा में इनका प्रयोग किया जाता है।

प्रथम हम सूर्य प्रकाश के महत्व को समझेंगें।

### 10.3.1 सूर्य प्रकाश का महत्व

हम यह पहले ही पढ़ चुके हैं कि यह सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड पंचतत्वों से मिलकर बना है और इस जगत में व्याप्त प्रत्येक वस्तु, प्राणी, सब इन्हीं तत्वों से निर्मित होते हैं। ये तत्व जब शरीर में संतुलित अवस्था में रहते हैं तो आरोग्य की स्थिति बनी रहती है और जब विषमावस्था में करते हैं तब विकार उत्पन्न करते हैं। प्रत्येक तत्व की प्राप्ति का अपना एक स्थान है। आकाश, वायु, अग्नि, जल व पृथ्वी तत्व के बारे में हम पूर्व में अध्ययन कर चुके हैं कि, इनके हमारे शरीर में अलग–अलग कार्य हैं। हम जानते हैं कि अग्नि तत्व की प्राप्ति का प्राकृतिक स्रोत सूर्य का प्रकाश है ।आईये सूर्य के प्रकाश का हमारे जीवन में क्या महत्व है इसकी चर्चा करें:

टिप्पणी

उपनिषदों में सूर्य को ईश्वर का नेत्र बताकर, उसकी महत्वता का वर्णन किया गया है। क्या आपने कभी कल्पना की है कि यदि सूर्य उदय होना बंद कर दे, तो जगत का क्या होगा ? आइये इसकी उपयोगिता जानें:

सूर्य, सौरमंडल के केन्द्र में स्थित होता है। इसकी गणना एक तारे के रूप में की जाती है। यह वास्तव में सौरमंडल का सबसे बड़ा पिंड है। यह मुख्य रूप से दो गैसों से मिलकर बना होता है, जिन्हें हाइड्रोजन व हीलियम कहते हैं। सूर्य के केन्द्र में ऊर्जा का उत्पादन होता रहता है। इस ऊर्जा का अल्पांश ही पृथ्वी पर पहुँचता है व शेष भाग पुनः वापस चला जाता है।

- *जीवन के लिये आवश्यक–*

  पृथ्वी पर पौधे, इस ऊर्जा से ही, प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा, अपना भोजन बनाते हैं तथा ऑक्सीजन को उत्सर्जित करते हैं। यही ऑक्सीजन प्राणी मात्र के लिये विभिन्न क्रियाओं के संपादन हेतु उपयोग में लाई जाती है। इस प्राणवायु के बिना जीवन असंभव है।

चित्र 10.5: प्रकाश संश्लेषण और जीवन

प्रत्येक कोशिका को जीवित रहने के लिये ऑक्सीजन की जरूरत होती है। यदि सूर्य का प्रकाश पौधों को नहीं मिल पाये तो वे स्वयं के लिये भोजन का निर्माण नहीं कर सकते और जीवित नहीं रह सकते। इसके साथ ही ऑक्सीजन का उत्सर्जन भी नहीं होगा जो पौधों, जीव–जन्तुओं तथा मनुष्य सभी के लिये आवश्यक है। अतः यह समझा जा सकता है कि, **सूर्य का प्रकाश इस जीव जगत के लिए परम आवश्यक है।**

- **आरोग्य हेतु आवश्यक–**

  हम जानते हैं कि, सूर्य के प्रकाश में कई प्रकार के कीटाणुओं को मारने की क्षमता होती है। इससे रोगोत्पादक कीटाणु नष्ट होते हैं, जिससे रोग उत्पन्न नहीं होते और आरोग्यता बनी रहती है। अतः **आरोग्यता हेतु सूर्य का प्रकाश आवश्यक है।**

टिप्पणी

- **सप्तकिरणों से लाभ**

  शरीर में उपस्थित सप्त प्राकृतिक रंगों की कमी से, विभिन्न रोग उत्पन्न हो जाते हैं। यदि उचित मात्रा में सूर्य का प्रकाश मिलता है, तो व्यक्ति निरोगी रहता है। सूर्य के प्रकाश का सेवन ना होने पर अस्वस्थता होती है। सूर्य के प्रकाश में ये सातों रंग पर्याप्त मात्रा में मौजूद रहते हैं। विभिन्न तरकारियों में, सूर्य की किरणें उनके छिल्कों में मौजूद रहती हैं।

- **विटामिन डी की प्राप्ति**

  सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में ही, त्वचा में विटामिन डी का निर्माण होता है, जो हड्डियों के निर्माण हेतु महत्वपूर्ण तत्व है। विटामिन डी के अभाव में कैल्शियम का अवशोषण न होने से, अस्थियाँ दुर्बल हो जाती हैं।

- **प्राणों का संचार**

  सूर्य के प्रकाश के द्वारा शरीर में प्राणों का संचार होता है। अतः हमारे रहने का स्थान साफ, स्वच्छ, हवादार व प्रकाश युक्त होना चाहिए।

- **विषनाशक प्रभाव**

  सूर्य के प्रकाश में कई प्रकार के विष नष्ट करने की क्षमता पायी जाती है।

- **दुर्गन्धनाशक**

  किसी क्षेत्र में दुर्गन्ध होने पर यदि सूर्य का प्रकाश उस पर पड़ता है तो दुर्गन्ध समाप्त हो जाती है। इस प्रकार सूर्य का प्रकाश, वस्तुओं को सड़ने से बचाता है।

- **त्वक् रोगों को दूर करने में सहायक**

  कई प्रकार के त्वचा विकार यथा फोड़े, फुन्सी, सफेद दाग आदि सूर्य की किरणों के संपर्क में आने पर शनैः–शनैः ठीक हो जाते हैं। श्वेतकुष्ठ की चिकित्सा में, सूर्य की किरणों का विशेष महत्व है।

## 10.3.2 सप्तवर्णों की प्रकृति एवं लाभ– (VIBGYOR)

प्रिय शिक्षार्थियों, जैसा कि आप जान चुके हैं कि, सूर्य के प्रकाश से सप्त रंग की किरणें निकलती हैं। यहाँ हम इन सप्तवर्णों के बारे में जानेंगे। सूर्य प्रकाश में इन सप्तवर्णों के अपने–अपने प्रतिनिधि ग्रह हैं। सौर मंडल में नवग्रह होते हैं।

ज्योतिष विज्ञान के अनुसार, नवग्रह सूर्य के चारों ओर दिन–रात घूमते रहते हैं। सूर्य विश्वात्मा है। पौराणिक ग्रंथों में सूर्य और नवग्रहों की संज्ञा क्रमशः सूर्यभगवान व उनके घोड़ों से दी गई है। इन नवग्रहों में राहु व केतु को छोड़कर, शेष सात किसी न किसी वर्ण का प्रतिनिधित्व

टिप्पणी

करते हैं। ये सप्तवर्ण, जब एक ही स्थान पर एकत्रित होते हैं तब श्वेत रंग बनता है। इसी कारण से सप्तवर्ण होते हुए भी सूर्यरश्मियां, श्वेत रंग की दिखाई देती हैं।

चित्र 10.6: सूर्य के प्रकाश में सप्त रंग

सौरमंडल के नवग्रह व उनके रंग व प्रकृति—

| ग्रह | तत्व | प्रकृति | रंग |
|---|---|---|---|
| सूर्य | पारा | उष्ण | सप्तरंग (श्वेत) |
| चन्द्रमा | चांदी | शीत | चमकदार श्वेत |
| मंगल | तांबा | उष्ण | लाल |
| बुध | — | नपुंसक | हरा |
| बृहस्पति | स्वर्ण | चर्बीदार | पीत |
| शुक्र | हीरा (कार्बन) | शक्तिवर्धक | नीलवत |
| शनि | | लूला | आसमानी नीला |
| राहु | पृथ्वी | दूसरों को आकर्षित करना | काला |
| केतु | पृथ्वी की छाया | छाया | हल्का आसमानी |

सूर्य की रश्मियों में इन ग्रहों के वर्णों का समावेश होता है। ये रश्मियाँ सूर्य से टकराकर, पृथ्वी पर पड़ती हैं, जिससे पृथ्वी पर रहने वाले प्राणियों पर, उन ग्रहों के स्वभाव व गुण अनुसार प्रभाव पड़ता है और वे सुख–दुखः का अनुभव करते हैं। सम्पूर्ण ज्योतिषशास्त्र इसी आधार पर गणना करते हुए ग्रहों के फलों को बताते हैं।

इन्हीं किरणों में बैंगनी के पहले व लाल के बाद क्रमशः अल्ट्रावॉयलेट व इन्फ्रारेड किरणें होती हैं, जिनका चिकित्सा की दृष्टि से रोगों के उपचार में अत्यधिक उपयोग होता है। आइये इसे निम्नवत समझने का प्रयास करें–

| | **बैंगनी (V)** | **आसमानी(I)** | **नीला (B)** | **हरा (G)** | **पीला (Y)** | **नारंगी (O)** | **लाल (R)** |
|---|---|---|---|---|---|---|---|
| **प्रकृति** | **शीतल** | **शीतल** | **शीतल** | **शीतल** | **उष्ण** | **उष्ण** | **उष्ण** |
| लाभ | विद्युत किरणों की प्राप्ति, ताप कम करने में सहायक, मानसिक कमज़ोरी में, हृदय की धड़कन में लाभकारी | विद्युत शक्ति युक्त, ज्वर, कास, पेचिश, अतिसार, संग्रहणी, प्रमेह, पथरी, मूत्रविकार | केशपात, केशपक्वता, कड़े होना, सिरदर्द, कीटाणु–नाशक, फोड़े फुन्सी दूर करने में सहायक | नेत्रों के लिये हितकारी, चर्मरोग, हाथ–पांव फटना बवासीर, रक्तप्रदर, रक्तपित्त स्वप्न दोषनाशक स्वाभाविक निद्रा बढ़ाता है। | पेट, पसली, मसूढ़ों में, कृमि रोग में लाभकारी | पुराने रोगों में, उदर शुद्धि में, दमा रोग में लाभकारी, लकवा तिल्ली बढ़ना | जोड़ों के दर्द, वातविकार, गठिया,लकवा, सर्दी, सूजन, अकड़न, तंत्रिका तंत्र के रोगों में लाभकारी |
| कमी से रोग | हैजा, अतिसार, प्रलाप | कब्ज करने वाली | ज्वर, अतिसार पेट में रोग | चर्म रोग, नेत्ररोग, रक्तपित्त, उष्णता बढ़ना, फोड़े–फुन्सी दाद आदि होना। | त्वचा में झुर्रियाँ पैदा करता है। मसूढ़ों में दर्द, कब्ज दिल के रोग। | पेट के विकार , वात व्याधि होना, गठिया, पक्षाघात | निद्रा,भूख कम होना, कब्ज, नख व नेत्र विकार, त्वक शोथ |

उपरोक्त सारणी से हम ज्ञात कर सकते हैं कि सूर्य की रश्मियाँ हमारे स्वास्थ्य के लिये कितनी आवश्यक हैं। यदि हम उचित काल में नियमित रूप से सूर्य रश्मियों का सेवन करें तो हम, सप्त वर्णों से संबंधित लाभों को नैसर्गिक रूप में ही प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार यह हमारे जीवन का महत्वपूर्ण भाग है जो हमें अग्नि तत्व के गुण व लाभों को प्राप्त करने में सहायक होता है।

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 10.2

(क) सही विकल्प चुनिए—

1. अग्नितत्व पंचमहाभूत में है—

   अ) प्रथम तत्व

   ब) द्वितीय तत्व

   स) तृतीय तत्व

   द) चतुर्थ तत्व

2. अग्नितत्व की उत्पत्ति—

   अ) पृथ्वी से

   ब) जल से

   स) वायु से

   द) आकाश से

3. अग्नि तत्व प्राप्त होता है—

   अ) बंद कमरे में

   ब) नंगे पैर टहलने से

   स) सूर्य के प्रकाश से

   द) नदी स्नान से

4. सूर्य को ईश्वर का कौन सा अंग माना गया है—

   अ) नेत्र

   ब) कर्ण

   स) मुख

   द) ललाट

(ख) रिक्त स्थान भरें—

अ) तीव्र लाल किरणें ..................................................को कहते है।

ब) .......................................................... किरणें विषनाशक होती हैं।

स) सप्तवर्ण चिकित्सा से प्राप्ति होती है ............................................ तत्व की।

(ग) सुमेल कीजिए—

| | | | |
|---|---|---|---|
| अ) पृथ्वी | — | (i) | नदी में स्नान |
| ब) जल | — | (ii) | नंगे पैर टहलना |
| स) अग्नि | — | (iii) | खुले में टहलना |
| (द) वायु | — | (iv) | सूर्य किरण |

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट में हमने सीखा किः

- मानव शरीर को स्वस्थ रखने के लिए, अग्नि तत्व अति आवश्यक है। अग्नि तत्व की उत्पत्ति वायु से होती है, जो हमें सूर्य से प्राप्त होता है।
- प्राचीन मान्यताओं के अनुसार सूर्य को देवता माना जाता है। इसे ईश्वर का नेत्र कहा जाता है।
- सूर्य से अग्नि तत्व प्राप्त कर प्राणी मात्र का व्याधि हरण होता है।
- आतप स्नान सूर्य चिकित्सा है, जिससे जीव जंतु, पेड़—पौधे सूर्य से सौर ऊर्जा प्राप्त करते हैं।
- सौर मंडल में नवग्रह होते हैं, जिनके अपने रंग एवं प्रकृति होती हैं।
- इंफ्रारेड व पराबैंगनी किरणें सूर्य चिकित्सा में बहुत उपयोगी हैं।
- सूर्य के प्रकाश की उपस्थिति में ही विटामिन डी की उत्पत्ति होती है, जो हमारी हड्डियों के विकास के लिए आवश्यक है।

## यूनिटांत प्रश्न

1. सूर्य प्रकाश के महत्व पर विस्तार से चर्चा कीजिए।
2. सौरमंडल के नवग्रहों के नामों के साथ उनके रंग एवं प्रकृति पर प्रकाश डालिए।
3. अग्नि तत्व चिकित्सा से आप क्या समझते हैं? विस्तार से वर्णन कीजिए।
4. इन्फ्रारेड व पराबैंगनी (अल्ट्रा वायलट) किरणों का स्रोत क्या है और ये चिकित्सा में किस प्रकार सहायक हैं? उल्लेख कीजिए।

टिप्पणी

# यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

## 10.1

1. सूर्य के खुले प्रकाश में निर्वस्त्र स्नान करना आतप स्नान कहलाता है।
2. सूर्य किरणें
3. सूर्य से

## 10.2

(क) 1) स – तृतीय

2) स – वायु से

3) स – सूर्य के प्रकाश से

4) अ – नेत्र

(ख) अ) (Infrared Rays) इन्फ्रारेड किरणों

ब) अल्ट्रावायलेट (Ultraviolet)

स) अग्नि

(ग) अ) पृथ्वी – नंगे पैर टहलना

ब) जल – नदी में स्नान

स) अग्नि – सूर्य किरण

द) वायु – खुले में टहलना

टिप्पणी

# 11

# जल तत्व चिकित्सा

पिछली यूनिट में हमने अग्नि तत्व के बारे में पढ़ा और जाना कि अग्नि तत्व जीवन के लिए परम उपयोगी है। अग्नि तत्व से जल तत्व की उत्पत्ति होती है जो, पंचतत्वों में चौथा महत्वपूर्ण तत्व है। जल जीवन का महत्वपूर्ण अंश है। जीव—जंतु, पेड़—पौधे, जल के बिना जीवित नहीं रह सकते। जल शारीरिक क्रियाओं को संपादित करने का महत्वपूर्ण साधन है। रक्त में जलीय अंश होता है, जिसके माध्यम से आवश्यक तत्व, रक्त में घुल कर, विभिन्न अंगों तक पहुंचते हैं। इस यूनिट में हम जल तत्व चिकित्सा के बारे में अध्ययन करेंगे। जल में ठोस, द्रव्य, गैस तीनों अवस्थाओं में परिवर्तित होने का गुण होता है, इसी कारण यह चिकित्सा में महत्वपूर्ण माना जाता है, परम उपयोगी है।

## उद्देश्य

इस यूनिट का अध्ययन करने के पश्चात् आपः

- जल तत्व की अवधारणा पर प्रकाश डाल सकेंगे;
- जल तत्व की उत्पत्ति, स्थान, कार्य व स्रोतानुसार गुणधर्मों का वर्णन कर सकेंगे;
- उषापान, जलपान विधि आदि को समझा सकेंगे;
- जल चिकित्सा के सामान्य मूलभूत सिद्धांतों का उल्लेख कर सकेंगे।

टिप्पणी

## 11.1 जल की उत्पत्ति व पंचभूतों में स्थान

जल का महत्व समझने के लिये प्रथम यह जानना आवश्यक है कि प्रकृति के मूलतत्वों में जल तत्व की उत्पत्ति व स्थान क्या है ?

पंचमहाभूतों में जलतत्व चौथे स्थान पर आता है। यह जीवन का मूल आधार है। प्राणों के धारण के लिये जल अनिवार्य तत्व है। शरीर के भार का 2/3 भाग, जल ही होता है। आपको यह जानकर आश्चर्य होगा कि शरीर के सबसे कठोर अवयव अस्थि (हड्डी) में भी 10 प्रतिशत जलीय अंश पाया जाता है। शरीर की विभिन्न क्रियाओं यथा स्वाद का ज्ञान, मल निष्कासन, पोषक तत्वों को अंग प्रत्यंगों में पहुंचाना आदि सभी कार्य, जलीय अंग के संयोग से ही निष्पादित होते हैं।

जल के बिना जीवन असंभव है। प्राचीन समय में जब घर–घर जल पहुँचाने की व्यवस्था नहीं थी तब मनुष्य नदी, तालाब, समुद्र, झरने, झीलों के आस–पास अपने रहने की व्यवस्था करता था। आइये जानें कि शरीर में जल के मुख्य कार्य कौन–कौन से हैं?

शरीर में जल के मुख्य कार्य निम्न हैं–

1. रक्त तथा लसिका को तरल बनाये रखना।
2. आहार रस को रक्त में पहुंचाना।
3. रक्त से परिवहन तंत्र के माध्यम से पोषक तत्वों को अंग प्रत्यंग व कोशिकाओं में पहुंचाना।
4. मल पदार्थों के निष्कासन में सहायक।
5. शरीर के विभिन्न तंत्रों व अंगों की क्रियाओं के संपादन के लिये उपयोगी रसों, हार्मोन को स्रावित कर संबंधित अंगों में पहुंचाना।
6. शरीर के तापक्रम को बनायें रखना।

**जल की उत्पत्ति– जल की उत्पत्ति किस प्रकार हुई आइये जानें–**

प्रलयकाल व सूर्यकाल में क्रमशः सृष्टि का जल में निमग्न होना व उसी से उदित होने का प्रसंग कई पौराणिक ग्रंथों में मिलता है। सृष्टि की उत्पत्ति के समय ईश्वरीय शक्ति के द्वारा आकाश, वायु, तेज के प्रादुर्भाव के बाद अग्नि के विकार स्वरूप रस तन्मात्रा की उत्पत्ति होती है जिससे जलतत्व की उत्पत्ति होती है यह उत्पत्ति क्रम निम्नानुसार होता है ।

जल का महत्व निष्पादित करते हुये विभिन्न पौराणिक ग्रंथो में बताया गया है कि

*"अमृत वै आपः" (तै,आ, 1/16.)।*

टिप्पणी

अर्थात् अमृत को देने वाला जल ही है।

*आप इद्वा उ भेषजोरापो अभीप चातनी।।*

*आपस सर्वस्थ भेषजो स्तास्ते सुच्चन्तु क्षेत्रियात्।।*

(अथर्ववेद 3/7/5)

अर्थात् जल ही औषधि है, जल रोग को दूर करता है, जल सब रोगों का संहार करता है। अतएव यह जल तुम्हें भी कठिन रोग के शिकंजे से छुड़ा ले।

मनु स्मृति में जल का महत्व बताते हुए कहा गया है कि—

*अदियात्रणि शुष्यानी मनः सत्येन शुष्यति।*

*विद्यातपोभ्यां भूतात्मा बुद्धिज्ञानेन शुष्यति।*

(मनुः अ.पू। श्लोक 106)

जल को वरूण देवता के रूप में पूजा जाता है। जल हमारा पालन हार है अर्थात् जल से शरीर शुद्ध होता है, सत्य से मन, विद्या और तप से आत्मा तथा बुद्धि से ज्ञान शुद्ध होता है।

जल में अग्नि को ग्रहण करने की क्षमता होती है इसलिए ज्वर आदि में जल चिकित्सा की जाती है।

जिस प्रकार वायुमंडल में 70 प्रतिशत जल होता है। उसी प्रकार हमारे शरीर का 70 प्रतिशत अंश जल ही है। यदि वायुमंडल में जलतत्व खत्म हो जाये, तो जीवन खत्म हो जायेगा। जल में पदार्थों को विलय करने की शक्ति होती है।

चित्र 11.1: जल

**जल तीन रूपों में प्रकृति में मिलता है—**

1. **मृदु जल**— कुंए, वर्षा, नदी का जल, जिसमें लवण अनुपस्थित होते हैं।
2. **स्थाई कठोर जल**— बाईकार्बोनेट के अतिरिक्त अन्य लवण उपस्थित होते हैं।
3. **अस्थाई कठोर जल**— केवल कैल्शियम एवं मैग्निशियम तथा बाईकार्बोनेट होते हैं।

टिप्पणी

## 11.2 जल के स्रोतानुसार गुणधर्म

**जल** जीवन के लिए अति महत्वपूर्ण है। हम प्रतिदिन जल पान करते हैं। आइये यह जानें कि, जल पान कब और कितना करें?

हम में से अधिकतर लोगों को यह पता ही नहीं होता है कि, हमें कितना जल पीना चाहिए और जलपान का श्रेष्ठकाल क्या है? सामान्यतः हमें किस समय, कितनी मात्रा में, जलपान करना चाहिए, आइये इस विषय में विस्तार से चर्चा करें—

### जल के आभ्यांतर प्रयोग—

जल के आभ्यांतर प्रयोग से अनेक रोगों को दूर किया जाता है। शारीरिक क्रियाओं के संपादन के लिये जलतत्व की आवश्यकता, हम पहले ही समझ चुके हैं। अतः जल पान का काल व मात्रा को समझ लिया जाए तो शारीरिक क्रियाओं का संतुलन आसान हो जायेगा व शरीर से विषैले द्रव्य भी समुचित काल में निष्कासित होते रहेंगे।

यौगिक क्रियाओं जैसे— नेति, धौति, वस्ति आदि में जल द्वारा ही आभ्यांतर शुद्धिकरण होता है। जैसे ही जलपान किया जाता है, यह शरीर की समस्त कोशिकाओं में व्याप्त हो जाता है जिससे शारीरिक क्रियायें होने लगती है। जल के आभ्यांतर प्रयोग से ही मल का निष्कासन हो पाता है। नाक, कान, मुख, गले, आंत, त्वचा आदि की सफाई भी जलपान के प्रयोग द्वारा होने लगती है।

शरीर में तीन महत्वपूर्ण क्रियायें होती हैं। पाचन, समीकरण और विसर्जन इन तीनों के लिए जल तत्व आवश्यक है। जल के प्रयोग से शारीरिक व मानसिक स्वस्थता बनी रहती है। जल भोजन का एक आवश्यक तत्व है। जलपान को इसी कारण शरीर का आंतरिक स्नान कहा गया है।

यदि हम उचित रीति से देश व काल का विचार कर जलपान करते हैं तो रक्त शुद्ध होकर शारीरिक व मानसिक स्वस्थता प्राप्त होती है।

### जलपान विधि

भोजन करते समय पानी पीना या नहीं पीना इस बात पर निर्भर करता है कि भोज्य पदार्थ क्या हैं?

भोजन के बीच में अधिक पानी पीने से पाचक रस तनु (पतले) हो जाते हैं व इस प्रकार से पाचन नहीं हो पाता है और बदहजमी, कब्ज, आदि विकार उत्पन्न हो जाते हैं।

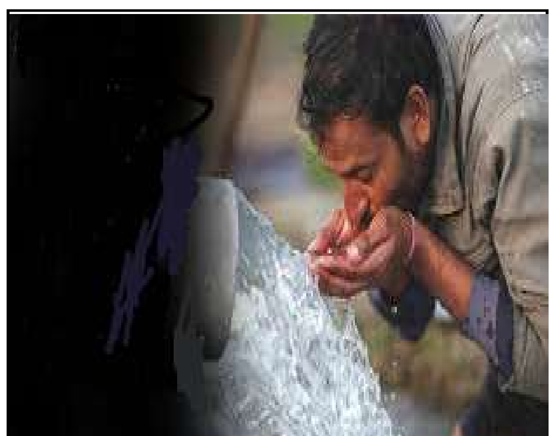

चित्र 11.2: पानी पीता व्यक्ति

1. **भोजन के बीच में जलपान–**

जब भोज्य पदार्थ अधिक रूक्ष हों तो बीच–बीच में घूँट–घूँट कर पानी पी लेना चाहिए। आयुर्वेद में भी यही निर्देश दिया गया है कि–

*अत्यम्बुपानान्न विपच्यतेनं निरम्बपानोच स एव दोषः।*

*तस्मान्नेरो बहिन्नविवर्धनाथ मुहुर्मुहुर्वारि पिवेद् भुरि।।*

2. **भोजन के आदि व अंत में जलपान–**

भोजन के शुरू करने के पहले ही पानी पीने से अग्नि निर्बल हो जाती है, जिससे भोजन का पाचन ठीक न होने से अपच हो जाती है अतः इसका निषेध करना चाहिए।

*भुक्तस्यादौ जलं पीतं कार्श्य मंदाग्नि दोष कृतं।*

- भोजन करने के आदि में जलपान करने से जठराग्नि मंद हो जाती है।

*अदावन्ते विषं वारि मध्येयामृतोपमम्।*

- भोजन करने के पूर्व में व पश्चात् पानी पीना विषतुल्य है।
- भोजन करने के आधा घंटे पूर्व एक गिलास जल व भोजन के 2 घंटे पश्चात् 2 गिलास जल पीना उत्तम माना गया है।

चित्र 11.3: उषापान

3. **उषः पान या उषापान**

- सूर्योदय से 3 घंटे पूर्व दाहिनी नासा द्वारा या मुख द्वारा जल का पान शनैः–शनैः करना चाहिए। ये जल रात्रि में या 12 घंटे पूर्व तांबे के पात्र में रखा हुआ हो तो उत्तम माना जाता है क्योंकि इससे जल में तांबे के रासायनिक गुण भी आ जाते हैं, जो स्वास्थ्यवर्धक होते हैं। इससे व्यक्ति निरोगी व दीर्घायु होता है।

**उषापान में जल की मात्रा**

- उषापान के लिये जल की मात्रा करीब 1 लीटर बताई गई है किन्तु आयुर्वेद के प्रसिद्ध ग्रंथ में 250 ग्राम बताई गई है।
- उषापान बिना दातुन किये करना चाहिए, जिससे इसका पूर्ण लाभ प्राप्त होता है। उषापान करने के बाद पुनः सोना नहीं चाहिए, सिर्फ 15–20 मिनट शवासन में लेटे रहना चाहिए।

टिप्पणी

- उषापान से उदर संबंधी, मूत्र संबंधी, मोटापा, संग्रहणी, बवासीर, सूजन, कमरदर्द, नेत्रकर्ण नासिका, मस्तिष्क जन्य विकार दूर होते हैं।
- **अजीर्णे भेषज वारि जीर्णे वारि बल प्रदम्।**

अर्थात् उषापान से जीर्ण व अजीर्ण दोनों ही स्थितियों में फायदा होता है।

**बुखार में उषापान—**

- बुखार आने पर जब ताप अधिक हो जाता है तो रोगी को प्यास अधिक लगती है। ऐसी स्थिति में थोड़ा— थोड़ा करके जल अवश्य पीना चाहिये।

**4. विभिन्न रोगों में जलपान—**

- जुकाम, मोटापा, उदरविकार (कब्ज), पीलिया, नशीले पदार्थों का सेवन, पत्थरी आदि रोगों में 10—12 गिलास पानी का सेवन करना चाहिए।

**5. उपवास काल में जलपान—**

- उपवासकाल में जलपान अत्यधिक उपयोगी सिद्ध होता है। उपवास काल में दिन में कई बार थोड़े — थोड़े जल का पान नींबू मिलाकर करना चाहिए। इससे पाचक अंगों से निकलने वाले मल का निर्हरण होकर पाचक नली साफ हो जाती है। उपवास काल में 5—6 लीटर जल एक दिन में पी लेना चाहिए।

**वर्षा जल—**

- वर्षा का जल अति उत्तम माना गया है। विभिन्न प्रकार के खनिजों से युक्त होने के कारण यह रोगों के शमनार्थ उपयोग में आता है।

**जल की मात्रा**

- सामान्यतः प्रत्येक दिन 2—4 लीटर पानी पीना चाहिए।

**आचमन करना व कवल (कुल्ला) धारण**

- मिट्टी के घड़े में ठंडा किया गया जल थोड़ी—थोड़ी देर में एक—एक चम्मच पीना चाहिये। यह आचमन क्रिया कहलाती है । प्रत्येक 3—3 सेकंड जल की 10 बूंदों को दस बार लेना चाहिये। आचमन ज्वर से पीड़ित होने पर देना लाभप्रद होता है। इसी प्रकार मुंह में पानी भरकर उसे मुखगुहा में दांयी व बांयी ओर हिलाना—डुलाना कवल कहलाता है। यह क्रिया 1—$1\frac{1}{2}$ मिनट तक करनी चाहिये। नाक, कान, नेत्र, गलरोग, मुख, दांत, जिह्वा से संबंधित रोगों में यह लाभदायी होता है।

इस प्रकार उपरोक्त विकारों में जलपान की उचित विधि व उचितमात्रा का ध्यान रखते हुये शरीर को रोगों से मुक्त रखा जा सकता है।

टिप्पणी

## 11.3 स्रोतों के अनुसार जल के गुण-धर्म

जल हमारे जीवन का महत्वपूर्ण तत्व है किन्तु क्या आप जानते हैं कि इसके प्राप्ति स्थान क्या हैं व प्राप्ति स्थान के अनुसार जल के गुणों में क्या भेद हैं ? आइये अब हम यहां पर आपको जल के स्रोतों व उसके गुणों के बारे में समझाते हैं।

स्रोतों के अनुसार जल निम्न प्रकार के हैं—

*कोपसारसताडागचौष्ट्य प्रास्रवर्णोद्भिद्म।*

*वापीनदीतोयमिति तत् पुनः स्मृतम्ष्टधा ।।*

(अ.सं.सू. 6/12)

भूमिगत जल के स्थानभेद से चरक व अष्टांग संग्रह में आठ प्रकार के जल बताये गये हैं।

1. नदी जल
2. सरोवर जल
3. तडाग (तालाब) जल
4. झरने का जल
5. कुंए का जल
6. बावड़ी का जल
7. चौष्ट्य जल
8. औदभिद् (स्रोत) जल

नदी

तालाब

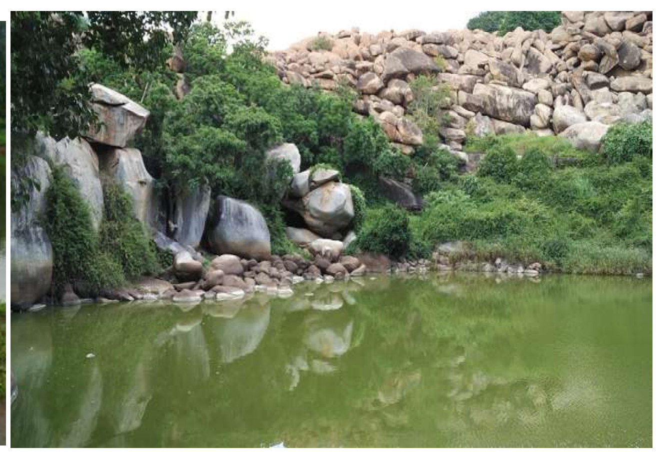

सरोवर

चित्र 11.4: जल के विभिन्न स्रोत

प्रसिद्ध आयुर्वेद ग्रंथ चरकसंहिता में देश कालादि के प्रभाव से जल के विभिन्न प्रकार बताएं गये हैं।

झरना

कुंआ

चित्र 11.6ः जल के विभिन्न स्रोत

आकाश से गिरने वाला जल **ऐन्द्र जल** कहलाता है। यह छः गुणों वाला **(शीत, शुचि, शिव, वृष्ट, निर्मल और लघु)** होता है।

**शीतं शुचि शिवं मृष्टं विमलं लघु षड्गुणम् (च.सू.27)**

इसी प्रकार अंतरिक्ष जल चार प्रकार का कहा गया हैः

1. धार 2. कार 3. तौषार 4. हेम जल

**धार**– धारा से गिरने वाला जल धार कहलाता है।

**कार**– ओले के रूप में गिरने वाला जल कार कहलाता है।

**तौषार** – रात्रिकाल में वनस्पतियों पर गिरने वाला जल, तुषार कहलाता है।

**हेम**– जमकर बर्फ बन गया जल, हेम कहलाता है।

लघुता अर्थात् हल्केपन के कारण धार जल को श्रेष्ठ माना गया है।

यह दो प्रकार का है–

1. गंगा का जल
2. समुद्र का जल

**वर्षा का जल (अंतरिक्ष जल)**–

आचार्य चरक के अनुसार –

वर्षा जल के पृथ्वी पर स्थान विशेष से स्पर्श होने से उसके गुणों में परिवर्तन हो जाता है। जैसे–

- श्वेत मिट्टी पर — कषाय रस युक्त
- काली मिट्टी पर — मधुर रस
- पाण्डुर — तिक्तरस युक्त
- नीली — कषाय, मधुररस युक्त
- ऊसर — लवण रस
- कपिल — क्षार रस

काली और श्वेत भूमि पर गिरने वाला वर्षा का जल, सूर्य तथा वायु से पककर, शुद्ध हो जाता है। इस प्रकार जिन महाभूतों की अधिकता होती है, उसी के गुणों से यह युक्त हो जाता है।

आइये इसकी जानकारी प्राप्त करें—

- पृथ्वी तत्व की अधिकता से — जल लवण व अम्ल रस वाला हो जाता है।
- जल तत्व की अधिकता से — तिक्त व कटु रस वाला हो जाता है।
- वायु तत्व की अधिकता से — कषाय रस वाला हो जाता है।
- आकाश तत्व की अधिकता से — अव्यक्त रस वाला हो जाता है।

**ऋतुओं के अनुसार—**

- वर्षा ऋतु में — मधुर , भारी कफनाशक होता है।
- शरद ऋतु में — तनु, लघु , कफनाशक होता है।
- हेमन्त ऋतु में — स्निग्ध, बलधारक, भारी कफवायु होता है।
- शिशिर ऋतु में — कफ व वायुनाशक एवं हेमन्त ऋतु से हल्का होता है।
- बसन्त ऋतु में — कषाय , मधुर व रूक्ष होता है।
- ग्रीष्म ऋतु में — यह कफकारक नहीं होता है।

> अंतरिक्ष का जल त्रिदोषनाशक होता है, इसे दिव्य जल भी कहते हैं।

**समुद्र का जल—**

समुद्र के जल को उत्तम नहीं माना गया है, क्योंकि समुद्र का जल दुर्गन्धयुक्त होता है। इससे तीनों दोष प्रकुपित होते हैं व इसमें लवण भी अधिक होते हैं। अतः यह स्वास्थ्य के लिये हानिकारक होता है।

> समुद्र के 1 लीटर जल में 35 ग्राम नमक होता है।

टिप्पणी

**समुद्र के जल के गुण–**

*सामुद्रमुदकं विस्रं लवणं सर्वदोषकृत् ।। सु.सू. 45/37*

अर्थात् समुद्र का जल दुर्गन्धयुक्त, खारा, त्रिदोषकारक होता है।

**नदी का जल–**

नदियों का जल, स्थान प्रभाव के कारण उन्हीं गुणों से युक्त हो जाता है। तेज बहाव वाली नदियों का जल, जो पत्थरों, शिलाओं से टकाराते हुये आता है, उसे पथ्य माना जाता है जैसे– हिमालय से निकलने वाली नदियां साथ ही जिन नदियों का जल शिलाओं व बालू से टकराते हुये बहता है वह अमृततुल्य माना जाता है जैसे– मलय से निकलने वाली नदियां।

नदियों के जल देश व जलवायु से प्रभावित होने के कारण उन्हीं गुणों से युक्त होता है। प्रायः नदियों का जल क्षुधा बढ़ाने वाला, तृषाशामक, हल्का, रूक्षता प्रदान करने वाला, वातकारक व शरीर को पतला करने वाला होता है। इससे पाचनशक्ति में वृद्धि होती है।

आजकल कल–कारखानों की गंदगी डालने व नदियों को ठीक प्रकार देखरेख न करने के कारण नदी का जल दूषित हो जाता है, जो पीने योग्य तो रह ही नहीं जाता अपितु जलीय जीवजन्तुओं को भी हानि पहुंचाता है, इसके अलावा कई प्रकार के रोग जैसे–हैजा, दस्त, टाईफाईड, ज्वर व कई दूषित पानी से उत्पन्न होने वाले रोग हो जाते हैं।

**नदी के जल के गुण–**

*नादेयं वातलं रूक्षं दीपनं लघुलेखनम्।*

*तदभिष्यन्दि मधुरं सान्द्रं गुरू कफावहम* ।।सु.सू. 45/31

वातकारक, रूक्ष, दीपन (भूख बढ़ाने वाला) हल्का, शरीर के वजन को कम करने वाला, अभिष्यन्दी, मीठा, गाढ़ा, भारी व कफकारक होता है।

**झरने का जल**

प्राकृतिक झील का जल सेवन योग्य माना जाता है। आजकल कृत्रिम झील बनाकर शहरों आदि में उसके जल का वितरण किया जाता है। इसमें सफाई का विशेष ध्यान रखना पड़ता है। झील के जल को वर्षा के जल के बाद श्रेष्ठ जल माना जाता है। झरने का जल, पर्वतों व मैदानों से बहकर गिरता है। यह जल सीधे जल के स्रोतों से ही होकर आता है।

**झरने के जल के गुण**

झरने का जल जठराग्नि को दीप्त करने वाला होता है अतः पाचक होता है। यह मीठा, प्यास को हरने वाला किन्तु अन्तरिक्ष जल से कम बलकारक होता है। इसमें प्राकृतिक खनिज लवण आदि उपस्थित होते हैं। इसमें नमक की मात्रा अत्यन्त अल्प होती है। झील का जल कुछ कषायरस युक्त भी होता है।

*तृष्णाघ्नं सारसं बल्यं कषायं मधुरं लघु ।। सु.सू. 45/32*

टिप्पणी

## 11.4 जलचिकित्सा के सामान्य मूलभूत सिद्धांत

जल चिकित्सा, एक प्राकृतिक चिकित्सा है, जिसमें जल महाभूत से चिकित्सा की जाती है, किन्तु चिकित्सा करते समय हमें, इसके मूलभूत सिद्धांतों को जानना आवश्यक है।

यहाँ हम जल चिकित्सा बारे में जानकारी प्राप्त करेंगे। जल चिकित्सा में रोगी के बल व शारीरिक तापमान पर विशेष ध्यान दिया जाता है। मूलसिद्धांतों को ध्यान में रखकर ही रोगी की चिकित्सा की जाती है। जल चिकित्सा का चयन रोगानुसार व शरीर में उसके स्थान विशेष के आधार पर किया जाता है।

1. दमा , बवासीर , फोड़े—फुन्सी से छुटकारा पाने हेतु नित्य प्रतिदिन स्नान करना चाहिये।
   - गर्मी के दिनों में लू में बैठकर स्नान नहीं करना चाहिए।
   - ठंड के दिनों में खुली हवा में स्नान नहीं करना चाहिए।
2. शरीर में नौ द्वार होते हैं और इन द्वारों से सतत् मल बाहर निकलता रहता है। यह मल अर्ध ठोस रूप में शरीर में जम जाता है। अतः इसकी शारीरिक शुद्धि के लिये भी रोजाना स्नान आवश्यक है।
3. भूख, शारीरिक बल, त्वचा का वर्ण, ओज (तेज), विषैले द्रव्यों का निर्हरण, थकावट दूर करना, पसीना मल आदि का निष्कासन आदि क्रियाओं के सामान्य संचालन हेतु व रक्त को विशुद्ध रखने के लिए रोजाना जल के द्वारा शरीर की शुद्धि आवश्यक है। गर्मी के दिनों में दो बार स्नान करना चाहिए।
4. जल चिकित्सा का मूल सिद्धांत यह है कि स्नान करते समय शरीर पर जब ठंडा पानी डाला जाता है तो शरीर का रक्त त्वचा की तरफ गति करता है। इससे तंत्रिका तंत्र क्रियाशील हो जाता है व त्वचा को पोषण मिलता है एवं व्यक्ति आनंद का अनुभव करता है। अनिद्रा आदि दोष दूर हो जाते हैं। अतः उपरोक्त लाभों की प्राप्ति ही जल चिकित्सा का मूलभूत सिद्धांत है। इससे बाह्य व आंतरिक शुद्धिकरण होकर मानसिक शांति मिलती है।
5. वाष्प स्नान, कटि स्नान, उष्ण एवं शीत स्नान, सर्वांगशरीर का उष्ण स्नान, मेहन स्नान, आदि जल चिकित्सा में सम्मिलित हैं।
6. जलयुक्त मिट्टी का लेप (स्नान) —

   जल में अग्नि को ग्रहण करने की शक्ति होती है। ज्वारादि रोगों में इसी सिद्धांत के आधार पर ताप को कम किया जाता है। इसी प्रकार जलयुक्त मिट्टी भी शरीर के ताप को कम करने का काम करती है।

> जल चिकित्सा के द्वारा विषैले तत्वों को शरीर से बाहर निकाला जाता है। जल के संयोग से विजातीय द्रव्य उसमें घुलकर शरीर से आसानी से निष्कासित हो जाते हैं।

टिप्पणी

तेज ज्वर की अवस्था में नाभि के नीचे जल मिश्रित मिट्टी की पट्टी रखने के उपरान्त विभिन्न तापक्रमों (जिनमें उत्तरोत्तर शीतल जल भरा होता है) में कटिस्नान कराया जाता है। स्नान के समय शरीर पर हल्का घर्षण अवश्य करना चाहिये, जिससे शरीर पर जमा हुआ मल आसानी से बाहर निकलकर बह जाता है। रोगी के रोग की स्थिति को उचित प्रकार से जान लेने के बाद ही जल चिकित्सा के प्रकारों में से उचित विधि का चयन करना चाहिये।

**एडोल्फ जस्ट के अनुसार**— जिस प्रकार पशु—पक्षी जल में पूरी तरह शरीर को डुबोकर फिर खुले स्थान में रगड़कर अपनी स्नान क्रिया को पूर्ण करते हैं, वह मानवीय सोच पर ही है।

एडोल्फ जस्ट के अनुसार जल चिकित्सा के मूलभूत सिद्धांत निम्न प्रकार हैं:

1. स्नान के लिये टब या जल संचयन पात्र इतना बड़ा होना चाहिए कि उसमें व्यक्ति अपने पैरों को इकट्ठा करके देर तक बैठ सके।

2. सर्वप्रथम पेडू पर जल का सिंचन करना चाहिए।

3. दोनों किनारों को तेजी से जल से रगड़ते हुए पेडू भाग को मलना चाहिये।

जांघों, पेडू, गुदभाग व अण्डकोष को रगड़कर साफ करने के उपरान्त शरीर को धोना चाहिए।

प्राकृतिक स्नान के दो मूलभूत सिद्धांत हैं—

1. गर्म जल का प्रयोग न करें।
2. टब बहुत गहरा न हो व 2—10 मिनट तक स्नान किया जाये।

ग्रीष्म ऋतु में दिन में दो बार व शीत ऋतु में 2—3 दिन में एक बार स्नान अवश्य करना चाहिये। खुली जगह स्नान करना अति उत्तम माना गया है। प्राकृतिक चिकित्सा के सिद्धांतानुसार सर्वप्रथम शरीर की आंतरिक गर्मी को कम करना चाहिए।

स्नान के समय शरीर को रगड़ना आवश्यक है, क्योंकि रगड़ने से तंत्रिकाओं के केन्द्र (नाड़ियों के केन्द्र) जागृत हो जाते हैं। इससे जीवनीय शक्ति और पाचक अग्नि दोनों प्रबल होती हैं।

## यूनिटगत प्रश्न 11.1

सही विकल्प का चयन कीजिए—

1. जल तत्व पंचतत्वों में—

   अ) चौथा तत्व है।

ब) तीसरा तत्व है।

स) पहला तत्व है।

द) पांचवा तत्व है।

2. जल हमारे शरीर का –

अ) 90 प्रतिशत भाग है

ब) 70 प्रतिशत भाग है

स) 50 प्रतिशत भाग है

द) 30 प्रतिशत भाग है

3. भोजन करने के तुरंत पहले जल पीने से

अ) जठराग्नि मंद होती है।

ब) जठराग्नि तीव्र हो जाती है।

स) पाचक रसों का प्रभाव बढ़ जाता है।

द) उपरोक्त में से कोई नहीं।

4. समुद्र का पानी होता है।

अ) खारा

ब) मधुर

स) अम्ल

द) लवण

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट में हमने सीखा किः

- मानव शरीर में जल की मात्रा 70 प्रतिशत पायी जाती है व स्वस्थ रहने के लिए जल तत्व अति उपयोगी है।
- जीव–जंतु और पेड़–पौधों का जीवन जल के बिना शून्य है।
- जल मृदु, स्थाई कठोर और अस्थाई कठोर, तीन प्रकार का पाया जाता है।
- स्रोतानुसार जल के गुण कर्म भिन्न भिन्न होते हैं।

टिप्पणी

- भोजन के आदि, अंत व मध्य में जल पान विधि भिन्न–भिन्न होती हैं।
- उषापान सूर्योदय से 3 घंटे पूर्व किया जाता है।
- भूमिगत जल 8 प्रकार का होता है यथा नदी, सरोवर, तालाब, झरना, कुंआ, बावड़ी, चौट्य व औदभिद्।
- आकाश से गिरने वाले जल को ऐन्द्र जल कहते हैं।
- जल चिकित्सा सामान्य मूलभूत सिद्धांतों को ध्यान में रखकर की जाती है।

## यूनिटांत प्रश्न

1. जल के विभिन्न स्रोतों के अनुसार, उसके गुण धर्म पर प्रकाश डालिए।
2. किन–किन रोगों के उपचार में जल चिकित्सा उपयोगी है, समझाइए।
3. जल तत्व चिकित्सा से आप क्या समझते हैं? विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए।

## यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

### 11.1

1. अ) चौथा तत्व है।
2. ब) 70 प्रतिशत भाग
3. अ) जठराग्नि मंद होती है
4. अ) खारा

टिप्पणी

# 12

# पृथ्वी तत्व चिकित्सा (मिट्‌टी चिकित्सा)

पिछली यूनिटों में आपने पंचमहाभूत सिद्धांत के अंतर्गत आकाश, वायु, अग्नि एवं जल तत्वों को विस्तार से पढ़ा। पृथ्वी पंचतत्वों में पांचवां और अंतिम तत्व है, जो स्वास्थ्य एवं बीमारी दोनों ही अवस्थाओं में लाभकारी है। यह अन्य चार तत्वों, आकाश, वायु, अग्नि और जल का रस है। प्राकृतिक चिकित्सा में इसे सुविधापूर्वक एवं उपचार की तरह प्रयोग में लाया जाता है। सब जड़–चेतन वस्तुओं को धारण करने के कारण इसे धरती या धरा कहते हैं। इसके गर्भ में कई रत्न और खनिज पदार्थ भरे हुए हैं। इस यूनिट में हम पृथ्वी तत्व अथवा मिट्‌टी तत्व की उत्पत्ति एवं प्राप्ति के विभिन्न साधनों के बारे में अध्ययन करेंगे, और जानेंगे कि हमारे शरीर में इसका क्या महत्व है।

## उद्देश्य

इस यूनिट का अध्ययन करने के पश्चात्‌ आप :

- पृथ्वी तत्व की अवधारणा समझा सकेंगे;
- पृथ्वी तत्व की उत्पत्ति व प्राप्ति के साधनों का वर्णन कर सकेंगे;
- प्राकृतिक चिकित्सा में मिट्‌टी की आवश्यकता व महत्व पर प्रकाश डाल सकेंगे तथा
- रोगानुसार मिट्‌टी का प्रयोग कर सकेंगे।

## 12.1 पृथ्वी तत्व

क्या आप पृथ्वी तत्व के बारे में जानते हैं, कि पृथ्वी तत्व क्या है, इसकी उत्पत्ति कैसे हुई, पृथ्वी तत्व को हम कैसे प्राप्त कर सकते हैं। नंगे पैर घास पर चलना स्वास्थ्य के लिये कैसे लाभप्रद है, और पंचतत्वों में पृथ्वी तत्व का क्या स्थान है ?

टिप्पणी

प्रिय शिक्षार्थियों ब्रह्माण्ड में व्याप्त प्रत्येक वस्तु पंचभूतों से निर्मित है। प्रत्येक वस्तु का उद्गम व विनाश पंचभूतों से ही है। विनाश होने पर वह पुनः पंचभूतों में ही मिल जाती है। प्रकृति, जो कि जड़ है, पंचभूतों सें निर्मित है। ये पांच तत्व आकाश, वायु, अग्नि, जल व पृथ्वी हैं। आकाश, वायु, अग्नि व जल के बारे में हम, पिछली यूनिटों में पढ़ चुके हैं। यहाँ हम पृथ्वी तत्व के बारे में अध्ययन करेंगे।

पृथ्वी के पर्याय,धात्री, धारणी, धरा, भूमि, वसुन्धरा, वसुमति, रत्नगर्भा, धरती आदि हैं। पंचतत्वों का विकास उपनिषदों के अनुसार मन से हुआ है। मन का प्राण से और प्राण का समाधि से हुआ है। योग में प्राणिक ऊर्जा का विशेष महत्व है समाधि की स्थिति प्राप्त करने व कुंडलिनी जागरण में प्राण ऊर्जा ही सहायक है। यह प्राण इन्हीं पांच तत्वों से मिलकर बना है।

चित्र 12.1: पृथ्वी

## पृथ्वी तत्व की उत्पत्ति

आइए पृथ्वी की उत्पत्ति के विषय में जानें–

पंचभूतों में पृथ्वी तत्व सूक्ष्म से स्थूल के विकास का विश्लेषण करने पर अंतिम व सबसे स्थूल तत्व है। जिसका क्रम आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथ्वी है।

आकाश से वायु , वायु से अग्नि, अग्नि से जल, जल से पृथ्वी की उत्पत्ति हुई है। कश्मीर के शैव सम्प्रदायों के अनुसार 36 तत्व इस सृष्टि के निर्माता हैं, जिसमें 36वां तत्व पृथ्वी है और शिव को प्रथम तत्व माना गया है। जीवन का परम लक्ष्य परमात्मा को प्राप्त करना है तथा उसी में विलीन हो जाना है और यह यात्रा पृथ्वी तत्व से ही शुरू होती है।

टिप्पणी

### पृथ्वी तत्व या धरती माता

पृथ्वी तत्व को संसार की जननी माना जाता है। ऋग्वेद में पृथ्वी को शक्ति के रूप में पूजा जाता है। वैशेषिक सूत्र में पंचतत्वों का विस्तार से विवेचन किया गया है, इसके अलावा पृथ्वी तत्व का वर्णन वृहदारण्यक उपनिषद, ब्रह्म सूत्र और मनुस्मृति में भी मिलता है।

### पृथ्वी तत्व के गुण

*सर्वाधारे सर्व बीजे सर्वशक्ति समन्विते।।*
*सर्वकामप्रदे देवि सर्वेष्टं देहि मे धरे।।*

(ब्रह्मवैवर्त पुराण)

अर्थात् हे पृथ्वी देवी। आप सबको धारण करने वाली हैं। सर्वबीजमयी हैं, सर्वशक्ति सम्पन्न हैं, सर्वकामप्रदायिनी हैं, प्रकाशमयी हैं, आप हमारे मनोरथों को सिद्ध करें।

प्रिय शिक्षार्थियों, तात्पर्य यह है कि पृथ्वी सर्वपदार्थों की जननी है। पृथ्वी तत्व के असंतुलन से प्रकृति की जैविक शक्ति में भी असंतुलन पैदा होता है।

**श्रीमद्भगवद्गीता** में भी कहा गया है–

*अन्नाद्भवन्ति भूतानि पर्जन्यादन्न संभवः।।*

अर्थात् सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं और अन्न की उत्पत्ति धरती से होती है।

**पृथ्वी तत्व के गुण** – आइए अब पृथ्वी तत्व के गुणों को जानें।

पृथ्वी तत्व के गुण इस प्रकार हैं :

- प्रकृति – गुरू
- गुण – भारी
- वर्ण – पीत
- चक्र – मूलाधार
- ग्रह – बुध
- मंत्र – लं
- तन्मात्रा – गंध
- शरीर में कार्य – त्वचा व रक्तगत
- शारीरिक स्थिति – जाँघे
- कोश – अन्नमय
- वायु – अपानवायु
- दिशा – पूर्व

टिप्पणी

जड़ व चेतन वस्तुओं की धात्री पृथ्वी है। इसके गर्भ में कई प्रकार के रत्न व खनिज पदार्थ भरे रहते हैं। नौ ग्रहों में पृथ्वी एक ग्रह है। पृथ्वी सूर्य के चारों ओर एक सेकंड में 18.5 मील की चाल से चक्कर लगाती है।

## 12.1.1 पृथ्वी तत्व प्राप्ति के साधन

पृथ्वी तत्व का मुख्य प्राप्ति स्थान, मिट्टी (मृत्तिका) है। हमारा शरीर पंचतत्वों से मिलकर बना है। मृत्यु के पश्चात् यह पुनः पंचतत्वों में (मृत्तिका) में मिल जाता है। जिस प्रकार पक्षी वायुचर, मछली आदि जलचर प्राणी हैं, उसी प्रकार मनुष्य थलचर प्राणी है। आधुनिक जीवनशैली के कारण मनुष्य उन नैसर्गिक स्वास्थ्य साधनों से दूर होते जा रहे हैं, जो जाने–अनजाने में स्वतः ही मनुष्य को स्वस्थ रखने के उपाय थे। आदिकाल से ही मनुष्य चलते–फिरते, सोते–जागते अपने दैनिक क्रियाकलापों को करते हुये पृथ्वी तत्व के संपर्क में रहा है और इस प्रकार उसे इस तत्व की प्राप्ति होती रहती थी। वर्तमान में जीवनशैली में बदलाव के कारण उसका नैसर्गिक उपचारों से संपर्क टूट गया है।

वह जमीन पर सोता था, नंगे पांव चलता था, जमीन पर रहता था किन्तु अब वह पलंग पर सोता है, पाँव में चप्पल व जूते पहनता है और बहुमंजिला इमारत में रहता है अतः मुख्य नैसर्गिक तत्व से दूर हो गया है।

> प्रकृति मनुष्य में अपना संपर्क बनाये रखना चाहती है। जीव–जन्तु व पौधे भूमि से ऊर्जा व शक्ति प्राप्त करते हैं। जमीन पर लेटने व भूमि के संपर्क में रहने पर, सभी शारीरिक क्रियायें सामान्य रूप से चलती हैं व नींद और पाचन क्रिया सुचारू रूप से चलती है। इससे नैसर्गिक शक्ति की प्राप्ति होती है व हर्ष और आनंद में वृद्धि होती है।

एडोल्फ जस्ट कहते हैं कि पाचन क्रिया को ठीक करने के लिये जमीन पर सोना अति–उत्तम है।

पृथ्वी तत्व की प्राप्ति के लिये, एडोल्फ जस्ट तीन मुख्य उपाय बताते हैं–

1. नंगे पांव जमीन पर टहलना।
2. भूमिशयन।
3. खाद्य पदार्थों के द्वारा।

## 12.1.2 नंगे पैर जमीन पर चलना

क्या आपको याद है कि आप नंगे पैर कब चले थे ?

वर्तमान समय में प्रत्येक व्यक्ति आधुनिकता की दौड़ के कारण प्रकृति से बहुत दूर चला गया है, जिससे उसका पंचतत्वों से समुचित रूप से संपर्क टूटा हुआ है। उसे इस बात का अनुभव ही नहीं है कि, नंगे पैर चलना कितना सुखद व शांतिपूर्ण होता है।

हमारे शरीर में विद्युत तरंगे होती हैं। शरीर से धनात्मक आवेश प्रवाह लगातार होता रहता है। पृथ्वी तत्व में ऋणात्मक आवेश होता है। यह ऋणात्मक आवेश, संपूर्ण शारीरिक क्रियाओं का संतुलन बनाये रखता है।

हम वर्तमान जीवनशैली के कारण नंगे पैर चलना दोषपूर्ण मानते हैं किन्तु हकीकत यह है कि हम स्वास्थ्य के लिये उपयोगी एक महत्वपूर्ण तत्व से वंचित रह जाते हैं व बहुत से विषैले तत्व जिन्हें पृथ्वी तत्व अवशोषित कर लेती है, उनका निष्कासन भी शरीर से नहीं हो पाता।

**नंगे पैर चलने से होने वाले लाभ–**

1. यह शारीरिक संतुलन में सहायक होता है, क्योंकि इसके द्वारा शरीर का संतुलन तन्त्र उत्तेजित होता है जो संतुलन को ठीक कर तंत्रिका तंत्र को दृढ़ता प्रदान करता है। पैर मजबूत और टांगे सुडौल बनती हैं।
2. इससे रक्त चाप में कमी होती है।
3. हृदय रोगों में कमी होती है।
4. जब शरीर के प्रत्येक भाग में रक्त का प्रवाह होता है तब रक्त के थक्का बनने की संभावना कम होती है।

प्रायः यह देखने में आता है कि जब पशु जमीन पर बैठता है तब उस स्थान से पत्ते, लकड़ियाँ आदि हटाकर बैठता है। ऐसा वह इसलिए करता है कि भूमि के संपर्क में आने पर उसे अधिक ऊर्जा व जीवन्तता का अनुभव होता है। यह भूमि से संपर्क स्थापित होने के कारण होता है। आदिकाल में मनुष्य के रहन–सहन, उठने–बैठने, दैनिक कार्यों से उसका पृथ्वी से संपर्क अनायास ही बना रहता था किन्तु तथाकथित वैज्ञानिक विकास व आधुनिकता के कारण उसका इन प्रकृति प्रदत्त साधनों से संपर्क टूटता चला गया। फलस्वरूप हम नैसर्गिक सुख और स्वास्थ्य खोकर रोगी होने लगे।

हम प्रकृति से इतना दूर हो गये हैं कि हम उसके नियम, उसकी आवाज़, उसकी भाषा को भी नहीं समझ पा रहे हैं, और स्वयं को अंधकार की ओर ले जा रहे हैं। आइये हम संकल्प करें कि हम प्राकृतिक तत्वों का भरपूर सेवन करेंगे और प्रकृति प्रदत्त तत्वों में निकट रहेंगे। पृथ्वी तत्व की प्राप्ति के लिये, हम नंगे पांव टहलना व सोना शुरू करेंगे। आइये इसके महत्व को पहचानें–

- भूमि पर नंगे पैर चलने से सुख व शांति का अनुभव होता है। ताजगी व जीवनशक्ति का संचार होता है।
- ओसयुक्त भूमि पर चलने से विशेष आनंद व सुख की प्राप्ति होती है।
- फादर नीप के अनुसार– नंगे पांव टहलने से सिरदर्द, गलादर्द, सर्दी, जुकाम, आदि रोग दूर हो जाते हैं।

टिप्पणी

- नंगे पैर चलने से भूख अधिक लगती है। योगाभ्यासी को जमीन पर बैठकर ही योगसाधना करनी चाहिये। श्री राम का 14 वर्षों तक बिना पादुका वन भ्रमण, लक्ष्मण का भूमि शयन योगसाधना ही है , जिसमें अपार आध्यात्मिक शक्ति की प्राप्ति होती है।
- नंगे पैर टहलने से चिन्ता, बैचेनी, अनिद्रा, दूर होते हैं।
- उच्चरक्त चाप सामान्य होता है।
- उदर संबंधी रोगों में अपार सफलता मिलती है।
- शरीर के विजातीय व विषैले द्रव्य, मल—मूत्र, पसीने के माध्यम से आसानी से शरीर से निष्कासित होते हैं।
- इस प्रकार नंगे पैर टहलना मानव शरीर को स्वस्थ रखने का एक अभूतपूर्व उपाय है।

## 12.2 मिट्टी (मृत्तिका)— चिकित्सा, आवश्यकता महत्व और लाभ

अब आप निश्चित रूप से विचार कर रहे होंगे कि जब पृथ्वी तत्व के सम्पर्क में रहने से इतने लाभ हैं तो इसका चिकित्सीय महत्व कितना होगा।

यहाँ हम मिट्टी के चिकित्सीय उपयोग के बारे में जानेंगे।

मिटट्री के द्वारा प्राकृतिक चिकित्सा में अनेक रोगों का निराकरण किया जाता है। मिट्टी हमारे जीवन में क्यों उपयोगी है, इस पर विचार करें—

**प्राकृतिक चिकित्सा में मिट्टी की उपयोगिता व महत्व**

प्राकृतिक चिकित्सा में मिट्टी की पट्टी, लेप आदि का अत्यधिक प्रयोग होता है। जिसने मृत्तिका—चिकित्सा का अनुभव किया है, वह इसकी आवश्यकता व महत्व को जान सकता है। मिट्टी शरीर से रोगजनित गर्मी व विषैले तत्वों का अवशोषण करके, शरीर से बाहर निकालती है।

मिट्टी में विषैले तत्वों को शरीर से खींचकर बाहर निकालने की अद्भुत क्षमता होती है। यह कई प्रकार के घावों को भरकर, त्वचा को पूर्ण सामान्य बनाती है। घावों पर मिट्टी का लेप करना एक नैसर्गिक उपचार है। हमारा शरीर भी पंचमहाभूतों से बना है। जिसमें पृथ्वी तत्व का अपना एक विशेष स्थान है। पशु—पक्षी आदि भी अपने शरीर में मिट्टी पोत लेते हैं जिससे उनके घाव भर जाते हैं। मिट्टी एक घरेलू उपचार है जो हर जगह हर समय सुलभ होती है। शरीर के अनेक विकार मिट्टी के उपयोग से ठीक हो जाते हैं।

मिट्टी शरीर के बाह्य व आभ्यांतर किसी भी प्रकार के रोग को समूल नष्ट करने हेतु विष व गर्मी को धीरे—धीरे चूस लेती है।

**मिट्टी से लाभ—**

1. मिट्टी लेप से कई प्रकार के रोगों से मुक्ति मिलती है।

टिप्पणी

2. यह शरीर से विषैले तत्वों को चूसकर बाहर निकालती है।
3. कई प्रकार की शारीरिक वेदनाओं में मिट्टी के लेप से अद्भुत लाभ होता है।
4. कई प्रकार के जीर्ण रोग मृत्तिका– उपचार से ठीक हो जाते हैं।
5. मिट्टी का लेप , घाव के दर्द, सूजन, और जलन को दूर करता है।
6. यदि शरीर में किसी प्रकार से छिद्र होना, कटना, जलना होता है तब मिट्टी की पुल्टिस अति लाभकारी होती है।
7. किसी जीव के काट या डस लेने पर तुरंत मृत्तिका लेप करने पर मिट्टी विष को अवशोषित कर लेती है।
8. यदि त्वचा में विवर्ण हो जाये, मोच या अस्थिभंग हो जाये तो शोथ को दूर करने का यह अचूक उपाय है।
9. मिट्टी में घोलने व चूसने की अद्भुत क्षमता होने के कारण यह दर्द के हेतुओं को चूसकर बाहर निकाल देती है।
10. उदर विकारों पर मिट्टी की पट्टी रखने पर कई प्रकार के पाचन संबंधी विकार दूर हो जाते हैं ।
11. सिरदर्द होने पर गर्दन व माथे पर मिट्टी का लेप करने से अतीव लाभ होता है।
12. मिट्टी के लेप से घरों को नवजीवन प्रदान किया जाता है। मिट्टी के घर गर्मियों में ठंडे व ठंड में गर्म रहते हैं।
13. शरीर की सफाई अर्थात् साबुन की जगह मिट्टी का उपयोग अधिक लाभकारी व नैसर्गिक होता है।
14. मिट्टी दुर्गंध को दूर करती है जिससे वातावरण व शरीर तरोताजा महसूस करता है।
15. मिट्टी के बर्तनों में पकाये हुए खाने में किसी भी प्रकार की रासायनिक विषमयता नहीं होती है व भोजन अधिक काल तक ताजा बना रहता है।
16. मिट्टी की हांडी में पकाया गया भोजन अधिक स्वादिष्ट व मधुर होने के साथ ही सुपाच्य होता है।

### मिट्टी के गुण–

यहां हम मिट्टी के गुणों की चर्चा करेंगे –

- मिट्टी एक अच्छी अवशोषक होती है ।
- मिट्टी में वेदना हरने का गुण होता है।
- शरीर में रोगकारक को घोलकर उसका अवशोषण करके बाहर निकालती है।
- वायु विकार में वायु का अवशोषण कर विकृतवात को दूर करती है।

टिप्पणी

- शरीर की उष्ण और शीत से रक्षा करती है व एक सुरक्षात्मक कवच की तरह कार्य करती है।
- मृत्तिका सेवन से एक अद्भुत प्राणिक ऊर्जा का संचार होता है। मिट्टी में चूषण शक्ति होने के कारण यह कीट दंश, सर्पदंश आदि में विष को बाहर निकालने में सहायक होती है।

### मृत्तिका उपचार का सिद्धांत

मिट्टी से उपचार का क्या सिद्धांत है? यह किस प्रकार शरीर से रोग के हेतु को बाहर निकालने में सहायक है? इसे जानने के लिये निम्न बातें समझना अति आवश्यक है।

किसी भी रोग के निवारण हेतु उसके कारणों का ज्ञात होना अति आवश्यक है। मृत्तिका में अपने बहुआयामी गुणों के कारण अति तीव्र व जीर्ण रोगों को दूर करने की शक्ति होती है। यह अपने अवशोषक व चूषक गुणों के कारण रोगों का बाहर निकालने में सक्षम होती है। इसके अलावा मृत्तिका का एक विशेष गुण दोषों को घुलनशील बनाना है। इस गुण के कारण दोष मृत्तिका के संपर्क में आते ही ठोस रूप से तरल रूप में आ जाते हैं, और इस तरह अवशोषित व चूषित होने योग्य बन जाते हैं।

इसी प्रकार मृत्तिका का तंत्रिका तंत्र पर भी विशेष प्रभाव पड़ता है यह शोथ को दूर कर वेदनाहरण का कार्य करती है।

फोड़े, फुन्सियों में प्रायः पूय (Pus) होता है, जो मृत जीवाणुओं व श्वेतरक्त कोशिकाओं के संघर्ष से उत्पन्न होता है। पूय का होना जीवाणुओं की उपस्थिति दर्शाता है। मृत्तिका में पूय को अवशोषित करने का गुण होता है। यह फोड़े–फुन्सी घाव से पूय का अवशोषण कर घाव को भरने का व त्वचा को सामान्य कर अपने पूर्व रूप में, लाने में सहायक होती है।

### विभिन्न प्रकार की मृत्तिका एवं उसके गुण

रंग, गुणों, व उपयोगों के आधार पर मृत्तिका विभिन्न प्रकार की होती है। प्रायः प्रकृति में पाई जाने वाली मिट्टी निम्न प्रकार की होती है :

1. **पीली मिट्टी या पीतवर्ण मृत्तिका**

   यह अग्नि विकार, मधुमेह, यकृत–प्लीहावृद्धि, आंत्रवृद्धि, क्षयरोग में लाभकरी है। इसे प्रायः पेडू के नीचे लगाया जाता है।

2. **श्वेतवर्ण या सफेद मुल्तानी मिट्टी–**

   यह यकृत विकार में सूजन को दूर करने में लाभदायक है। इसके अलावा मस्तिष्क विकारों में भी उपयोगी होती है।

3. **काली मिट्टी–**

   यह शरीर से विष के निवारण में सहायक है। गीदड़, साँप, बिच्छु, श्वान विष को दूर

करती है। यह त्वचागत विकारों में उपयोगी है। कोढ़, शुष्क त्वचारोग, फिरंग रोग में भी हितकारी है।

4. **लाल मिट्टी–**

यह पेट के दर्द , गठिया, और लकवे में उपयोग में लाई जाती है।

5. **बालुका युक्त मिट्टी–**

नदी व समुद्र के किनारे मिलने वाली रेतयुक्त मिट्टी प्रायः सभी रोगों में हितकारी होती है। गर्म बालू मिट्टी पक्षाघात, जोड़ों के दर्द आदि में विशेष लाभकारी है।

कई बार हमने यह सुना है कि मृत्यु उपरान्त जैसे ही शव को जमीन में रखा गया या गाड़ा गया वह पुनः जीवित हो गया। यह भी मृत्तिका द्वारा उपचार ही है, जिसमें पृथ्वी तत्व के संपर्क में आते ही, शव में प्राणिक ऊर्जा के संचार के होने की संभावना है।

**मृत्तिका संग्रहण की विधि**

हमने यह तो जान लिया है कि मिट्टी का संपर्क हमारे जीवन में अति उपयोगी है, किन्तु यह जानना भी आवश्यक है कि इस मिट्टी प्रयोग में हमें मिट्टी का संग्रह किस स्थान से करना चाहिए, मिट्टी कैसी होनी चाहिए। प्राकृतिक चिकित्सा में देशकाल, के अनुसार ही प्रकृति ने प्रत्येक क्षेत्र में जलवायु का निर्धारण उसी आधार पर किया है। अतः जिस स्थान पर जैसी मिट्टी मिलती है उसी का चयन उपचार के लिये करना चाहिए।

**मिट्टी का चयन–**

1. मिट्टी शुद्ध, स्वच्छ, बारीक व भुरभुरी होनी चाहिए।
2. उसमें किसी प्रकार के अपद्रव्य पदार्थ जैसे गोबर , अन्य पशुओं की लीद, पत्थर, कंकड़, कचरा, घास, कांटे आदि न हो ।
3. नदी के किनारे पर मिलने वाली ताजी गीली मिट्टी उत्तम मानी जाती है।
4. कच्ची ईंट को पानी में भिगोकर उसे पीसकर पेस्ट बनाकर उसका भी उपयोग किया जाता है।
5. प्रायः मिट्टी जमीन से 1 फुट नीचे की लेनी चाहिए। जिससे उसमें ऊपरी सतह पर पड़ी हुई गंदगी का समावेश न हो।
6. खेतों से भी एक फुट नीचे की मिट्टी लेनी चाहिए।
7. मिट्टी की पट्टी से उपचार करने हेतु आधी चिकनी मिट्टी व आधा समुद्री रेत का बारीक भाग उपयोग में लाना चाहिए।
8. मिट्टी का संग्रह करते समय इस बात पर विशेष ध्यान देना चाहिए कि उसमें खाद, कचरा आदि न हो।
9. चूल्हे की जली हुई राख घावों को भरने में विशेष उपयोगी होती है।
10. पीली व लाल मिट्टी के गुण अन्य मिट्टी के प्रकारों से श्रेष्ठ माने जाते हैं।

टिप्पणी

11. मिट्टी का संग्रहण 7 दिनों से ज्यादा दिन के लिए नहीं करना चाहिए। हमेशा तीव्र धूप में सुखाकर ही प्रयोग करना चाहिए।

12. मिट्टी की पट्टी देने के लिए शुद्ध, सूखी मिट्टी में ठंडा पानी डालते हुए चलाते जायें व ध्यान रखें कि, वह गुथें हुए और सदृश हो जाये फिर एक इंच मोटाई में बारीक टाट पर फैलाकर बारीक सूती कपड़े पर रखना चाहिए व दोनों तरफ से बंद कर देना चाहिए, ताकि पट्टी अपनी जगह से विस्थापित न हो।

**रोगानुसार मिट्टी का उपयोग**

1. *मिट्टी की गरम पट्टी*

   इसमें ऊनी कपड़े या फलालेन पर मिट्टी की पट्टी रखी जाती है। 10—30 मिनट तक रखने के उपरान्त मिट्टी हटाकर उस स्थान को रगड़कर शुष्क मर्दन किया जाता है। जिससे वह स्थान गर्म हो जाता है इसे गरम पट्टी कहते हैं।

2. *मिट्टी की ठंडी पट्टी*

   जब मिट्टी पट्टी रखने के बाद फलालेन से न ढककर उस स्थान को खुला रखते हैं इसे ठंडी पट्टी कहते हैं। यह बिच्छु, साँप आदि के विष के चूषण में प्रयुक्त होती है।

3. *गरम मिट्टी की पट्टी*

   इस विधि में मिट्टी को गर्म कर घावों पर लगाया जाता है। उदाहरण के लिए गर्भाशय संबंधी विकारों में।

4. *रजः स्नान*

   शुद्ध स्वच्छ महीन व छनी हुई मिट्टी के द्वारा अंग—प्रत्यंगो को रगड़कर 10—20 मिनट धूप में बैठना रजः स्नान कहलाता है। इससे त्वचा स्वस्थ बनती है व विषैले पदार्थ त्वचा के माध्यम से बाहर निकल जाते हैं।

5. *पंक स्नान*

   शुद्ध, महीन, कंकडरहित मिट्टी में जल मिलाकर पतलाकर शरीर में लेप लगाकर रखना व उसी मिट्टी से हल्के हाथों से मर्दन करना पंक स्नान कहलाता है। मिट्टी में रेडियम की उपस्थिति से यह जलीय अंश के साथ मिट्टी की रोगनाशक शक्ति को बढ़ा देता है।

6. *बालू भक्षण*

   बालू को छूत व विष की प्राकृतिक दवा माना गया है। हिन्दू धर्म ग्रंथों में बालू का मुख द्वारा सेवन (बालू फांकना) एक धार्मिक कार्य माना जाता है। पहाड़ , कुंए, आदि का पानी बालू युक्त होता है व इससे कई पाचन संबंधी विकार दूर होते हैं।

   उपरोक्त विविध विधियों से यह अनुमान लगाया जा सकता है कि मिट्टी से संपर्क बनाए रखना हमारे जीवन की स्वस्थता के लिये कितना अधिक जरूरी है।

टिप्पणी

## यूनिटगत प्रश्न 12.1

सही विकल्प चुनिए।

1. मिट्टी होती है।
   - अ) आकाश तत्व
   - ब) जल तत्व
   - स) अग्नि तत्व
   - द) पृथ्वी तत्व

2. पृथ्वी तत्व है।
   - अ) पंचमहाभूतों का पाँचवा तत्व
   - ब) पंचमहाभूतों का दूसरा तत्व
   - स) पंचमहाभूतों का चौथा तत्व
   - द) पंचमहाभूतों का प्रथम तत्व

3. सही जोड़ी बनाइये–

| | | | | |
|---|---|---|---|---|
| अ) | आकाश | – | (1) | पाँचवां तत्व |
| ब) | अग्नि | – | (2) | प्रथम तत्व |
| स) | पृथ्वी | – | (3) | द्वितीय तत्व |
| द) | वायु | – | (4) | तृतीय तत्व |

## आपने क्या सीखा

इस यूनिट के अंतर्गत हमने सीखा कि

- मिट्टी तत्व अन्य चार तत्वों (1) आकाश, (2) वायु, (3) अग्नि और (4) जल का रस है।
- पंचमहाभूतों में इसका पाँचवां व अन्तिम स्थान है।
- प्राकृतिक चिकित्सा में इसे विभिन्न रोगों के उपचार हेतु प्रयोग में लाया जाता है।
- पृथ्वी को संसार की जननी माना जाता है और पूजा की जाती है।
- पृथ्वी तत्व की प्राप्ति का मुख्य साधन मिट्टी है।
- नंगे पाँव ज़मीन पर टहलने से बहुत से शारीरिक लाभ हैं और स्वास्थ्य के लिए बेहतर है।

- मिट्टी शरीर से रोग जनित गर्मी और विषाक्त पदार्थों का अवशोषण कर बाहर निकालती है।
- प्राकृतिक चिकित्सा में मिट्टी चिकित्सा का महत्वपूर्ण स्थान है।

## यूनिटांत प्रश्न

1. मिट्टी के उपचारात्मक गुणों की विस्तार से चर्चा कीजिए।
2. पृथ्वी तत्व की उत्पत्ति किस प्रकार हुई? समझाइये।
3. पृथ्वी तत्व चिकित्सा का विस्तार से वर्णन कीजिए।

## यूनिटगत प्रश्नों के उत्तर

1. द – पृथ्वी तत्व
2. अ – पंचमहाभूतों का पांचवा तत्व
3. अ) – (2)

   ब) – (4)

   स) – (1)

   द) – (3)